आदिकाल की प्रामाणिक रचनाएँ

आदिकाल की प्रामाणिक रचनाएँ

डॉ० गणपतिचन्द्र गुप्त
एम० ए०, पी-एच० डी०, डी० लिट्०
प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
निदेशक, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय,
स्नातकोत्तर प्रादेशिक केन्द्र,
रोहतक (हरियाणा)

हिन्दी की विभिन्न प्राचीन रचनाओं के प्रामाणिक पाठ-सपादन एवं वैज्ञानिक विवेचन के द्वारा आदिकाल का स्वरूप स्पष्ट करने मे अतुलनीय योग देने वाले स्वर्गीय डॉ० माताप्रसाद जी गुप्त एम ए., डी. लिट् की पुण्य-स्मृति में ।

प्राक्कथन

हिन्दी-साहित्य के इतिहास के अध्येताओ एव शोधकर्त्ताओ के लिए आदिकाल सर्वाधिक विवादास्पद रहा है। इसके नामकरण एव सीमा-निर्धारण से लेकर इसकी प्रमुख रचनाओ एव प्रवृत्तियो तक के वारे मे मतैक्य का अभाव दृष्टि-गोचर होता है। इसका मूल कारण यह है कि अभी तक यही स्पष्ट नही हो पाया कि इस काल के अन्तर्गत किन रचनाओ को स्थान दिया जाय और किन्हे नही। विभिन्न इतिहासकारो ने इस काल के अन्तर्गत विभिन्न रचनाओ को स्थान दिया है जिनमे से अनेक अस्तित्व-शून्य, अप्रामाणिक या परवर्ती युग की हैं तो अनेक हिन्दी की न होकर अपभ्रंश की हैं। ऐसी स्थिति मे कुछ वर्षों पूर्व यह धारणा वनने लग गयी थी कि रचनाओ की दृष्टि से यह काल 'शून्य-काल' है तथा इस दृष्टि से इसे 'अस्तित्व-हीन' भी कह दिया जाय तो अनुचित न होगा। इसी स्थिति की ओर विद्वानो का ध्यान आकर्षित करने के लिए मैंने "आदिकाल का अस्तित्व कहाँ है ?" शीर्षक लेख सन् १६५४ मे 'साहित्य-संदेश' मे प्रकाशित करवाया था।

किन्तु इसी वीच अनेक शोधकर्त्ताओ ने गुजरात के जैन-भाडारो मे प्राप्त हिन्दी रचनाओ का अध्ययन प्रस्तुत किया जिससे अनेक ऐसी प्रामाणिक रचनाएँ प्रकाश मे आयी जिनके आधार पर आदिकाल का अस्तित्व तो प्रमाणित हो जाता है किन्तु साथ ही उसकी काल-सीमा, नामकरण, प्रवृत्तियो आदि के वारे मे प्रच-लित परम्परागत धारणाएँ भी निराधार एव भ्रामक सिद्ध हो जाती हैं। इस काल की उपलव्ध प्रामाणिक रचनाओ की दृष्टि से देखा जाय तो यह चारण-कवियो का युग न होकर जैन कवियो का युग सिद्ध होता है। इस काल की अधिकाश रचनाए भी वीरगाथात्मक न होकर शान्त रसात्मक है जिनमे जैन-धर्म के विभिन्न तत्त्वो का प्रतिपादन किया है। जैन-काव्य के अतिरिक्त सत-काव्य एव दरवारी-काव्य भी गौणरूप से इस काल मे मिलता है।

अत नवोपलव्ध प्रामाणिक रचनाओ के प्रकाश मे इस काल के वारे मे बिल्कुल नये सिरे से विचार करने की आवश्यकता है। मैंने 'हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास' मे इस दिशा मे किंचित् प्रयास भी किया है किन्तु हमारे विद्यार्थियो,

प्राध्यापको, आलोचको एव शोधकर्त्ताओ के मन मे अभी तक 'आदिकाल' या 'वीर-गाथाकाल' का वही पुराना बिम्ब बना हुआ है जो कि तथाकथित चारण कवियों की वीरगाथाओ का द्योतक है। यदि हमे वास्तविकता का बोध प्राप्त करना है तो इस भ्रामक बिम्ब को खडित करना होगा तथा इसी लक्ष्य से प्रस्तुत पुस्तक मे आदिकाल की प्राय सभी उपलब्ध प्रामाणिक रचनाओ को एक साथ प्रस्तुत किया गया है जिससे कि उसका यथार्थ बिम्ब उभर सके।

'पृथ्वीराज रासो' के लघुतम सस्करण को भी मैं आदिकाल की प्रामाणिक रचना मानता हूँ। इसका पाठ-शोधन एव सपादन स्वर्गीय डॉ० माताप्रसाद जी गुप्त द्वारा तथा इसका प्रकाशन साहित्य-सदन, चिरगाँव से हुआ है। यह रचना आकार-प्रकार की दृष्टि से इतनी बडी है कि उसे इसमे समेट पाना सभव नही हो सका।

इनमे से अनेक रचनाएँ विभिन्न सपादको द्वारा प्रकाशित हो चुकी है। कुछ रचनाओ के पाठ के लिए डॉ० दशरथ ओझा एव डॉ० दशरथ शर्मा द्वारा सम्पादित 'रास और रासान्वयी काव्य', डॉ० हरीश के 'आदिकाल के अज्ञात हिन्दी रास-काव्य' से सहायता ली गयी है, इसके लिए मैं इन ग्रन्थो के सपादको एवं प्रकाशको का आभारी हूँ।

—गणपतिचन्द्र गुप्त

अनुक्रमणिका

(क) भूमिका-भाग

(ख) मूल रचनाएँ

आदिकाल की प्रामाणिक रचनाएँ

१. आदिकाल की प्रामाणिक रचनाएँ

हिन्दी साहित्य के विभिन्न इतिहासकारो ने प्रारम्भिक काल या आदिकाल को विभिन्न नामो से पुकारते हुए इसके अन्तर्गत विभिन्न रचनाओ का उल्लेख किया है, जिनमे परस्पर गहरा अन्तर है। एक ही काल-खण्ड के अन्तर्गत लिखी गयी हिन्दी रचनाओ के बारे मे यह मतभेद अत्यन्त विचित्र एव आश्चर्यजनक है। जहाँ जार्ज ग्रियर्सन ने इस काल को 'चारण-काल' (७००-१३०० ई०) की सज्ञा देते हुए इसके अन्तर्गत कुल नौ रचनाओ का उल्लेख किया है, वहाँ उन्ही के उत्तराधिकारी मिश्र-वन्धुओ ने अपने 'मिश्रवन्धु विनोद' मे आरम्भिक-काल (स० ७००—१४४४ वि०) मे १६ कवियो की विभिन्न रचनाओं को स्थान दिया है। किन्तु उन्हे इमीसे सतोष नही हुआ, 'मिश्रवन्धु-विनोद' के नये सस्करण मे उन्होने सिद्धो और नाथपथियो को भी सम्मिलित करते हुए इस काल के कवियो की सख्या ७५ तक पहुँचा दी है। किन्तु आगे चलकर आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने केवल वारह रचनाओ को ही इस काल मे स्थान देने के योग्य समझा जिनमे से चार उनकी ही मान्यता के अनुसार अपभ्र श मे रचित हैं। शुक्ल-परवर्ती इतिहासकारो मे से डा० रामकुमार वर्मा ने मिश्रबन्धुओ के मार्ग का अनुसरण करते हुए इस काल मे (सधिकाल एवं चारण-काल मे) शताधिक रचनाओ को स्थान दिया है, तो आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने पुन शुक्ल जी की परम्परा के अनुसार केवल आठ-नौ कवियो की ही चर्चा इस काल मे की है, इतना ही नही, इनमे से भी अनेक को उन्होने अस्तित्वहीन, सदिग्ध एव अर्द्ध प्रामाणिक घोषित किया। वस्तुत आचार्य द्विवेदी ने अन्यत्र ईमानदारी से यह स्वीकार किया है, कि चौदहवी शती से पूर्व रचित हिन्दी का कोई भी ऐसा काव्य उपलब्ध नही है, जिसे प्रामाणिक कहा जा सके।

इस प्रकार आदिकाल की स्थिति वडी विचित्र है—यदि एक इतिहास-ग्रन्थ मे देखें तो वह शताधिक रचनाओ से भरा-पूरा दिखाई पडता है, तो दूसरे के अनुसार वह प्रामाणिक रचनाओ से सर्वथा शून्य प्रतीत होता है। ऐसी स्थिति मे आदिकाल के सीमा-निर्धारण, नामकरण, उसकी साहित्यिक प्रवृत्तियो-विशेषताओ आदि का निर्णय करना कठिन ही नही असम्भव है। जब हमें यही पता नही है कि इस काल की वास्तविक रचनाएँ कौन सी हैं, तो उसकी प्रवृत्तियो व विशेषताओ का निर्णय किस आधार पर किया जायगा ? फिर भी हमारे इतिहासकारो व इतिहास के प्राध्यापको

का उत्साह एव साहस प्रशसनीय है कि वे विना इस बात की परवाह किये कि वास्तविकता क्या है, इस काल की वीरगाथात्मकता, चारण प्रवृत्ति एव ओजपूर्ण शैली का बखान इस आत्म-विश्वास के साथ किये जा रहे है कि जिससे विद्यार्थियो के मन मे इस काल का एक ऐसा काल्पनिक चित्र अकित हो गया है, जो वास्तविकता से वहुत भिन्न है ।

पर यदि हम इतिहास के नाम पर कोरी कल्पना एव भ्रामक धारणाओ से संतुष्ट न होकर वास्तविकता का साक्षात्कार करना चाहते हैं तो हमे आदिकाल की तथोक्त शताधिक रचनाओ पर पुर्नविचार करके यह देखना होगा कि इनमे से कौनसी हिन्दी की हैं, और कौनसी हिन्दीतर हैं, तथा रचनाकाल की दृष्टि से वे इस काल की सीमाओ मे आती हैं, या नही ? साथ ही हमे उन रचनाओ को भी अलग कर देना होगा जो कि हिन्दी की होती हुई भी साहित्य की श्रेणी मे नही आती अपितु दर्शन-शास्त्र, नीति-शास्त्र या व्याकरण-ग्रथ की कोटि मे आती हैं । अस्तु, इसी लक्ष्य की पूर्ति के लिए आगे प्रमुख इतिहासकारो द्वारा उल्लिखित रचनाओ पर क्रमश: विचार किया जाता है ।

(क) जार्ज ग्रियर्सन द्वारा उल्लिखित रचनाएँ

ग्रियर्सन ने नौ कवियो—पुष्यकवि, खुमानसिह, केदार, कुमारपाल, अनन्यदास, चन्द्र, जगनिक, शार्ङ्गधर एव जोधराज का उल्लेख किया है, जिनमे से पुष्य और केदार के बारे मे तो उन्होने स्वय स्वीकार किया है, कि इनकी कोई रचना उपलब्ध नही है । इसी प्रकार शार्ङ्गधर के दो ग्रन्थो मे से शार्ङ्गधर-पद्धति को सस्कृत का काव्य-सग्रह माना गया है तथा उनका दूसरा ग्रन्थ 'हम्मीर रायसा' या 'हम्मीर चरित' भी अनुपलब्ध हैं । 'कुमारपाल चरित' के रचयिता 'कुमारपाल' भी कोई कवि न होकर इस काव्य के नायक हैं, तथा इस काव्य की रचना प्रसिद्ध जैनाचार्य हेमचन्द्र सूरि द्वारा अपभ्र श मे हुई थी—अत न तो इस काव्य का ही और न ही इसके रचयिता को हिन्दी-साहित्य मे स्थान दिया जा सकता है । 'अनन्य योग' के रचयिता अनन्यदास का जीवन-काल स० १७१०–९० विक्रमी तथा 'हम्मीर रासो' के रचयिता जोधराज का रचनाकाल स० १८७५ वि० निश्चित हो चुका है, अत ये भी आदि-काल की सीमा से बहुत दूर पडते है । इसी प्रकार 'खुमानरासो के रचयिता 'खुमान-सिह' न होकर दलपति विजय थे जिनका जीवन-काल डा० मोतीलाल मेनारिया द्वारा अठारहवी शती सिद्ध हो चुका है, अत उन्हें भी इस काल मे स्थान नही दिया जा सकता । इसके बाद केवल दो कवि—'पृथ्वीराज रासो' के रचयिता चन्द्र (चन्दवर-दायी) एव आल्हा 'खण्ड' के रचयिता "जगनिक" बचते हैं, किन्तु इनकी भी रचनाएँ मूल रूप मे प्राप्य नही है, फिर भी पृथ्वीराज रासो के लघुतम सस्करण के शोधित रूप को मूल के बहुत निकट माना जा सकता है । अत. इस प्रकार ग्रियर्सन द्वारा

उल्लिखित कवियो मे से केवल चन्दवरदायी ही एक ऐसे हैं, जिन्हे एक सीमा तक आदिकाल के हिन्दी कवि के रूप मे स्वीकार किया जा सकता है, शेष की या तो रचनाएँ अनुपलब्ध हैं या वे परवर्ती युग के हैं।

(ख) मिश्रबन्धुओं द्वारा-उल्लिखित रचनाएँ—

जैसा कि पीछे सकेत किया जा चुका है, मिश्रबन्धुओ ने 'मिश्रबन्धु-विनोद' के प्रथम संस्करण मे आरम्भिककाल (स० ७००–१४४४ वि०) के अन्तर्गत इन १६ कवियो को स्थान दिया है—

१ पुष्य या पुड (रचना अज्ञात , काल ७७० वि०)
२. अज्ञात कवि (खुमान रासो , ८६० वि०)
३ नन्द कवि (रचना अज्ञात , ११३७ वि०)
४ मसऊद (स० ११८० वि०)
५ कुतुब अली (स० ११८० वि०)
६ साईदान चारण (सम्वतसार, स० ११६१)
७ अकरम फैज (वर्तमाल, स० १२०५–५८ वि०)
८. चन्द (पृथ्वीराज रासो, स० १२२५–४६ वि०)
६ जगनिक (आल्हा)
१० केदार कवि
११ बारदर वेणा (स० १२२५)
१२ जल्हन
१३ भूपति (भागवत दशम स्कन्ध भाषा १३४४)
१४. नरपति नाल्ह (वीसलदेव रासो, सं १३५४)
१५ नल्लसिंह (विजयपाल रासो : स० १३५५)
१६. शार्ङ्गधर (हम्मीर काव्य , स० १३५७)
१७ अमीर खुसरो
१८ मुल्ला दाउद (नूरक चदा की प्रेम कहानी , स० १३८५)
१६ गोरखनाथ (४० ग्रन्थ , स० १४०७)

इनमे से पुष्य, नन्द, मसऊद, कुतुबअली, केदार, बारदरवेणा और जल्हन—ये सात कवि तो ऐसे हैं जिनकी रचनाएँ ही उपलब्ध नही हैं। शेष मे से भूपति या भुआल को डा० रामकुमार वर्मा ने १७वी-१८वी शती का कवि सिद्ध किया है। वर्त्तमाल के रचयिता अकरमफैज को मिश्रबन्धुओ ने जयपुर के महाराजा माधवसिंह का आश्रित बताया है—जयपुर सत्रहवी शती मे बसाया गया था तथा महाराजा माधवसिंह उन्नीसवी शती मे हुए थे, अत. यह कवि भी आदिकाल के स्थान पर आधुनिक काल का ही सिद्ध होता है। साईदान चारण, नल्लसिंह, और शार्ङ्गधर की रचनाओ

का भी केवल नाम लिया जाता है, उनका पाठ उपलब्ध नही है। गोरखनाथ का भी न तो जीवन-काल निश्चित है और न ही उनकी रचनाएँ मूल रूप मे उपलब्ध हैं, जो रूप मिलता है वह बहुत परवर्ती है—अत उन्हे भी आदिकाल के हिन्दी-कवि के रूप मे स्वीकार करना कठिन है। इस प्रकार चन्द, जगनिक, नरपति नाल्ह, अमीर खुसरो एव मुल्ला दाऊद—ये पाँच कवि ही ऐसे रह जाते हैं जिन्हे परवर्ती इतिहासकारो ने भी आशिक रूप मे स्वीकार किया है। इनमे से भी जगनिक का 'आल्हा-खड' एव अमीर खुमरो की कविता की भाषा बहुत परिवर्तित है तथा मुल्ला दाऊद के 'चदायन का रचनाकाल ७८१ हिजरी अर्थात् स० १४३६ वि० प्रमाणित हो चुका है, अत इन्हे भी आदिकाल मे स्थान देना उचित न होगा। अस्तु, उल्लिखित कवियो मे से चन्दवरदायी एव नरपति नाल्ह ही ऐसे हैं जिनके काव्य को अर्द्धप्रामाणिक मानते हुए भी आदिकालीन हिन्दी-साहित्य मे स्थान दिया जा सकता है।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल द्वारा उल्लिखित काव्य—आचार्य शुक्ल ने अपने इतिहास मे आदिकालीन सामग्री को दो वर्गों मे—अपभ्र श और देशभाषा (बोलचाल) की रचनाएँ—विभक्त करते हुए निम्नांकित बारह रचनाओ को साहित्य मे स्थान दिया है—

(क) अपभ्र श की साहित्यिक रचनाए—(१) विजयपाल रासो (२) हम्मीर रासो (३) कीर्तिलता और (४) कीर्ति पताका।

(ख) 'देश भाषा काव्य' की पुस्तकें—(१) खुमानरासो (२) बीसलदेव रासो (३) पृथ्वीराज रासो (४) जयचन्द्र-प्रकाश (५) जय मयक जस चन्द्रिका (६) परमाल रासो (आल्हा का मूल रूप) (७) खुसरो की पहेलियाँ और (८) विद्यापति पदावली। इनमे से अपभ्रश की रचनाओ को तो अब हिन्दी-साहित्य मे स्थान देने का प्रश्न ही नही उठता शेष मे से 'जयचन्द्र प्रकाश' और 'जय मयक जस चन्द्रिका' अनुपलब्ध हैं तथा खुमान रासो का रचना-काल अठारहवी शती सिद्ध हो चुका है। परमाल रासो एव खुसरो की पहेलियाँ भाषा की दृष्टि से सदिग्ध या परवर्ती प्रतीत होती हैं। विद्यापति का रचना-काल स्वय शुक्लजी के ही अनुसार सवत् १४६० के लगभग है तथा इस दृष्टि से वे आदिकाल के नही भक्तिकाल के कवि सिद्ध होते हैं—इस तथ्य की ओर विद्वानो का ध्यान आज से लगभग २० वर्ष पूर्व आकर्षित किया जा चुका है। इस प्रकार शुक्ल जी द्वारा उल्लिखित रचनाओ मे से पृथ्वीराज रासो को ही आदिकालीन हिन्दी काव्य के रूप मे स्वीकार किया जा सकता है, यद्यपि इसका भी रचनाकाल एव मूल पाठ विवादास्पद है।

डा० रामकुमार वर्मा द्वारा उल्लिखित रचनाएं—डा० वर्मा ने हिन्दी साहित्य के प्रारम्भिक काल को भी दो खडो—सधिकाल (स० ७५०—१२००) एव चारण-काल (स० १०००—१३७५ वि०)—मे विभक्त करते हुए सधिकाल की रचनाओ को सिद्ध-साहित्य, जैन-साहित्य, नाथ-साहित्य, मनोरजक-साहित्य और प्रेम कथा

साहित्य—इन वर्गों मे विभक्त किया है। इन वर्गों मे आने वाले कवियों की सख्या सौ से अधिक है। पर क्या यह साहित्य आदिकाल के हिन्दी-साहित्य के रूप मे स्वीकार्य कहा जा सकता है? इस प्रश्न का उत्तर पाने के लिये यहाँ प्रत्येक वर्ग पर क्रमश. विचार करना उचित होगा।

(क) सिद्ध साहित्य—ईसा की पहली शताब्दी के लगभग बौद्ध धर्म दो सप्रदायो मे विभक्त हो गया—महायान और हीनयान। महायान की ही एक शाखा आगे चलकर मत्रयान एव वज्रयान मे परिवर्तित हो गयी। वज्रयानियों ने धर्म-साधना के कठोर रूप को त्याग कर जीवन की सहज-स्वाभाविक पद्धति का अनुसरण किया इसलिए इसे 'सहजयान' भी कहते हैं। वज्रयान या सहजयान के साधक 'सिद्ध' कहलाते थे जिनकी सख्या ८४ बताई जाती है। इन्ही के साहित्यो को 'सिद्ध-साहित्य' कहा जाता है। सिद्धो मे सर्व प्रथम सरहपा हुए जिनके जीवन-काल के सम्बन्ध मे विद्वानो मे मतभेद है किन्तु राहुल साकृत्यायन ने उनका आविर्भाव स० ८१७ वि० के लगभग माना है। डा० रामकुमार वर्मा ने भी इसी मत का अनुसरण करते हुए उनका जीवन काल स० ७९५—८२६ वि० अनुमित किया है। सरहपा के अतिरिक्त शवरपा (स०-८३७), भुसुकुपा (स० ८५७), लुइपा (स० ८८७), विरूपा (स० ८८७), डोम्बिपा (स० ८९७), दारिकपा (स० ८९७), गुडरीपा (स० ८९७), कुकुरिपा (स० ८९७) कमरिपा (स ८९७)। कण्हपा (स० ८९७)। गोरखपा (स० ९०२), तिलोपा (स०-१००७), शान्तिपा (स० १००७) के काव्य की भी चर्चा डा० वर्मा ने सोदाहरण की है। इन कवियो की भाषा के जो उदाहरण प्रस्तुत किये गए हैं, वे हिन्दी के वहुत निकट पडते हैं, यथा—

> तिअड्डा चापी जोइनि दे अङ्कवाली।
> कमल कुलिश घाण्ट करहूँ विआली।
> जोइनि तंइ विनु खनहिं न जीवमि।
> तो मुह चुम्बी कमल रस पीवमि ॥

—गुडरिपा

कही-कही तो इनकी भाषा और भी सरल हो गयी है, जैसे—

> जइ मन पवन न सचरइ,
> रवि शशि नाह पवेश ;
> तहि वट चित्त विसाम करू,
> सरहे कहिअ उवेश ॥

—सरहपा

इसमे कोई सन्देह नही कि उपर्युक्त अशो की भाषा को हिन्दी कहा जा सकता है किन्तु विचारणीय प्रश्न यह है कि यदि आठवी-नवी शताब्दी में हिन्दी का

यह रूप विकसित हो गया था तो फिर हमारे भाषा वैज्ञानिक हिन्दी भाषा का उद्भव १००० ई० से क्यो मानते हैं ? वस्तुत इस प्रश्न पर हम अन्यत्र विस्तार से विचार कर चुके हैं, अत यहाँ सक्षेप मे इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि सिद्ध कवियो के मूल ग्रन्थ अभी तक अनुपलब्ध हैं, उनके नाम पर जो ग्रन्थ प्रकाशित हुए हैं वे या तो तिब्बती भाषा से अनूदित हैं अथवा अठारहवी-उन्नीसवी शती की पाडुलिपियो पर आधारित। ऐसी स्थिति मे यह कैसे कहा जा सकता है कि उनकी भाषा मूलत हिन्दी थी या अपभ्रश या कोई अन्य। इस तथ्य को स्वय महापडित राहुल साकृत्यायन ने स्पष्ट शब्दो मे स्वीकार करते हुए 'दोहाकोश' की भूमिका मे लिखा है— "..... उनके दोहाकोश एव चर्यागीति के तो एक-एक पद मे उपमाएँ भरी पडी हैं। अफसोस है सरह की इस अनमोल कृति को अभी मूल भाषा मे नही पाया गया और उसके तिब्बती अनुवाद से ही हमे सन्तोष करना पडेगा।" आगे चलकर वे लिखते हैं— "आठ सौ से कुछ ऊपर के दोहो के मूलरूप मे आये बिना हम उनकी कविता का पूरा मूल्याकन नही कर सकते।"[1] कहना न होगा कि डा० रामकुमार वर्मा भी इस तथ्य से परिचित है कि सिद्धो का साहित्य मूल रूप मे अनुपलब्ध है, इसीलिए उन्होने लिखा है—"ये रचनाएँ मगही मे हैं और हमे भोटिया मे अनुवादित ग्रन्थावली से प्राप्त हुई जो भोटिया ग्रन्थ-सग्रह तन्-जूर मे सुरक्षित हैं।"[2] वस्तुत ये ग्रन्थ भोटिया या तिब्बती भाषा मे प्राप्त हैं जिन्हे राहुल साकृत्यायन तथा अन्य विद्वानो ने अनुवादित एव सम्पादित किया है। ऐसी स्थिति मे यह कहना ठीक नही कि सिद्धो के मूल ग्रन्थ मगही या पुरानी हिन्दी मे लिखे गये थे क्योकि आठवी-नवी शती मे लोक-भाषा अपभ्रश थी न कि हिन्दी। इसीलिए प० राहुल साकृत्यायन ने इनकी भाषा को अपभ्रश मानते हुए लिखा है—".....इस प्रकार अपभ्रश की सर्वप्रथम कृति सरह के दोहो के रूपो मे ही आज मौजूद है इसलिए अपभ्रश के आदि कवि के तौर पर सरहपाद का ही नाम लिया जा सकता है।" यह आश्चर्य की बात है कि जिस कवि को महापण्डित ने अपभ्रश का आदि कवि माना था उसी को उन्ही के अनुयायियो ने हिन्दी का पहला कवि घोषित कर दिया और इस प्रकार अपभ्रश-साहित्य की पूरी परम्परा को ही लुप्त कर देने या हिन्दी मे समेट लेने का प्रयास किया। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि इस भ्रामक प्रयास के मूल मे किंचित् योगदान स्वयं साकृत्यायन जी का भी है क्योकि उन्होने अपनी पुस्तक 'हिन्दी काव्य-धारा' मे जो कि सन् १९४५ मे प्रकाशित हुई थी, अपभ्रश को हिन्दी से अभिन्न मानते हुए समूचे अपभ्रश साहित्य को हिन्दी-काव्य मे सम्मिलित कर लिया था। पर आगे चलकर उन्हें इस बात का बोध हो

---

१ 'दोहाकोश' सम्पादक—श्री राहुल साकृत्यायन, १९५७ सस्करण, पृ० स० २४

२ वही, पृ० स० ५८

गया कि अपभ्रंश हिन्दी से भिन्न है, इसीलिए उन्होंने अपनी पिछली मान्यता में संशोधन करते हुए 'दोहाकोश' (प्रकाशन १९५७ ई०) की भूमिका मे स्वीकार किया है—"अपभ्रंश केवल हिन्दी की अपनी चीज नहीं है उस पर उत्तर भारतीय या भारत की हिन्दू आर्य सभी भाषाओ का एक समान अधिकार है।"[३]

अस्तु, साकृत्यायन जी की अन्तिम धारणाएँ भी इसी मान्यता के अनुकूल हैं कि अपभ्रंश को हिन्दी से भिन्न मानने की स्थिति मे सिद्ध कवियो को अपभ्रंश-काव्य मे स्थान दिया जाना चाहिए न कि हिन्दी काव्य मे।

(ख) जैन साहित्य—इस शीर्षक के अन्तर्गत डा० रामकुमार वर्मा ने जैन कवियों द्वारा लिखित रचनाओ को स्थान दिया है जिन्हे हम दो वर्गों मे विभक्त कर सकते हैं—(१) जो साहित्यिक अपभ्रंश मे रचित हैं, और (२) जो अपभ्रंश-परवर्ती लोक भाषा या प्रारम्भिक हिन्दी मे रचित हैं। प्रथम वर्ग मे क्रमश स्वयभूदेव, देवसेन, पुष्पदन्त, धनपाल, मुनि रामसिह, अभयदेव सूरि, चन्द्रमुनि, कनकामर मुनि, नयनदि, जिनदत्त सूरि, योगचन्द्र, हेमचन्द्र, हरिभद्र सूरि, सोमप्रभ सूरि, मेरुतुग आदि कवियो की रचनाएँ आती हैं, जिनका रचनाकाल आठवी शती से लेकर चौदहवी शती तक है। दूसरे वर्ग मे शालिभद्र सूरि (भरतेश्वर बाहु वली रास), जिन पद्म सूरि (थूलिभद्द फागु), विनय चन्द्र सूरि (नेमिनाथ चउपई), धर्म सूरि (जम्बू स्वामी रासा), विजयसेन सूरि (रेवतगिरि रासा), अम्बदेव सूरि (सघपति समरा रासा) राजशेखर सूरि (नेमिनाथ फ ग) की रचनाओ को स्थान दिया जा सकता है। अनेक विद्वानो ने इन दोनो वर्गों की रचनाओ को एक ही श्रेणी की मानकर अपभ्रंश एव हिन्दी साहित्य मे स्थान दिया है जबकि अब यह स्पष्ट हो गया है कि इनमे भाषा की दृष्टि से परस्पर गहरा अन्तर है। जैसा कि सामान्यत स्वीकार किया जाता है, ग्यारहवी-बारहवी शती मे अपभ्रंश भाषा एक ओर तो साहित्यकारो द्वारा परिनिष्ठित अपभ्रंश मे परिणत हो गयी थी तो दूसरी ओर उसके लोक प्रचलित रूप से, जिसे आचार्य हेमचन्द्र ने 'ग्राम्य अपभ्रंश' कहा है, एक नयी भाषा विकसित हो गयी थी जो स्थान-भेद से हिन्दी, गुजराती, आदि के नाम से प्रसिद्ध है। दूसरे वर्ग के कवियो ने बारहवी शती के मध्य से लेकर चौदहवी शती के मध्य तक इसी लोक भाषा—हिन्दी—मे काव्य-रचना की है, अत दोनो वर्गों के कवियो के अन्तर को ध्यान मे रखते हुए उन्हे क्रमशः अपभ्रंश एव हिन्दी मे स्थान दिया जाना चाहिए।

(ग) नाथ साहित्य—नाथ सम्प्रदाय के प्रवर्तक गुरु गोरखनाथ माने जाते हैं जिनके जीवन-काल के बारे मे विद्वानों मे परस्पर गहरा मतभेद है। डा० रामकुमार वर्मा ने इन्हे लगभग सम्वत् १२७० मे वर्तमान माना है[४] जब कि आचार्य हजारी

---

३ 'दोहाकोश', पृ० स० ८
४. हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, चतुर्थ सस्करण, पृ. स. १०५

प्रसाद द्विवेदी उनका आविर्भाव विक्रम की दसवी शताब्दी मे मानते हैं।[५] डा० पीताम्बर दत्त बडथ्वाल ने 'गोरखबानी' मे इनकी रचनाओ को सगृहीत किया है। नाथ-साहित्य के अन्तर्गत डा० वर्मा ने गोरखनाथ के अतिरिक्त गाहिणीनाथ, चर्पट-नाथ, चौरगीनाथ, ज्वालेन्द्रनाथ, भर्तृनाथ और गोपीचन्द की रचनाओ को भी स्थान दिया है तथा इनका रचना-काल तेरहवी-चौदहवी शती माना है। किन्तु हमारे विचार से इन रचनाओ को हिन्दी-साहित्य मे स्थान देना उचित नही है। एक तो इनका रचना-काल ही निश्चित नही है। दूसरे, ये अपने मूल रूप मे प्राप्य नही हैं। विषय-वस्तु और भाषा—दोनो की ही दृष्टि से ये काफी परिवर्तित एव विकृत हो गयी हैं—इस तथ्य को नाथ-पन्थी साहित्य के सम्पादको ने भी स्वीकार किया है। डा० पीताम्बरदत्त बडथ्वाल ने 'गोरखबानी' की भूमिका मे गोरखनाथ की रचनाओ के बारे मे लिखा है—"इन सब प्रतियो के द्वारा अब तक गोरखनाथ के नाम से प्रचलित चालीस छोटी-मोटी रचनाओ का पता चलता है। ... हिन्दी के ग्रन्थो की हस्तलिखित प्रतियाँ बहुत प्राचीन नही मिलती। जो कुछ मिलती हैं विक्रम की सत्रहवी-अठारहवी शती के इधर की ही हैं। ... कोई भी दो प्रतियाँ आपस मे सर्वथा मेल नही खाती।"[६] वस्तुत डा० बडथ्वाल को स १७७५ विक्रमी से पूर्व की कोई प्रति उपलब्ध नही हुई। इन प्रतियो मे भी कई प्रकार से परिवर्तन हुआ है, इसे स्वीकार करते हुए डा० बडथ्वाल जी ने लिखा है—"श्रुति-परम्परा से होती आती हुई इन बानियो के सम्बन्ध मे दो तथ्यो की ओर ध्यान दिया जाता है। एक ओर तो नाथ-गुरुओ की बानी के प्रति उनके शिष्यो मे जो प्रगाढ श्रद्धा और विश्वास की भावना होती है, वह उसे नष्ट होने से बचाती है, और दूसरी ओर स्मृति के कारण उसमे कुछ परिवर्तन या छूट हो जाती है तथा साम्प्रदायिक उद्देश्य और मत-विकास या परि-वर्तन या स्पष्टीकरण की अभिलाषा गुरुओ के नाम से नई रचनाओ के गढे जाने और पुरानी रचनाओ मे परिवर्धन या परिवर्तन का कारण होती हैं।'[७] इसीलिए उनका निष्कर्ष है—"ये रचनाएँ जैसी हमे उपलब्ध हो रही हैं ठीक वैसी ही उस समय (मूल रचना-काल) की हैं, यह नही कहा जा सकता।"[८]

उपर्युक्त उद्धरणो से स्पष्ट है कि गोरखनाथ की तथाकथित रचनाओ को प्रामाणिक मानना उचित नही है। उनकी भाषा को देखते हुए वे सत्रहवी-अठारहवी शती के पहले की नही कही जा सकती, उदाहरण के लिए यहाँ कुछ अश प्रस्तुत हैं—

---

५. हिन्दी-साहित्य, प्रथम सस्करण, पृ स १०६

६ गोरखबानी, स डा. पीताम्बरदत्त बडथ्वाल, द्वितीय सस्करण (२००३ वि.), पृ. सं १४

७. वही, पृ. स १५-१६

८. वही, पृ स. २०

गोरख कहै हमारा खरतर पथ ।
जिभ्या इन्द्री दीजै बध ॥
लोग जुगति मैं रहै समाय ।
ता जोगी कू काल न खाय ।

(पृ० स० ७२)

× × ×

कौण देस स्यू आये जोगी, कहा तुम्हारा भाव ।
कौण तुम्हारी बहण भाणजी, कहाँ धरोगे पाव ॥

(पृ० स० ८१)

गोरखनाथ के अतिरिक्त अन्य नाथपन्थी कवियो की वाणी का सम्पादन आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने किया है तथा उन्हे 'नाथ-सिद्धो की बानियाँ' मे सगृहीत करके प्रकाशित करवाया है । इसमे अजयपाल, गोपीचन्द्र, चर्पटनाथ, चौरगी-नाथ, जलन्ध्री पाव, दत्तात्रेय, नागार्जुन, पृथ्वीनाथ, भरथरी, मच्छेन्द्रनाथ, आदि २५ साधको की वाणियाँ सकलित हैं । जैसा कि विद्वान् सम्पादक ने इसकी भूमिका मे स्पष्ट किया है, ये वाणियाँ मुख्यतः तीन हस्तलिखित प्रतियो पर आधारित हैं जिनका लिपि-काल क्रमश, स १७७१ वि, स. १८३६ वि एव स १८५५-५६ वि है । इस सग्रह की रचनाओ की प्रामाणिकता के बारे मे भी उन्होंने स्पष्ट रूप मे स्वीकार किया है —"... इस सग्रह की अनेक रचनाओ की प्रामाणिकता सदिग्ध है ।"[९] इनके मूल रचनाकाल के सम्बन्ध मे आचार्य द्विवेदी ने अपना अनुमान इन शब्दो मे प्रस्तुत करते हुए लिखा है—"इस प्रकार इस सग्रह मे जिन नाथ-सिद्धो की वाणियाँ सगृहीत हैं उनमे से अधिकाश चौदहवी शताब्दी (ईसवी) के पूर्ववर्ती हैं । कुछ चौदहवी शताब्दी के हैं और बहुत थोडे उसके बाद के । ... यद्यपि इन वाणियो के रूप बहुत-कुछ विकृत हो गये हैं, परन्तु भाषा का कुछ न कुछ पुराना रूप उनमे रह गया है ।"[१०]

वस्तुत डा० द्विवेदी भी इस बात का निर्णय नही कर सके कि इनमे कौनसी वाणी ईसा की चौदहवी या विक्रम की पन्द्रहवी शती के पहले की है और कौनसी बाद की । किन्तु आज इनका जो रूप मिलता है वह भाषा की दृष्टि से सत्रहवी शती से लेकर उन्नीसवी शती तक का है, अत. आदिकालीन साहित्य मे इन्हे स्थान देकर एक बहुत बडी भ्रान्ति बनाये रखना होगा । फिर भावात्मकता एव शैली की साहित्यिकता की दृष्टि से भी ये शून्य हैं—जैनियो, सन्तो एव वैष्णव कवियो की

९. नाथ-सिद्धो की बानियाँ, पृ. स. ५
१० वही, पृ. स. २५

भाँति इन्होने अपने विचारो को काव्यात्मक शैली मे प्रस्तुत नही किया, अत. केवल तुकबन्दी के कारण ही इनकी रचनाओ को 'काव्य' की सज्ञा से विभूपित करना भी उचित नही होगा। वास्तव मे इन वाणियो का महत्त्व केवल इस दृष्टि से है कि इनके माध्यम से नाथपन्थी विचारधारा एव साधन-पद्धति का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है, काव्यात्मकता एव भाषा की प्रामाणिकता की दृष्टि से नही। अतः रचना-काल, काव्यत्व एव भाषा-रूप तीनो मे से किसी भी दृष्टि से इन्हे आदिकालीन हिन्दी-साहित्य मे स्थान नही दिया जा सकता।

शृंगारी व मनोरंजक साहित्य एवं प्रेमकथा-साहित्य—इस काल के शृङ्गारी व मनोरजक साहित्य के अन्तर्गत डा० रामकुमार वर्मा ने तीन कवियो की रचनाओ का उल्लेख किया है—(१) अब्दुर्रहमान का 'सन्देश-रासक', (२) वब्बर की स्फुट रचनाएँ और (३) अमीर खुसरो की रचनाएँ। इनमे से 'सन्देश-रासक' तो भाषा की दृष्टि से अपभ्रंश की रचना है। कुछ विद्वानो ने इसकी भाषा को परिनिष्ठित अपभ्रंश से कुछ आगे बढी हुई मानते हुए इसे हिन्दी-काव्य मे स्थान देने की चेष्टा की है किन्तु भाषा-वैज्ञानिको ने इसे स्वीकार नही किया। डा० उदयनारायण तिवारी ने इसकी भाषा का विश्लेषण करते हुए प्रतिपादित किया है—'ध्वनि-विकास एव शब्द-रूपो की दृष्टि से सन्देश-रासक की भाषा साहित्यिक अपभ्रंश से बहुत आगे नही बढी है।'[11] इसी प्रकार डा० नामवरसिंह ने भी इसकी भाषा को साहित्यिक अपभ्रंश मानते हुए स्पष्ट शब्दो मे घोषणा की है कि यह समझना भ्रान्ति है कि यह ग्राम्य अपभ्रंश मे रचित है।[12] अस्तु, इसे हिन्दी-काव्य मे स्थान देना उचित नही है। वब्बर के कुछ छन्द प्राकृत-पैंगलम् मे उपलब्ध हैं किन्तु उनके व्यक्तित्व, रचना-काल एव कृतित्व के बारे मे निश्चित रूप से कुछ नही कहा जा सकता—ऐसी स्थिति मे उन्हे भी आदि-कालीन हिन्दी कवियो मे स्थान देना अनुचित होगा। अमीर खुसरो अवश्य ही इस काल के कवि हैं, किन्तु उनकी रचनाओ की भाषा इतनी परवर्ती है कि इससे उनकी प्रामाणिकता सदिग्ध हो गयी है।

प्रेमकथा-साहित्य के अन्तर्गत डा० वर्मा ने मुल्ला दाऊद द्वारा रचित 'चदावत' को स्थान दिया है। दाऊद को डा० वर्मा ने अलाउद्दीन खिलजी का समकालीन मानते हुए उनका रचना-काल सवत् १३७५ के आस-पास अनुमित किया है किन्तु परवर्ती विद्वानो ने—जिनमे डा० माताप्रसाद गुप्त का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है—अन्तर्साक्ष्य एव बाह्य प्रमाणो के आधार पर दाऊद को बादशाह फीरोजशाह का सम-कालीन सिद्ध करते हुए 'चदायन' का रचना-काल सन् १३७९ ई. (सवत् १४३६ वि)

---

११ हिन्दी भाषा का उद्गम और विकास, द्वितीय सस्करण, पृ स. १४७

१२ हिन्दी के विकास मे अपभ्रंश का योग, चतुर्थ सस्करण, पृ स २३९

निश्चित किया है। ऐसी स्थिति मे यदि हम आदिकाल की अन्तिम सीमा विक्रम की चौदहवी शती तक भी मान ले तो भी यह रचना उसके परवर्ती युग मे आती है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि उपर्युक्त वर्गों मे उल्लिखित रचनाओ को आदिकाल की प्रामाणिक हिन्दी रचनाओ के रूप मे स्वीकार नही किया जा सकता।

चारण-साहित्य —डा. रामकुमार वर्मा ने 'सधिकाल' के अनन्तर 'चारण-काल' (स १०००–१३७५ वि.) का विवेचन अलग अध्याय मे करते हुए उसके अन्तर्गत दो दर्जन से भी अधिक रचनाओ की चर्चा की है। इनमे से कवि तो वे ही हैं जिनकी चर्चा उनके पूर्ववर्ती इतिहासकार करते रहे हैं—(१) पुष्य (२) भुवाल (३) मोहनलाल द्विज (४) भट्टकेदार (५) मधुकर (६) दलपति विजय (७) शार्ङ्गधर (८) नल्लसिह। इन कवियो मे से पुष्य या पुष्प को स्वय डा वर्मा ने अस्तित्वहीन माना है। भुवाल और मोहनलाल द्विज का रचना-काल उन्होने सत्रहवी-अठारहवी शती मे माना है। दलपति विजय और शार्ङ्गधर की रचनाएँ भी उनके विचारानुसार मूल रूप मे उपलब्ध नही हैं तथा नल्लसिह की रचना अपभ्रंश मिश्रित है। भट्टकेदार और मधुकर की भी रचनाओ का केवल नाममात्र ज्ञात है, रचनाएँ प्राप्य नही है। अत इन कवियो को स्वय डा० वर्मा ने भी अनिश्चत घोषित किया है। इस काल के निश्चित कवियो मे उन्होने नरपति नाल्ह (वीसलदेव रासो), चदवरदायी (पृथ्वीराज रासो), जगनिक (आल्हाखड) तथा बारह अन्य डिगल कवियो को स्थान दिया है। इनमे से नरपति नाल्ह एव चदवरदायी के सम्बन्ध मे तो हमे कोई आपत्ति नही है किन्तु जगनिक का आल्हाखड न तो मूल रूप मे प्राप्त है और न ही उसका रचनाकाल निश्चित है। उसका प्रचलित रूप भाषा की दृष्टि से अठारहवी-उन्नीसवी शती का है, अत. उसे आदिकाल मे स्थान देना अनुचित होगा। शेष बारह डिगल कवियो की रचनाओ का रचना-काल स्वय डा० वर्मा ने ही सोलहवी शती से लेकर उन्नीसवी शती तक माना है, देखिये—

१. जैतसी रानै पावू जी रा छन्द	(सवत् १५६८ वि)
२. अचलदास खीची री वचनिका	(स. १६१५ वि.)
३ माधवानल प्रबन्ध	(सं. १५८४ वि.)
४ क्रिसन रुक्मिणी री वेलि	(स १६३७ वि)
५ सुन्दर सिणगार	(स. १६८८ वि.)
६. वचनिका राठौर रतनसिह जीरी	(स. १७१५ वि)
७. सोढी नाथी री कविता	(स. १७३० वि.)
८. ढोला मारवाडी चउपही	(स १६०७ वि.)
९. वरसलपुर गढविजय	(स १७६९ वि)
१०. महाराज गजसिह जी रौ रूपक	(स. १८०४ वि)

११. ग्रन्थराज गाडण गोपीनाथ री कहियौ (स. १८१० वि)
१२ महाराज रतनसिंह जी री कविता (स. १८६५ वि)

इन रचनाओ का रचना-काल जो कि कोष्ठक मे दिया गया है, स्वय डा० वर्मा के इतिहास के अनुसार है। यह विचित्र बात है कि वे एक ओर चारण-काल की सीमा स १३७५ वि मानते है तथा दूसरी ओर उसके अन्तर्गत स १५८४ से लेकर स १८६५ तक की रचनाओ को स्थान देते है। सम्भवत ऐसा उन्होने चारण-काव्य या डिंगल-साहित्य की पूरी परम्परा का विकास दिखाने के लिए किया हो किन्तु इतिहास की दृष्टि से इससे असगति आगयी है।

अस्तु, चारण-काल के अन्तर्गत विवेचित रचनाओ मे से वीसलदेव रासो एव पृथ्वीराज रासो के अतिरिक्त कोई भी ऐसी नही है जिसे आदिकालीन हिन्दी-साहित्य मे स्थान दिया जा सके।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी द्वारा उल्लिखित रचनाएँ—आचार्य द्विवेदी ने अपने ग्रन्थ 'हिन्दी-साहित्य, मे प्रस्तावना के अन्तर्गत अपभ्रश के जैन, सिद्ध एव नाथ-पन्थी कवियो की रचनाओ पर विहगम दृष्टि से प्रकाश डालने के अनन्तर पृथक अध्याय—'हिन्दी साहित्य का आदिकाल,—मे हिन्दी की रचनाओ का परिचय दिया है। इससे स्पष्ट है कि वे अनेक पूर्ववर्ती इतिहासकारो की भाँति जैन, सिद्ध एव नाथ-साहित्य को हिन्दी मे स्थान देना उचित नही समझते। इस काल की हिन्दी रचनाओ के अन्तर्गत उन्होने खुमाण रासो, वीसलदेव रासो, हम्मीर रासो, विजयपाल रासो और अमीर खुसरो की रचनाओ की चर्चा की है किन्तु साथ ही उन्हे परवर्ती, परिवर्तित या सदिग्ध माना है। इनके अतिरिक्त अर्द्धप्रामाणिक रचनाओ के अन्तर्गत 'पृथ्वीराज रासो, और 'परमाल रासो, (आल्हा खड) को स्थान दिया गया है। अन्त मे अब्दुर्रहमान की 'सन्देश रासक, एव विद्यापति की 'कीर्तिलता' का विस्तृत परिचय दिया गया है किन्तु जैसा कि हम पीछे लिख चुके हैं, 'सन्देश रासक' की भाषा हिन्दी की अपेक्षा अपभ्रश के अधिक निकट है तथा विद्यापति का जीवन-काल स्वय आचार्य द्विवेदी के अनुसार ही सवत् १४२५ से पन्द्रहवी शती के उत्तरार्द्ध तक है, अतः इन्हे भी हम हिन्दी-साहित्य के आदिकाल मे स्थान नही दे सकते। अस्तु, आचार्य द्विवेदी के द्वारा उल्लिखित रचनाओ मे से भी कोई भी आदिकाल की प्रामाणिक हिन्दी रचना सिद्ध नही होती।

'हिन्दी-साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास' मे उल्लिखित रचनाएँ—सन् १९६५-ई० मे प्रकाशित 'हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास' मे हमने 'आदिकाल' या 'प्रारम्भिककाल' की सीमा सन् ११८४ से १३५० ई० तक निर्धारित करते हुए निम्नाकित रचनाओ को स्थान दिया है, (क) धार्मिक रास-काव्य-परम्परा—इसके अन्तर्गत जैन कवियो द्वारा प्रारम्भिक हिन्दी मे रचित रास-काव्यो को लिया गया है,

जो ये हैं—(१) भरतेश्वर वाहुबली रास (शालिभद्र सूरी · ११८४ ई०) (२) चन्दनवाला रास (आसगु , १२०० ई०) (२) जीव दया रास (आसगु, १२०० ई०) (४) स्थूलि भद्र रास (जिन धर्म सूरि , १२०१ ई०) (५) रेवतगिरि रास (विजयसेन सूरि, १२३१ ई०) (६) आवूरास (पल्हण, १२३२ ई०) (७) नेमिनाथ रास (सुमति गुणि , १२३८ ई०) (८) कच्छुली रास (प्रज्ञातिलक , १३०६ ई०) (९) गयसुकुमाल रास (देल्हण, १४वी शती। (११) जिन पद्मसूरि पट्टाभिषेक रास (सारमूर्ति, १३३३ ई०) (११) पच पाडव चरित रास (शालिभद्र सूरि , १३५३ ई०)। ये सभी रचनाएँ रचना काल, भाषा एव काव्यात्मकता की दृष्टि से आदिकाल की प्रामाणिक हिन्दी रचनाओ के रूप मे स्वीकार की जा सकती हैं। किन्तु इनके अतिरिक्त भी कुछ रचनाएँ और हैं, जिनका मूल रूप संदिग्ध हैं—(१) वीसलदेव रास (नरपतिनाल्ह , १२७२ वि० अर्थात् १२१५ ई०) (१) पृथ्वीराज रासो (चन्दवरदायी , १३वी शती) (३) सन्त नामदेव की रचनाएँ (१३५० ई० तक)। यद्यपि इन रचनाओ का मूल रूप थोडा बदल गया है फिर भी रचना-काल की दृष्टि से हमने इन्हे आदिकाल मे ही स्थान देना उचित समझा है।

परवर्ती प्रयास—पिछले कुछ वर्षों के आदिकाल सम्बन्धी और कई नई पुस्तके प्रकाशित हुई हैं—(१) आदिकालीन हिन्दी साहित्य (डा० शम्भूनाथ पाडेय) (२) हिन्दी साहित्य का उद्भव-काल (डा० वासुदेव सिंह) (३) आदिकाल की भूमिका (श्री पुरुषोत्तम प्रसाद आसोपा)। इनके अतिरिक्त डा० नगेन्द्र द्वारा सम्पादित 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' (१९७३ ई०) भी उल्लेखनीय है जिसमे आदिकाल सम्बन्धी अध्याय डा० रामगोपाल शर्मा 'दिनेश' द्वारा लिखा गया है। इन सभी प्रयासो की एक सामान्य विशेषता यह है कि इनमे पूर्ववर्ती इतिहासकारो द्वारा आदिकाल के अन्तर्गत उल्लखित उन सभी रचनाओ को समेट लेने का प्रयास किया गया है जिनका रचना-काल सातवी शती से लेकर सत्रहवी शती तक है। डा० शम्भूनाथ पाण्डेय, डा० वासुदेव सिंह, डा० रामगोपाल शर्मा 'दिनेश' ने सिद्ध, जैन एव नाथ पथी कवियो की रचनाओ को हिन्दी-काव्य मे स्थान देकर पूर्ववर्ती इतिहासकारो की भ्रान्तियो का निराकरण करने के स्थान पर उन्हें और दृढ करने का प्रयास किया है। डा० रामगोपाल शर्मा 'दिनेश' ने प्रयत्नपूर्वक सिद्ध कवियो को हिन्दी-कवि सिद्ध करने की चेष्टा करते हुए सरहपा को हिन्दी का पहला कवि घोषित किया है जब कि वास्तविकता यह है कि सरहपा तथा अन्य सिद्ध कवियो की रचनाएँ मूल-रूप मे अनुपलब्ध हैं। इसीलिए प० राहुल साकृत्यायन ने भी भाषा की दृष्टि से सिद्ध-साहित्य को अप्रामाणिक मानते हुए उन्हे अपभ्रश काव्य मे स्थान दिया है। इसी प्रकार नाथ-पथी साहित्य के बारे मे पीछे विस्तार से स्पष्ट किया जा चुका है कि इसे हिन्दी साहित्य के आदिकाल मे स्थान देना उचित नही है। इसके अतिरिक्त अस्तित्वहीन रचनाओ ·जयमयक

जस चन्द्रिका, जयचन्द प्रकाश, मूजरास आदि), हिन्दीतर रचनाओ (सन्देश-रासक) और परवर्ती रचनाओ (नेमिनाथ फागु स० १४६०) विद्यापति की पदावली (सवत् १४६०) ढोला मारूरा दूहा, (रचनाकाल पन्द्रहवी शती) को भी आदिकाल मे स्थान देना पूर्ववर्ती इतिहासकारो की त्रुटियो की पुनरावृत्ति मात्र है। यह कितना असगत है कि एक ओर हमारे विद्वान विद्यापति का रचना-काल पन्द्रहवी शती मानते हैं और दूसरी ओर उन्हे उस आदिकाल मे भी स्थान देते हैं जिसकी अन्तिम सीमा चौदहवी शती है। इसका परिणाम यह हुआ कि आदिकाल की दृष्टि से हम घूम-फिर कर पुन वही पहुँच गये है जहाँ से मिश्रबन्धु लगभग ६० वर्ष पूर्व चले थे।

निष्कर्ष—उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि यद्यपि जार्ज ग्रियर्सन से लेकर डा० नगेन्द्र तक विभिन्न इतिहासकारो ने आदिकाल के अन्तर्गत शताधिक रचनाओ का उल्लेख किया है जिन्हे हम दो वर्गों—अप्रामाणिक एव प्रामाणिक मे विभक्त करते हुए क्रमश इस प्रकार प्रस्तुत कर सकते है—

(क) **अप्रामाणिक रचनाएँ**—इस वर्ग की रचनाओ को भी निम्नाकित पाँच उप-वर्गों मे विभक्त किया जा सकता है—

१ **अस्तित्वहीन रचनायें**—इस वर्ग मे उन रचनाओ को स्थान दिया जा सकता है जो उपलब्ध नही हैं किन्तु उनके नाम का या उनके रचयिताओ के नाम का उल्लेख विभिन्न इतिहासकारो ने किया है, जैसे पुष्य, केदार, शार्ङ्गधर कुमारपाल, नन्द, मसऊद, कुतुबअली आदि कवियो की अज्ञात रचनाए।

२ **अपभ्रंश की प्रामाणिक रचनाएं**—इस वर्ग मे मुख्यत जैन कवियो—स्वयभू देवसेन, पुष्पदन्त, धनपाल आदि के चरित-काव्य तथा सन्देस-रासक आदि रचनायें आती हैं जिनकी भाषा अपभ्रश है।

३ **परिवर्तित या प्रक्षिप्त रचनाए**—इस वर्ग मे सिद्धो की और नाथ-पथियो की उन रचनाओ को स्थान दिया जा सकता है जो अब परिवर्तित, अनूदित या प्रक्षिप्त रूप मे मिलती हैं।

४ **परवर्ती युग की रचनाए**—इस वर्ग मे उन रचनाओ को स्थान दिया जा सकता है जो रचना-काल की दृष्टि से आदिकाल-परवर्ती हैं, जैसे— खुमानरासो, ढोला मारूरा दोहा, विद्यापति की रचनायें, आल्हा खण्ड आदि।

५ **साहित्येतर रचनाएं**—इस वर्ग मे व्याकरण, दर्शन, नीति-उपदेशादि से सम्बन्धित उन रचनाओ को स्थान दिया जा सकता है जो भाषा एव रचना-काल की दृष्टि से आदिकालीन हिन्दी रचना के रूप मे मान्य होती हुई भी काव्यात्मकता से शून्य हैं, जैसे–'उक्ति-व्यक्ति प्रकरण' उपदेश रसायन-रास आदि।

(ख) **प्रामाणिक रचनाएं**—जो रचनाए भाषा, रचना-काल एव साहित्यिकता की दृष्टि से आदिकालीन हिन्दी-साहित्य मे स्थान पाने के योग्य सिद्ध होती हैं उन्हे

भी मुख्यत तीन वर्गों मे विभक्त किया जा सकता है—(१) जैन काव्य (२) सन्त-काव्य और (३) दरबारी काव्य। यहाँ तीनो वर्गों की नामावली उनके रचयिता एव रचना-काल के निर्देश सहित क्रमश प्रस्तुत की जाती है—

१ जैन-काव्य

(अ) रास सज्ञक-काव्य

रचना	रचयिता	रचनाकाल
(१) भरतेश्वर बाहुबली रास	शालिभद्र सुरि	११८४ ई
(२) बुद्धिराम	,,	१२०० ई
(३) चन्दन बाला रास	आसगु	,,
(४) जीवदया रास	,,	,,
(५) स्थूलिभद्र रास	जिन धर्म सूरि	१२०६ ई
(६) रेवन्त गिरिरास	विजयसेन सूरि	१२३१ ई.
(७) आबूरास	पल्हण	१२३२ ई
(८) नेमिनाथ रास	सुमति गुणि	१२३८ ई.
(९) कछूली रास	प्रज्ञातिलक	१३०६ ई
(१०) गयसुकुमाल रास	देल्हण	१४वी शती
(११) जिनपद्मसूरि पट्टाभिषेक रास	सारमूर्ति	१३३३ ई
(१२) पच पाडव चरित रास	शालिभद्र सूरि (द्वितीय)	१३५३ ई §
(१३) गौतम स्वामी रास	उदयवन्त	१३५५ ई §

(रासेतर काव्य)

रचना	रचयिता	रचनाकाल
(१) जिनचन्द सूरि फागु	?	१२८५ ई लगभग
(२) सिरिथुलि भद्द फागु	जिन पद्मसूरि	१३४० ई ,,
(३) नेमिनाथ फागु	राजशेखर सूरि	१३४८ ई ,,
(४) वसन्त विलास फागु	अज्ञात	१३५० ई ,,
(५) नेमिनाथ चउपई	विनयचन्द्र सूरि	१३५० ई ,,

२ सन्त काव्य

रचना	रचनाकाल
(१) चक्रधर के हिन्दी-पद	(११९४-१२७४ ई)
(२) ज्ञानेश्वर के हिन्दी-पद	*(१२७५-१२९६ ई)
(३) नेमिदेव के हिन्दी-पद	*(१२७०-१३५० ई)

---

§ ये रचनाएँ रचना-काल की दृष्टि से आदिकाल की अन्तिम सीमा के बाद पडती है।

* यहाँ कोष्ठक मे कवि का जीवन-काल दिया गया है।

३. दरबारी काव्य

(१) पृथ्वीराज रासो	चदवरदायी	१२०० ई. लगभग
(२) वीसलदेव रासो	नरपति नाल्ह	१२१५ ई

उपर्युक्त रचनाओ मे से जैन-रास-काव्यो की प्रामाणिकता एव उनके रचना-काल के सम्बन्ध मे तो विद्वानो मे मतैक्य है जबकि शेष वर्गो की रचनाओ के रचना-काल के सम्बन्ध मे कही-कही मतभेद दृष्टिगोचर होता है तथा यह मत-भेद अन्तिम वर्ग की रचनाओ—पृथ्वीराज रासो एव वीसलदेव रासो—के सम्बन्ध मे सर्वाधिक है फिर भी हमने इस सूची मे उन रचनाओ को ही सम्मिलित किया है जिनके सम्बन्ध मे इस बात के ठोस प्रमाण मिलते हैं कि वे ईसा की चौदहवी शती के मध्य के पूर्व रचित हैं।

२. धार्मिक (जैन) रास काव्य

हिन्दी मे रासो-परम्परा का प्रवर्तन जैन साधु श्री शालिभद्र सूरि द्वारा रचित 'भरतेश्वर वाहुवली रास' से होता है। यद्यपि इसमे किंचित् पूर्व की एक अन्य रचना 'भरतेश्वर वाहुबलिघोर रास' (वज्रसेन सूरि द्वारा रचित) भी उपलब्ध है किन्तु एक तो उसका रचना-काल सदिग्ध है, दूसरे वह केवल तीन पृष्ठो की अत्यन्त लघु कृति है जिसे विद्वानो ने विशेष महत्त्व नही दिया है, अत अब तक इस क्षेत्र से सम्बन्धित विभिन्न शोधकर्त्ता 'भरतेश्वर वाहुबलि रास' को ही प्राथमिकता देते रहे हैं। मुनि जिन विजय के विचारानुसार यही ग्रन्थ हिन्दी जैन-रास-परम्परा का आदि काव्य है तो डा० दशरथ ओझा एव डा० हरीश ने भी इसे देशी भाषा या हिन्दी के प्रथम रासक काव्य के रूप मे स्वीकार किया है। ऐसी स्थिति मे इसी ग्रन्थ को हिन्दी का आदि काव्य होने का गौरव दिया जाना चाहिए, तथा इसी से न केवल रासो-परम्परा का अपितु हिन्दी-साहित्य का भी प्रवर्तन समझा जाना चाहिए।

भरतेश्वर-बाहुबली-रास

इसके रचयिता जैन कवि शालिभद्र सूरी थे जिन्होने इसके रचना-काल का निर्देश करते हुए इस ग्रन्थ के अन्त मे लिखा है—

जो पढइ ए वसह वदीत सो नरो नितु नव निहि लहइ ए।
सवत ए बार एकतालि फागुण पचमिइं एउ कीउ ए॥

उपर्युक्त पक्तियो मे उल्लिखित 'बार' (बारह) एकतालि (इकतालीस) के आधार पर इसका रचना काल सवत् १२४१ विक्रमी स्वीकार किया जाता है। अन्य दृष्टियो से भी यह रचनाकाल सगत प्रतीत होता है। अत इसके सम्बन्ध मे विद्वानो मे किसी भी प्रकार का मतभेद या विवाद नही है।

कथावस्तु—'भरतेश्वर वाहुवली रास' की कथा-वस्तु जैन पुराणो पर आधारित है। प्राकृत एव अपभ्रश के अनेक जैन कवियो ने 'भरतेश्वर बाहुवली रास' की कथा अपने-अपने काव्यो मे वर्णित की है। प्रस्तुत काव्य की कथा-वस्तु सक्षेप मे इस प्रकार है—अयोध्या के प्रतापी नरेश ऋषभदेव ने अपनी वृद्धावस्था मे सन्यास लेकर अपना राज्य अपने दो पुत्रो एव बाहुबली भरत मे विभक्त कर दिया। भरत को अयोध्या का तथा बाहुबली को तक्षशिला का राज्य प्राप्त हुआ। भरत बाहुबली की अपेक्षा अधिक महत्त्वाकाक्षी थे। एक बार उनकी आयुधशाला मे दिव्य चक्र रत्न

उत्पन्न हुआ जिसके बल पर उन्होने दिग्विजय प्राप्त की। जब भरत धरती के सभी राजाओ पर विजय प्राप्त करके पुन: घर लौटे तो उनका चक्ररत्न अयोध्या के बाहर ही रुक गया। उनके मन्त्रियो ने बताया कि इसका कारण यह है कि अभी तक उनके ही भाई बाहुबली ने उनकी आधीनता स्वीकार नही की। अत बाहुबली को दूत के द्वारा यह सन्देश भेजा गया कि वह भरतेश्वर की अधीनता स्वीकार कर ले अन्यथा उस पर आक्रमण कर दिया जायगा। किन्तु बाहुबली ने इसका कडा उत्तर दिया जिसके परिणामस्वरूप भरतेश्वर ने उन पर आक्रमण कर दिया। दोनो के बीच घमासान युद्ध छिड गया।

दीर्घ-काल तक दोनो के बीच भयकर युद्ध चलता रहा जिससे उभय पक्षो की अपार क्षति हुई। इसे देखकर इन्द्र ने दोनो भाइयो को प्रेरणा दी कि वे द्वन्द्व युद्ध के द्वारा हार-जीत का निर्णय कर लेवे। किन्तु बाहुबली द्वन्द्व युद्ध मे भी पराजित नही हुए इस पर भरतेश्वर ने चक्ररत्न से प्रार्थना की कि वह बाहुबली को नष्ट कर दे। चक्ररत्न का नियम था कि वह परिवार के लोगो पर वार नही करता था, अत भरतेश्वर की प्रार्थना सफल नही हुई। उनकी इस क्षुब्ध एव दयनीय स्थिति को देखकर बाहुबली के मन मे ग्लानि एव निर्वेद का उद्रेक हो गया। उन्होने घोषणा की कि भरतेश्वर की जीत हो गई है और वे स्वय सन्यास ले लेगे। इस घोषणा को सुनकर भरतेश्वर का मन भी पसीज गया। उनके मन का सोया हुआ भ्रातृभाव पुन जाग गया। उन्होने बाहुबली से अपने कुकृत्य के लिए क्षमायाचना करते हुए उनसे अनुरोध किया की वे वैराग्य धारण न करे किन्तु बाहुबली इससे विचलित न हुए। उन्होने अनेक वर्षो तक तपस्या करके कैवल्य ज्ञान प्राप्त कर लिया तथा दूसरी ओर भरतेश्वर ने चक्रवर्ती पद प्राप्त कर लिया।

काव्य-सौन्दर्य—भरतेश्वर बाहुबली रास को कुछ विद्वानो ने वीररस प्रधान काव्य माना है किन्तु हमारे विचार मे यह ठीक नही। यद्यपि काव्य का आरम्भ वीररसात्मक वातावरण मे होता है, तथा उसमे युद्धो का वर्णन भी अत्यन्त सजीव रूप मे किया गया है किन्तु इसकी परिणति शान्तरस मे होती है। वस्तुत कवि का लक्ष्य युद्धो से होने वाली हिंसा की निरर्थकता सिद्ध करते हुए अन्त मे वैराग्य एव कैवल्य ज्ञान के महत्त्व को प्रतिपादित करना था इसलिये वीररस इसमे शान्तरस की पृष्ठभूमि निर्मित करने का ही कार्य करता है। काव्य की परिणति अन्तत निर्वेद स्थायी भाव एव शान्त रस मे होती है। इस स्थिति को ध्यान मे रखते हुए इस काव्य का अगीरस शान्त रस को ही मानना उचित होगा।

काव्य का आरम्भ भरतेश्वर से होता है तथा वही काव्य का केन्द्रीय पात्र है किन्तु फिर भी हम उसे काव्य का नायक नही मान सकते। चारित्रिक दृष्टि से भरतेश्वर की अपेक्षा बाहुबली अधिक प्रभावशाली है तथा पाठक की भावनाओ का

तादात्म्य बाहुवली के साथ होता है। बाहुवली का धैर्य, पराक्रम एव निर्वेद आदि सभी का साधारणीकरण हो जाता है । कवि की दृष्टि मे भी भरतेश्वर के चक्रवर्ती पद की अपेक्षा बाहुवली की कैवल्यज्ञान लाभ का अधिक महत्त्व है। अत इस काव्य का नायक बाहुवली को ही मानना अधिक उचित होगा।

विभिन्न दृश्यो एव कार्य-व्यापारो के चित्रण मे कवि को अच्छी सफलता मिली है, विशेषत सेना के प्रयाण, युद्धभूमि एव योद्धाओ के क्रिया-कलापो से सम्बन्धित अनेक सजीव चित्र प्रस्तुत किये गये हैं। यहाँ कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं—

(क) सेना का प्रयाण—

टलटलीया गिरिटक टोल खेचर खलभलीया,
कड्डीय कूरम कध सधि सायर झलहलीया।
चल्लीय समहरि सेससीसु सलसलीय न सक्कइ,
कचण गिरि कधार भारि कमकमीय कसक्कइ। १२८।

अर्थात् (सेना के चलने से) पर्वतो की चोटियाँ टलमलाने लगी। आकाश मे खलबली मच गयी। पृथ्वी को धारण करने वाले कूर्म के कन्धो के जोड फटने लग गये। सागर उफनने लग गया। शेषनाग के सिर चचल हो उठे जिससे धरती सँभलने मे नही आ रही। कचनगिरि और कधार भी भार के कारण कसमसा रहे हैं।

(ख) विश्राम करती हुई सेना का दृश्य —

एकि उतारा करीय तुरीय तलसारे बाँधइ,
इकि भरडइ केकाण रवाण इकि चारे राधइ।
इकि झीलीय नय नीरि तीरि तेनीय बोलावइ,
एकि वारु असवार सार साहण वेलावइ ॥ १३४॥

अर्थात् कोई अपने घोडे की जीन आदि को उतार कर उसे तलसरा या छाया मे बाँध रहा है। कोई घोडो को खुराक दे रहा है और कोई चारा तैयार कर रहा है। कोई नदी से घडा भरकर औरतो को बुला रहा है। कोई सवार 'हाँ' करता हुआ अपने सार-साधन को अदल-बदल रहा है।'

उपर्युक्त उदाहरणो से स्पष्ट है कि विभिन्न दृश्यो के बिम्ब प्रस्तुत करने की क्षमता कवि मे है। साथ ही विषय-वस्तु एव गति-विधि के अनुरूप ही अनुप्रासपूर्ण शब्दावली का चयन भी कवि की काव्य दृष्टि को प्रमाणित करता है।

विभिन्न भावो की व्यजना के लिए कवि ने प्राय उक्तियो एव सवादो का माध्यम ग्रहण किया है। बाहुबली की उक्तियो मे प्रेम, उत्साह, व्यग्य, निर्वेद आदि की व्यजना अत्यन्त प्रभावोत्पादक रूप मे हुई है। जब भरतेश्वर का दूत अपने नरेश की प्रशसा मे बहुत-कुछ कहता है तो बाहुबली उसे जो उत्तर देते हैं, वह शात्रुत्व भाव से ओत-प्रोत है—'जिसके पीछे मेरे जैसा भाई हो उससे भला युद्ध मे कौन सामना कर

सकता है।.... यदि मैं भाई के राज्याभिषेक के समय नही पहुँचा तो क्या हुआ। उन्होने भी तो हमे याद नही किया। (यदि वे मुझे प्रेम से बुलाते तो) जहाँ वे कहते वहाँ मे पहुँचता। वे बडे राजा ही नही मेरे बडे भाई भी है।"[1]

जब हम भरतेश्वर के दूत द्वारा दी गयी धमकियो के परिप्रेक्ष्य मे बाहुबली की उन उक्तियो को देखते है तो वे निश्चय ही भ्रातृत्व भाव एव आत्मीयता से ओत-प्रोत सिद्ध होती हैं। बाहुबली न तो भाई का विरोधी था और न ही उससे युद्ध करना करना चाहता था—यदि उसे प्रेमपूर्वक बुलाया जाता तो वह उसके चरणो मे भी लौटने को तैयार था किन्तु अपनी शक्ति के मद मे भरतेश्वर ने स्नेह और प्रेम के स्थान पर भय और आतक का मार्ग ग्रहण किया। किन्तु बाहुबली ऐसे कायर नही थे जो कि किसी से भयभीत एव आतकित होकर समर्पित हो जाते। इसलिए वे निश्शक भाव से दूत की चुनौती को स्वीकार करते हुए कहते हैं—"जिसकी अपनी भुजाओ मे बल नही है वह भला दूसरो से क्यो आशा रखे। जो मूर्ख और अज्ञानी होता है वही दूसरो के बल पर गरजता है। मै अकेला ही युद्ध मे भरतेश्वर से भिडकर उसके भुजबल को नष्ट कर दूंगा। बाघ के सामने भेड नही ठहरती।"[2]

इसी प्रकार जब दूत भरतेश्वर के चक्र-रत्न प्राप्ति एव चक्रवर्ती पद-धारण की बात को बार-बार कहकर बाहुबली को प्रभावित करना चाहता है तो वे अत्यन्त उपेक्षा एव व्यंग्यपूर्ण शब्दो मे उत्तर देते हुए कहते हैं—

कहिरे भरहेसर कुण कहीइ,
मइ मिउ रणि सुरि असुरि न रहीइ।
जे चक्किइ चक्रवृत्ति विचार,
अम्ह नगरि कुँभार अपार॥११४॥

अर्थात् अरे भरतेश्वर की क्या बात करता है, मेरे सामने तो युद्ध मे सुर-असुर भी नही ठहरते। हाँ, यदि उन्हे चक्र और चक्रवर्तीपन का बहुत विचार है तो (कह देना) हमारे नगर मे अनगिनत चक्रवर्ती (चक्र चलाने वाले) कुम्हार विद्यमान हैं।

उपर्युक्त उक्तियो मे बाहुबली के रोष, उत्साह, व्यग्य आदि की व्यजना अत्यन्त स्वाभाविक रूप मे की गई गयी है जिनके साथ पाठक के हृदय का पूर्ण तादात्म्य

---

१ भरतेश्वर बाहुबली रास, ठवणि ४, पक्तियाँ ८६-८८

२ तव सु जपइ, तव सु जपइ, बाहुबलि राउ
अप्पह बाह भजा न बल, परह आस कहइ कवण कीजइ।
सु जि मूरख अजाण पुण अवर देखि वखयइ ति गज्जइ।
हुँ एकल्लउ समर भरि, भड भरहेसर धाइ।
भजउ भुजबलि रे भिडिय, भाह न भेडि न थाइ॥१०४॥

स्थापित हो जाता है। किन्तु दूसरी ओर जब भाई के वैराग्य की घोषणा को सुनकर भरतेश्वर का हृदय-परिवर्तन हो जाता है तो उनकी ग्लानि, दैन्यता एव कातरता की व्यजना भी अत्यन्त मार्मिक शब्दो मे की गई है, देखिए—

"धिग धिग ए एय ससार,
धिग धिग राणिम राजसिद्धि।
एवड् ए जीव सहार,
कीधउ कुण विरोधवसि ए! ॥१६१॥
कीजइ एकहि कुण काजि,
जउ पुण बधन आवरई ए।
काज न ईणइ राजि,
घरि पुरि नयरि न मदिरिहि ॥१६२॥
× × ×
कीजई ए आजु पसाउ,
छाँडि न छाँडि न छयल छलो।
हीयडइ ए म धरि विमाउ,
भाई य सम्हे विरामीया ए॥
× × ×
मानई ए नवि मुनि राउ,
मौन न मेल्हई मन्नवीय।
मुक्कइ ए नहु नीय माण,
वरस दिवस निरसण रहीय॥

अर्थात्—धिक्कार है! धिक्कार है इस ससार को! रानी और राज वैभव को भी धिक्कार है जिसके लिए इतनी मात्रा मे जीव-सहार होता है! भला किसके विरोध के लिए मैंने यह किया! यह सब कुछ किसके लिए किया! यदि किसी प्रकार भाई पुन. आ जाय (या आहत हो जाय) तो मुझे इस राज्य, पुर, घर, नगर मन्दिर की कोई इच्छा नही है!.. भाई! दया करो, मुझे इस तरह बिल्कुल अकेला मत छोडो! भाई, मैंने ही तुझे विश्वब्ध किया है, पर इसका दु ख हृदय मे मत रखो।

× × ×

नये मुनिराज! मेरी बात मान जाओ! यदि मनाने पर भी रुठे रहोगे तो फिर मुझे साल-छह मास का अनशन रखना पड़ेगा।

कितना भ्रातृत्व एव आत्मीयता है इन पक्तियो मे! कवि ने यह दिखा दिया कि सच्ची शान्ति और सच्चे स्नेह मे कितना मेल है। वे ही भाई जो एक-दूसरे को नष्ट करने के लिए कटिबद्ध थे, निर्वेद का सचार होते ही किस प्रकार एक-दूसरे के लिए

आत्मत्याग के लिए आतुर हो रहे हैं। वस्तुतः राग-द्वेष से ऊपर उठे हुए इसी पवित्र भाव को रस-शास्त्र में 'शान्त रस की' की सज्ञा दी गयी है तो सौन्दर्य शास्त्र में इसे गौरवपूर्ण 'औदात्य' (Sublime) का नाम दिया गया है।

अस्तु, कठोर और कोमल, क्षुद्र और उदात्त, रौद्र एव स्नेह आदि विभिन्न प्रकार के भावो की इसमे सफल अभिव्यक्ति हुई किन्तु अन्त मे इसकी परिणति निर्वेद या शान्त मे ही होती है। पूर्ववर्ती कवि शान्त रस की पृष्ठभूमि मे शृङ्गार रस की नियोजना करते रहे है जबकि शालिभद्र ने वीर एव रौद्र जैसे कठोर भावो की भूमिका पर शान्त रस की प्रतिष्ठा का सफल प्रयास किया है। अत शान्तरस या औदात्य की अभिव्यक्ति की दृष्टि मे यह निश्चय ही एक उच्चकोटि का काव्य है।

शिल्प एवं शैली—रचना-शैली की दृष्टि से इसे प्रबन्धात्मक काव्य कहा जा सकता है क्योकि पूरा काव्य एक क्रमबद्ध कथावस्तु मे आबद्ध है किन्तु फिर इसे सस्कृत के महाकाव्य या खण्ड-काव्यो की परम्परा मे नही रखा जा सकता। वस्तुत कवि का लक्ष्य इसे परम्परागत महाकाव्य या खण्ड-काव्य का रूप देने का नही था, अपितु प्रबन्धात्मक शैली मे भरतेश्वर-बाहुबली का चरित प्रस्तुत करते हुए उसे रासक-रूप प्रदान करने का था। कदाचित् जैन-मन्दिरो मे गान एव अभिनय के साथ प्रस्तुत किये जाने के उद्देश्य से ही इसकी रचना हुई थी, इसीलिए इसमे सवादो की प्रमुखता है।

कवि ने प्रारम्भ मे 'रासह छदिहि' का उल्लेख किया है किन्तु इसमे रास के अतिरिक्त सोरठा, चउपइ, वस्तु, त्रोटक, धवल आदि छन्दो का भी प्रयोग हुआ है। पूरा काव्य चौदह ठवणियो मे विभक्त है। 'ठवणि' से कवि का तात्पर्य कदाचित 'ठहरावणि' या 'ठहराव' से है। आकार-प्रकार की दृष्टि से काव्य बहुत बडा नही है—लगभग २०० छन्दो मे ही यह समाप्त हो जाता है।

भाषा की दृष्टि से इसे प्रारम्भिक हिन्दी का काव्य कहा जा सकता है। कुछ विद्वानो ने प्रारम्भ मे भ्रान्तिवश इसे अपभ्रश का काव्य माना था किन्तु इसकी भाषा अपभ्रश न होकर प्रारम्भिक राजस्थानी या हिन्दी है। जो लोग इसे अब भी अपभ्रंश की रचना मानते है वे इसी की समकालीन अपभ्रश रचना—'सदेश रासक' की भाषा से इसकी तुलना करके देखे—यहाँ इन दोनो के उदाहरण प्रस्तुत है :—

(क) सदेशरासक—

सयडिड जु सिक्खइ कुइ सगत्यु
तसु कहउ विबुइ सगहहि हत्थु।
पडिनह मुक्खइ मुणहि भेउ,
तिह पुरउ पढिव्वहु ण हु वि एउ॥ २०

(ख)भरतेश्वर बाहुबली रास—

तु बाहूबलि जपइ कहि वयण म काचुं ।
भरहेसर भय कपइ ज जगतुं साचु ।।
समरंगणि तिणि सिउ कुण काछइ ।
जिहि बन्धव मइ सरिसउ पाछइ ।।

'भरतेश्वर बाहुबली रास' की भाषा का विश्लेषण करते हुए डा. हरीश ने स्पष्ट किया है कि इसकी 'भाषा सरल पुरानी हिन्दी है तथा प्राचीन राजस्थानी शब्दो की भरमार है । साथ ही अपभ्र श अपना स्थान रिक्त करती हुई एव तत्सम शब्द ग्रहण करती प्रतीत होती है ।"

यद्यपि इसमे उत्तरकालीन अपभ्र श की लुप्त होती हुई अनेक प्रवृत्तियाँ भी हैं किन्तु वे विकासोन्मुख राजस्थानी या हिन्दी की नयी प्रवृत्तियो की तुलना मे उपेक्षणीय हैं । अत इसे हिन्दी काव्य कहना ही उचित होगा । हाँ, इतना अवश्य है कि गुजराती के विद्वान इसे पुरानी गुजराती का काव्य कहते हैं किन्तु उस समय तक राजस्थानी एव गुजराती पृथक नही हो पायी थी—अत. इसे जितनी सरलता से पुरानी गुजराती का काव्य कहा जा सकता है उतनी से ही पुरानी राजस्थानी का भी स्वीकार किया जा सकता है ।

कवि ने अपनी भाषा-शैली को आकर्षक बनाने के लिए विभिन्न शब्दालकारो व अर्थालकारो का प्रयोग उचित रूप मे किया है, यहाँ कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं—

(क) छेकानुप्रास—'गद गयत गयवर गुडीय'
(ख) यमक—'वेगि सुवेगि सु बोलइ'
(ग) श्लेष—'वाम तुरीय वाहिणी तणउ'
(घ) उपमा—'जिमि उदयाचल सूरि तिमि, सिरि सोहँहि मणि मवडे'

इसी प्रकार अनेक लोकोक्तियो का भी प्रयोग सुन्दर रूप मे हुआ है—

विण वन्धव सवि सपय ऊणी ।
जिम विण लवण रसोइ अलूणी । ८३

अर्थात्—विना बाधव के सभी सपत्ति न्यून है जिस प्रकार नमक के विना रसोई अलोनी (फीकी) रहती है ।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि 'भरतेश्वर बाहुबली रास' हिन्दी काव्य-परम्परा व रास-परम्परा का प्रथम काव्य होते हुए भी वस्तु वर्णन, दृश्य-चित्रण, भाव-व्यंजना, उक्ति-सौष्ठव एव शैली के सौन्दर्य की दृष्टि से एक महत्वपूर्ण काव्य है । साथ ही हिन्दी की विभिन्न काव्य-परम्पराओ, काव्य पद्धतियो

---

१ आदिकाल के अज्ञात हिन्दी रास-काव्य, पृ ३०

एवं भाषागत प्रवृत्तियो के उद्गम-स्रोत एव विकास-प्रक्रिया के अध्ययन की दृष्टि से भी हिन्दी की इस प्रथम काव्य-रचना का ऐतिहासिक महत्त्व है। अतः हमारे विचार से शुद्ध साहित्यिक एवं भाषा-वैज्ञानिक दृष्टि से इस रचना के और अधिक विवेचन-विश्लेषण की अपेक्षा है। निश्चय ही हिन्दी भाषा एव हिन्दी साहित्य के मूलोद्भव एव विकास की अनेक गुत्थियो को खोल देने की क्षमता इस रचना मे है।

अन्य धार्मिक रास-काव्य—

मुनि शालिभद्र सूरि की एक अन्य रचना 'बुद्धि रास' बताई जाती है जिसमे जैन-धर्म की शिक्षाए प्रस्तुत है। किन्तु जैसा कि डा० दशरथ ओझा ने लिखा है— 'शालिभद्र सूरि नाम के एक दो और भी ग्रन्थकार हो गये हैं और उन्होने भी रास की रचना की है।' ऐसी स्थिति मे यह कहना कठिन है कि बुद्धि रास के रचयिता भी वही शालिभद्र सूरि हैं जिन्होने भरतेश्वर बाहुबली रास रचा या कोई अन्य हैं। हमारे विचार से दोनो एक नही हैं। भरतेश्वर बाहुबली के रचियता ने जहाँ अपने को केवल शालिभद्र सूरि लिखा है वहाँ दूसरे रास मे उनके साथ 'गुरु' विशेषण का प्रयोग हुआ है—

(क) गुण गणह ए तणु भडार, सालिभद्र सूरि जाणीइए।

—भरतेश्वर बाहुबली रास—

सालिभद्र गुरु सकुलीय, सिविहूँ गुर उपदेसि।
पढइ गुणइ जे सभलहि, ताहइ विघ्न टलेसि ॥

—बुद्धि रास

दूसरे अश से स्पष्ट रूप मे पता चलता है कि यह रचना गुरु सालिभद्र के उपदेशो का सग्रह है जिसे उनके किसी शिष्य ने (समवत. उसका नाम 'सिवि' ही हो) काव्य-रूप मे प्रस्तुत किया है। गुरु के उपदेशो की प्रशसा करते हुए शालिभद्र को गुरु कहना, यह बताता है कि ये उनके किसी शिष्य के उद्गार हैं।

काव्य-सौष्ठव एव रचना-शैली की दृष्टि से भी यह रचना 'भरतेश्वर-बाहुबली रास' के स्तर की नहीं है तथा इसका रचना-काल भी सदिग्ध है।

बारहवी शती के अतिम रास-काव्यो मे कवि आसगु द्वारा रचित दो काव्य— 'चन्दन-बाला-रास' एव 'जीव-दया-रास' विशेष उल्लेखनीय हैं। इन दोनो का ही रचना-काल सन् १२०० ई० के आस-पास माना जाता है। **चन्दन-बाला-रास** मे इसकी नायिका चन्दन बाला की चारित्रिक पवित्रता, एव धार्मिक साधना का चित्रण करते हुए जैन-धर्म की महत्ता का प्रतिपादन किया गया है। वह चम्पा नगरी के राजा दधिवाहन की कन्या थी, जिसे कोशाम्बी के राजा शतानीक ने, उसकी माता धारिणी के सहित कैद कर लिया था। धारिणी ने तो आत्म-हत्या कर ली किन्तु चन्दन-बाला ऐसा नही कर सकी। इसके अनन्तर उसे किसी सेठ को बेच दिया गया। वहाँ सेठ की

स्त्री को यह शक होने पर कि कदाचित् उसके पति का चन्द-बाला से गुप्त सम्बन्ध है, उसे असह्य यातनाए दी गयी। किन्तु चन्दन-बाला अपने सतीत्व, सयम, एव साधना पर अटल रही जिसके परिणाम स्वरूप अन्त मे उसे भगवान महावीर स्वामी को अपने हाथ से भोजन कराने का सौभाग्य तथा कैवल्य ज्ञान की उपलब्धि हुई। इस प्रकार कवि का दृष्टिकोण मूलत धार्मिक ही है, पर इससे रचना की काव्यात्मकता मे विशेष अन्तर नही आया है। उसने नारी-सौन्दर्य, नायिका की चेष्टाओ, रति, करुणा, उत्साह आदि भावो की व्यजना पूर्ण सरसता से की है। उदाहरण के लिए यहाँ रानी धारिणी के नख सिख की एक छटा द्रष्टव्य है—

दधि वाहण गेहिणी सु पाहिणी, रूपवत सा धारिणी राणी।
तुग पयोहर खीर सर कुडिल वेस भुय नयण सुचगी।
हस गमणि सा मृग नयणि नव जोवण नव नेह सुरगी॥

इस की शैली के सम्बन्ध मे डा० हरीश का निष्कर्ष है—'छन्द और अलकारो की दृष्टि से कृति का विशेष महत्त्व नही लगता। परन्तु भाषा तथा सरल भावपूर्ण शब्दावली के कारण रास का महत्त्व बहुत बढ जाता है। भाषा की प्रमुख विशेषता यह है कि उसमे गुजराती और राजस्थानी का मिश्रण है। . ऐसी भाषा को सरलता से पुरानी हिन्दी कहा जा सकता है।'

आसगु की दूसरी रचना—जीव दया रास—मे जैन-धर्म के उपदेशो को पद्य-बद्ध किया गया है, जिसका साहित्यिक दृष्टि से विशेष महत्त्व नही है। हाँ, बीच मे कही कही रूपको का प्रयोग सुन्दर रूप मे हुआ है, जैसे—

देहा सरवर मज्झिहि कमलु,
नहि वइसउ हसा धुरि धवलो।
काल भमरु उपरि भमइ,
आउखए रस मधु वि ले सइ।
अगखूटइ नहु जिउ मरइ,
तूटा ऊपर घरी न दीसइ॥

किन्तु इस प्रकार के अश बहुत कम हैं, अधिकाश मे उपदेशो की चर्चा शुष्क अभिधात्मक शैली मे हुई है।

आगे तेरहवी व चौदहवी शताब्दी मे बहुत बडी सख्या मे रासो काव्य लिखे गये जिनमे कुछ ये हैं—स्थूलिभद्र रास (जिन धर्म सूरि, १२०९ ई०), रेवतगिरिरास (विजयसेन सूरि, १२३१ ई०), आबू रास (पल्हण' १२३२ ई०), नेमिनाथ रास (सुमति गुणि, १२३८ ई०), कच्छुली रास (प्रज्ञातिलक, १३०६ ई०), गय सुकुमालरास (देल्हण, १४वी शती), जिन पद्मसूरि पट्टाभिषेक रास (सारमूर्ति १३३३ ई) पच पाडव चरित रास (शालिभद्रसूरि, १३५३ ई०), गौतमस्वामी रास (उदयवन्त,

१२५५ ई०), मयण रेहा रास (रयणु, १४वी शती)। 'स्थूलिभद्ररास' के रचयिता का नाम स्पष्ट रूप मे उपलब्ध नही, किन्तु इसके अन्त मे एक स्थान पर 'जिणधाम' आता है, इसी के आधार पर जिनधर्म सूरि का नाम का अनुमान किया गया है। इसमे जैन तपस्वी स्थूलिभद्र सूरि की सयमशीलता का प्रतिपादन प्रभोत्पादक रूप मे किया गया है। मुनिराज चातुर्मास व्यतीत करने के लिए अद्भुत सुन्दरी वेश्या कोशा के यहाँ ठहरते हैं। यद्यपि वेश्या उन्हे आकर्षित करने के लिए सभी प्रकार के प्रयास करती है, फिर भी मुनिवर अपने सयम पर अडिग रहते है। दूसरी ओर एक अन्य मुनि जब कोशा के यहाँ गये तो वे अपनी सयमशीलता को भूल कर उसके चरणो मे लोटने लग गये। इस प्रकार समान परिस्थितियो मे दो मुनियो के चरित्र का वैषम्य दिखाते हुए सयमशीलता के महत्त्व पर प्रकाश डाला गया है। यद्यपि इस दृष्टि से काव्य का मूल भाव निर्वेद ही है किन्तु वेश्या कोशा के प्रसग मे नारी, सौन्दर्य, हाव-भाव, प्रकृति के उद्दीपक रूप, काम-लालसा आदि की भी व्यजना आकर्षक शैली मे हुई है।

'रेवतगिरि रास' मे जैन तीर्थ रेवतगिरि के महत्त्व का प्रतिपादन ऐतिहासिक, एव पौराणिक इतिवृत्त तथा प्राकृतिक सौन्दर्य के आधार पर किया गया है। सारा काव्य चार कडवको मे विभक्त है, किन्तु इसमे कथा-सूत्र का अभाव है। इनमे क्रमश गिरनार, नेमिनाथ, सघपति, अबिका, यक्ष तथा मन्दिरो का वर्णन करते हुए तीर्थ-स्थल की प्रतिष्ठा का आख्यान किया गया है। बीच-बीच विभिन्न दान वीरो की सघ-यात्रा, उनकी दान-वीरता, मूर्ति का पराक्रम आदि की व्यजना भी की गई है। काव्यत्व की दृष्टि से अधिक महत्त्वपूर्ण स्थल वे हैं जिनमे प्राकृतिक सुषमा का चित्रण किया गया है, यथा —'जैसे-जैसे भक्त गिरनार के शिखर पर चढने लगता है वैसे वैसे वह ससार की वासना से धीरे-धीरे मुक्त होता जाता है। जैसे-जैसे ठडा जल अग पर बहता जाता है वैसे-वैसे कलियुग का मैल घटता जाता है। जैसे जैसे वहाँ निझर को स्पर्शकर शीतल वायु चलती है, वैसे-वैसे निश्चय तत्काल भवदु ख का यह दाह नष्ट होता जाता है। वहाँ कोकिला और मयूर का कलरव एव मधुकर का मधुर गु जार सुनने मे आता है। मेघजाल के समूह और निर्झर से भी रमणीय तथा अलि एव कज्जल सम श्यामल शिखर शोभित है।' यद्यपि कवि का दृष्टिकोण यहाँ भी धार्मिक प्रभाव से मुक्त नहीं है, फिर भी इसमे प्रकृति-सौन्दर्य की सहज स्वाभाविक झलक मिलती है। इसकी शैली मे आलकारिकता की प्रवृत्ति विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

'रेवतगिरिरास' की ही भाँति 'आबूरास' मे भी जैनियो के प्रसिद्ध स्थान आबू मन्दिर का आख्यान किया गया है। इसमे विशेषत आबू-मन्दिर के निर्माण-

मे सम्बन्धित व्यक्तियो का गुण-गान करते हुए धार्मिक वातावरण की व्यजना की गयी है, जैसे—

अनेक सघपति आबुइ आवहिं,
कनक कपड नेमि जिणु पहिरावहिं,
पूजहिं माणिक मोतीयड हुले,
किवि पूजहि गोगाधिहि फूले।

इसकी भाषा-शैली मे पर्याप्त सरलता एव प्रवाहपूर्णता विद्यमान है।

'नेमिनाथ रास' में मुनि सुमतिगणि ने जैन तीर्थङ्कर नेमिनाथ के चरित का वर्णन अत्यन्त सक्षेप मे किया है। इसमे कुल ५८ छन्द हैं। इसमे नायक के पराक्रम, विवाह, वैराग्य, तपस्या आदि से सम्बन्धित प्रसगो मे उत्साह, रति निर्वेद आदि भावो की व्यजना अत्यन्त प्रभावोत्पादक शैली मे हुई है। नेमिनाथ के द्वारा परित्यक्त सुन्दरी राजुल के बाह्य सौन्दर्य एव आन्तरिक भावो का भी उद्घाटन पूर्ण सहृदयता से किया गया है। डा० हरीश के शब्दो मे—इसका सौन्दर्य-वर्णन पर्याप्त सुघड है तथा सौन्दर्य के उपमानो मे भी मौलिकता है। रूपवती राजमती की जीवन भर की साधना व्यर्थ हो गई, राजमती का सारा शृगार क्रदन मे तिरोहित हो गया। उसकी कान्ति रुदन मे बदल गई, पर उसने धैर्य नहीं छोडा। ऐसे दिव्य पुरुष मुझ मूर्ख के वल्लभ कैसे हो सकते है? वस्तुत कवि ने इस प्रसग मे नारी-हृदय की प्रतिक्रियाओ का विश्लेषण सफलता से किया है।

'कच्छूलीरास' मे कच्छूली नगरी के पट्टाधिपति उदयसिंह सूरी के पराक्रम, धर्म-प्रचार एव आध्यात्मिक सिद्धि का प्रतिपादन अत्यन्त सक्षेप में किया गया है। सारी रचना केवल तीन पृष्ठो मे समाप्त हो जाती है। इसी प्रकार **'गय सुकुमाल रास'** जिसमे देवकी पुत्र (अर्थात् कृष्ण के भाई) गय सुकुमार मुनि के चरित्र का आख्यान किया गया है, केवल ३४ छन्दो की रचना है। वस्तुत 'पच पाडव चरित को छोडकर चौदहवी शती के अन्य सभी रास प्राय सक्षिप्त प्रबन्धात्मक कविताएँ मात्र हैं। 'पच-पाडव-चरित' रास अवश्य आठ सौ छन्दो का वृहत काव्य है जिसमे महाराज शान्तनु के जीवन से लेकर महाभारत युद्ध मे पाडवो के विजयी होने तक की सारी कथा सक्षेप मे प्रस्तुत की गई है। अन्त मे नेमिमुनि के उपदेश से पाडवो के जैन धर्म स्वीकार कर लेने की बात कही गई है। जैन-धर्म के प्रभाव से ही वे परीक्षित को राज्य देकर हिमालय की ओर प्रस्थान कर जाते है। इस प्रकार इसके कथानक के जैनेतर होते हुए भी उसमे जैन तत्त्वो का समावेश कर दिया गया है।

इसमे इतिवृत्तात्मक गीति शैली का प्रयोग हुआ है, जिससे घटनाओ के वर्णन एव भावो की व्यजना मे पारस्परिक सतुलन है। उदाहरण के लिए द्रौपदी चीर हरण प्रसग के कुछ पद्य द्रष्टव्य हैं—

३. ऐतिहासिक रासो काव्य

जैसा कि अन्यत्र बताया जा चुका है, हिन्दी साहित्य के प्रारम्भिक काल मे जैन-धर्म के आश्रय मे एक विशिष्ट काव्य-परम्परा का विकास हुआ था, जिसे 'धार्मिक रास काव्य-परम्परा' की सज्ञा दी गयी है। इस परम्परा की लोकप्रियता एव प्रचार को देखकर अनेक जैनेतर कवियो का भी ध्यान इसकी ओर आकृष्ट हुआ, जिन्होने इसे नया मोड दिया। इन कवियो मे से अधिकाश राज्याश्रित थे, जिन्होने महापुरुषो एव तीर्थंकरो के स्थान पर अपने आश्रयदाताओ के गुण-गान के लक्ष्य को लेकर काव्य-रचना की। उनके सामने धर्म-प्रचार का उद्देश्य न होकर राजाओ को प्रसन्न करना ही उद्देश्य था। फलत उनके ग्रन्थ रासो सज्ञक होते हुए भी दृष्टिकोण, विषय-वस्तु एवं शैली की दृष्टि से मूल परम्परा से इतनी दूर चले गये कि उन्हें एक नयी या भिन्न परम्परा के रूप मे मान्यता देने की आवश्यकता अनुभव प्रतीत होती है। वैसे डा० माता प्रसाद गुप्त 'रास' एव 'रासो'—इन दोनो सज्ञाओ मे मूलभूत अन्तर मानते हुए उनका सम्बन्ध दो भिन्न परम्पराओ से मानते है। हमारे विचार से ये परम्पराएँ मूलत सर्वथा विच्छिन्न नही हैं, उनमे परस्पर माँ-बेटी का सम्बन्ध है, अत दोनो का पृथक अस्तित्व मानते हुए भी हम उन्हे बिलकुल असम्बद्ध नही मानते। 'रास' और 'रासो' सज्ञा मे भी व्युत्पत्ति एव अर्थ की दृष्टि से विशेष अन्तर नही है, 'रास' का राजस्थानी सस्करण ही 'रासो' है, क्योकि राजस्थानी मे अकारान्त एव आकारान्त सज्ञाएँ ही प्राय ओकारान्त हो जाती हैं, जैसे, 'घोडा' से 'घोडो'। इसके अतिरिक्त ऐतिहासिक काव्यो मे भी 'रास' एव 'रासो' दोनो सज्ञाओ का प्रयोग मिलता है, (जैसे, बीसलदेव रास पृथ्वीराज रासो) अत हम दोनो का ही सम्बन्ध 'रासक' परम्परा से मानते हुए, उन्हे विषय-वस्तु, एव विकास-क्रम की दृष्टि से ही दो भिन्न परम्पराओ के रूप मे स्वीकार करते हैं, अन्यथा उनका उद्गम-स्रोत एक ही है।

रास काव्य-परम्परा मे नया मोड तेरहवी शती मे ही आ गया था, जबकि नरपति नाल्ह ने 'बीसलदेव' रास की रचना की, जो धार्मिक काव्य न होकर ऐतिहासिक काव्य है, पर ऐतिहासिक काव्यो की अखण्ड परम्परा उसके एक-डेढ शताब्दी बाद ही प्रतिष्ठित हुई। इसके अतिरिक्त 'पृथ्वीराज रासो' भी ऐतिहासिक रासो काव्य है जो आदिकाल या प्रारम्भिक काल की सीमा में पडता है। अत इन दोनो का परिचय यहाँ क्रमश दिया जाता है।

व दिन आदि मे नही, ऐसी स्थिति मे यह सम्भव है कि एक ही संवत विभिन्न लिपिकारो के कारण बदल गया हो, जैसे—'सवत सहस तिहुतर जाणि' और सवत सहस सतिहुतरह जाणि' मे केवल एक 'स' का अन्तर है जिससे तिहुत्तर सतिहुत्तर हो गया। दूसरी ओर प्रारम्भक उल्लेख मे बारहसै बहोहत्तर का निर्देश है। राजस्थानी मे बहोत्तर का प्रयोग ७२ के लिए होता है। अत इसका अर्थ १२७२ लिया जा सकता है। तिथि-वार की दृष्टि से भी इसकी पुष्टि की गई है। ऐसी स्थिति मे 'सवत सहस तिहुत्तर' का अर्थ १०७३ न लेकर १२७३ लेना चाहिए जो कि १२७२ के समीप पडता है। यद्यपि यहाँ अधिक विवेचन के लिए स्थान नही है, फिर भी निष्कर्ष रूप मे हम कह सकते हैं कि इस काव्य का आरम्भ सवत् १२७२ जेठ वदी नवमी बुधवार को हुआ तथा इसकी समाप्ति सवत् १२७३ श्रावण शुक्ल पचमी को हुई। इसीलिए कवि ने जहाँ १२७२ के साथ 'नाल्ह रसायण आरभई' कहा है, वहाँ दूसरे के साथ भूतकालिक क्रिया का प्रयोग करते हुए 'नल्ह कवीसरि कही अमृत वाणि' कहा गया है जो इसकी समाप्ति का सूचक है। अस्तु दूसरे निर्देश मे १२७३ से ही १०७३, १०५७, १३६७ आदि का बन जाना स्वाभाविक है। अन्य ऐतिहासिक एव भाषा वैज्ञानिक साक्ष्यो के आधार पर श्री गौरीशकर हीराचन्द ओझा श्री अगरचन्द नाहटा, डा० उदयनारायण तिवारी प्रभृति विद्वान भी इसका रचनाकाल १२७२ वि० मानने के पक्ष मे हैं। कुछ विद्वान इसका रचना-काल तेरहवी शती ही मानते हैं, किन्तु वे 'बारह सौ बहोत्तरा' का अर्थ १२७२ लगाते हैं, जो राजस्थानी भाषा के सम्यक् ज्ञान के अभाव का सूचक है।

अत हम इसे निश्चित रूप से १२७२ वि० अर्थात् १२१५ ई० की रचना मान सकते हैं यह दूसरी बात है कि आज इसका मूल रूप उपलब्ध नही है, जो भी प्रतिलिपियाँ मिलती हैं वे बहुत परवर्ती एव परिवर्तित हैं।

कुछ विद्वानो ने 'बीसलदेव रास' के रचयिता नरपति नाल्ह को पन्द्रहवी शती के किसी गुजराती कवि से अभिन्न सिद्ध करने का प्रयास किया है, किन्तु उक्त गुजराती कवि का नाम केवल मात्र 'नरपति' है, उसके आगे 'नल्ह' या 'नाल्ह' का प्रयोग नही मिलता। साथ ही दोनो के रचना-काल मे भी पर्याप्त अन्तर है, अत दोनो को एक नही माना जा सकता।

इस काव्य मे अजमेर व साँभर के राजा बीसलदेव एव रानी राजमती के विवाहोत्तर जीवन की एक विशेष घटना का वर्णन किया गया है। राजा बीसलदेव की इस गर्वोक्ति पर कि उसके यहाँ नमक की खान है, उसके समान कोई नरेश और नही, रानी कह देती है कि उससे भी बढकर ऐसे नरेश हैं जिनके यहाँ हीरो की खान है जैसे—उडीसा पति। राजा क्रुद्ध होकर उडीसा चला जाता है और बारह वर्ष पश्चात् लौटता हैं। यही इसका सक्षिप्त कथानक है।

वीसलदेव या विग्रहराज नाम के इतिहास मे कई राजा मिलते है, अत यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि प्रस्तुत काव्य का सम्बन्ध किससे है ? कुछ ने विग्रहराज तृतीय का समर्थन किया है, क्योकि एक शिलालेख मे इसकी रानी का नाम राजदेवी मिलता है, जबकि अन्य विद्वानो ने पराक्रमी नरेश विग्रहराज चतुर्थ को, जो कि 'ललित विग्रहराज' नाटक का नायक भी है, इसका नायक सिद्ध किया है। वीसलदेव तृतीय का राज्य-काल ११५१-११७५ वि० तथा चतुर्थ वीसलदेव का राज्य-काल लगभग १२०८ से १२२० वि० तक माना जाता है। इस दृष्टि से चतुर्थ वीसलदेव ही कवि के अधिक समीप पडता है। इसके अतिरिक्त इस रचना मे जैसलमेर का भी उल्लेख आया है जिसे राजा जैसल ने स० १२१२ वि० मे बसाया था। ऐसी स्थिति मे इसका नायक विग्रहराज (वीसलदेव) चतुर्थ का ही होना सम्भव है। रचना-काल से भी इसी की पुष्टि होती है।

फिर भी ऐतिहासिक दृष्टि से अध्ययन करने वाले विद्वानो को इस काव्य से प्राय निराशा ही होती है। वस्तुत कवि का लक्ष्य न तो इतिहास का आख्यान करने का था और न ही किसी सामयिक नरेश या आश्रयदाता के गौरव का बढा-चढा कर गान करने का था, अपितु उसका मूल लक्ष्य नारी-चरित्र का गुण-गान करने का था, जिसकी व्यजना उसने बार बार की है—

वागवाणी मो वर दियो,
अस्त्री रसायण करूं बखाण ;

× × ×

हस वाहणि मिगलोचनि नारि,
सीस समारइ दिन गिणइ ;
जिण सिरजइ उम्रिगण घर नारि
जाइ दिहाडाउ झूरिता ॥

अर्थात् सरस्वती ने मुझे वर दिया है, स्त्री रसायण का वर्णन करता हूँ। × × हस गवनी मृगलोचनी नारी सिर को सुलझाती हुई दिन गिनती है। हाय ! किसी को परदेशवासी की पत्नी न बनावे, उसके सारे दिन विलाप करते ही व्यतीत होते हैं।'

काव्य का केन्द्रीय पात्र भी वीसलदेव न होकर राजमती ही है, उसी से इसका आरम्भ होता है, उसी के विरह का इसमे निरूपण हुआ है तथा पाठक उसी के चरित्र एव व्यक्तित्व से प्रभावित होता है। वीसलदेव तो इसमे केवल एक पूरक पात्र के रूप में आता है। बीच बीच मे जैसी उक्तियाँ कही गई हैं, उनमे भी कवि की नारी-जीवन के प्रति गहरी सहानुभूति का पता चलता है, जैसे—

श्री जनम काई दियो हो महेस ?
अवर जनम थारे घणा हो नरेस ।
× × ×
बन खड काली कोइली
बइसती अब कइ चप की डालि ।

अर्थात् महेश ! त्रिया का जन्म क्या दिया ! तुम्हारे पास और भी बहुत से जन्म (जीवन) थे ···· (इससे अच्छा तो) 'किसी वन-खड मे काली कोयल ही बना देते जो (स्वतन्त्रतापूर्वक) किसी चपा की डाली पर बैठ सकती !'

अस्तु, इसमे कवि का लक्ष्य नारी-जीवन की गाथा को सहानुभूतिपूर्ण शब्दो मे प्रस्तुत करने का है । यही कारण है कि इसमे विरह-वर्णन को ही सर्वाधिक विस्तार दिया गया है । सक्षेप मे, यह एक वीर-गाथा नही अपितु विरह-काव्य है ।

यद्यपि नरपति नाल्ह अधिक विद्वान् नही था, सस्कृत के प्रचलित उपमानो से वह अनभिज्ञ प्रतीत होता है, फिर भी उसे कवि-हृदय प्राप्त था । नारी-हृदय की कोमलता, दीनता और विवशता की व्यजना मे उसे पूरी सफलता मिली है । उसका विरह-वर्णन वेदना-पूर्ण मार्मिक उक्तियो से परिपूर्ण है । दीर्घ वियोग के लम्बे-लम्बे दिवसो को एक-एक करके काटती हुई और अश्रु-पूरित नेत्रो से अखड प्रतीक्षा मे लीन प्रियतम-पथ को देखती हुई बाला की मूर्ति का चित्रण अत्यन्त सजीवता से किया गया है । साथ ही उस अहग्रस्त दभी पुरुष वर्ग के प्रति, जो अबोध मुग्धा के एक छोटे से उपहासपूर्ण वाक्य से ही उत्तेजित होकर उसे त्याग जाता है, कवि का गहरा रोष व्यजित हुआ है—

तो थी भली दमयन्ती नारि,
नल राजा मेल्हे गयो,
पुरीष समो नही निगुण ससार ।

'तुमसे भी अच्छी दमयन्ती जैसी नारी को भी नल छोड कर चला गया, (अत तुम्हारा कोई दोष नही —) ससार मे पुरुष के समान कोई निगुणी (अवगुणी) नही है ।'

वस्तुतः अनुभूतियो की सहज स्वाभाविक अभिव्यक्ति की दृष्टि से यह रचना उच्चकोटि की है, किन्तु जो लोग तत्सम शब्दावली, परपरागत उपमाओ, शैलीगत प्रौढता, वर्णन-वैविध्य, कथा-विस्तार आदि की दृष्टि से इसका मूल्याकन करना चाहते हैं, वे अवश्य इससे सतुष्ट न हो सकेगे । इसकी भाषा तेरहवी शती की राजस्थानी है जो कही-कही लिपिकारो के कारण क्रमश विकसित एव परिवर्तित हो गयी है ।

पृथ्वीराज रासो

'बीसलदेव रास' से भी अधिक विवादास्पद किन्तु साथ ही अधिक महत्त्वपूर्ण

रचना पृथ्वीराज रासो (या पृथ्वीराज रासउ) है, जिसका रचयिता अंतिम हिन्दू नरेश सम्राट पृथ्वीराज चौहान का सखा, सामन्त, मन्त्री एवं राज-कवि चंदवरदायी माना जाता है। इस ग्रन्थ की विभिन्न स्थानों में ६० से भी अधिक प्रतिलिपियाँ उपलब्ध हैं जो सभी १६वीं शती के बाद की हैं। इन्हें मुख्यत. चार वर्गों में विभाजित किया गया है—(१) वृहत (२) मध्यम (३) लघु एवं (४) लघुतम। जहाँ वृहत् रूपान्तर ६९ सर्गों में विभाजित है तथा १६ हजार छन्दों का है वहाँ लघुतम संस्करण अध्यायों में विभाजित नहीं है तथा इसकी श्लोक-संख्या केवल १३०० है। वैसे इनमें से मध्यम को छोड़कर शेष सभी संस्करण विभिन्न विद्वानों द्वारा संपादित होकर प्रकाशित हो चुके हैं। लघु संस्करण हाल ही में चंडीगढ़ के डा० बी० पी० शर्मा द्वारा तथा लघुतम संस्करण डा० माताप्रसाद गुप्त द्वारा पर्याप्त श्रम एवं शोधन के अनन्तर संपादित एवं प्रकाशित हुआ है।

रासो का मूल रूप किस संस्करण को माना जाय, यह विवादास्पद है। कुछ विद्वान् सभी संस्करणों को अप्रामाणिक मानते हैं जबकि कुछ लघु एवं लघुतम संस्करणों की प्रामाणिकता स्वीकार करते हैं वस्तुतः रासो का मूल रूप अब उपलब्ध नहीं है, फिर भी अन्य संस्करणों की अपेक्षा लघु एवं लघुतम संस्करण मूल रूप के अधिक समीप माने जा सकते हैं। जो लोग वृहत् संस्करण को ही सर्वथा प्रामाणिक मानते हैं या यह मानते हैं कि चंद नाम का कोई हुआ ही नहीं तथा उसने पृथ्वीराज रासो नाम का कोई ग्रन्थ लिखा ही नहीं, वे यथार्थ से बहुत दूर हैं। अलग-अलग स्थानों में इसके इतने अधिक पाठ-भेदों एवं विभिन्न संस्करणों का मिलना ही यह सिद्ध करता है कि इस ग्रन्थ की रचना १६वीं शती से बहुत पूर्व हो चुकी थी, अन्यथा एकाएक इसका इतना विकास, प्रसार एवं रूपान्तरण संभव नहीं था। फिर भी सभी संस्करणों में बिना किसी अपवाद के चंदवरदायी को ही इसका रचयिता माना गया है, अतः इसमें तो कोई संदेह नहीं कि मूल रासो चंद द्वारा ही लिखा गया था, यह दूसरी बात है कि परवर्ती कवियों ने भी इसमें पर्याप्त प्रक्षेप कर दिया है। ऐसी स्थिति में हमें जैसा कि डा० शंभूनाथ सिंह ने प्रतिपादित किया है, इसे एक विकसनशील काव्य के रूप में स्वीकार करना चाहिए।

रासो की ऐतिहासिकता पर लगभग एक शताब्दी से बहुत बड़ा वाद-विवाद चलता आ रहा है, पर अभी तक इसका अंतिम समाधान नहीं हो पाया है। कर्नल टाड ने इसे ऐतिहासिक ग्रन्थ मानकर इसका अंग्रेजी में अनुवाद करना आरंभ किया था, किन्तु १८७५ ई० में डा० बूलर को काश्मीर में कवि जयानक द्वारा संस्कृत में रचित 'पृथ्वीराज विजय' काव्य उपलब्ध हुआ, जिससे तुलना करने पर पृथ्वीराज रासो का इतिवृत्त पर्याप्त अनैतिहासिक सिद्ध हुआ। फलतः डा० बूलर ने इसे अप्रामाणिक घोषित किया। तदनन्तर पं० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा ने ऐतिहासिक

दृष्टि से रासो पर आक्षेपो की एक लम्बी सूची प्रस्तुत की, जिसके अनुसार इसमे चौहानो की उत्पत्ति व वंशावली, पृथ्वीराज की माता का नाम, गुजरात के राजा भीमदेव के द्वारा पृथ्वीराज के पिता के वध की घटना, पृथ्वीराज के द्वारा ग्यारह वर्ष से लेकर छत्तीस वर्ष की आयु तक चौदह राजकुमारियो से विवाह करना, पृथ्वीराज को अनगपाल द्वारा दिल्ली का राज्य प्रदान करना, सयोगिता-स्वयवर सम्बन्धी घटनाएँ, गजनी मे पृथ्वीराज का वाण-वेध की घटना, सभी सन-संवत् आदि सामग्री इतिहास-विरुद्ध सिद्ध होती है। प० मोहनलाल विष्णुलाल पंड्या ने आनद स'वत् की कल्पना करके सन्-सवतो सम्बन्धी आक्षेप के निराकरण का प्रयास किया, किन्तु वह बहुत सफल नही हुआ। अस्तु, ओझाजी के अनुसार यह ग्रन्थ लगभग १५५० ई० के आस-पास रचित सिद्ध होता है।

ओझाजी के आक्षेपो के निराकरण एव रासो की ऐतिहासिकता के स'रक्षण के क्षेत्र मे सर्वाधिक स्तुत्य कार्य मुनि जिन विजय एव डा० दशरथ शर्मा ने किया। मुनि जिन विजय ने 'पुरातन प्रबन्ध स ग्रह' (लिपिकाल सन् १४४१ ई०) मे दिये गये 'पृथ्वीराज प्रबन्ध' की ओर विद्वानो का ध्यान आकर्षित किया जिसमे रासो के कथानक के साराश के साथ-साथ उसके चार छन्द भी उद्धृत किये गये हैं तथा इनमे से तीन छन्द रासो के वर्तमान स स्करणो मे भी मिल जाते है। मुनिजी के विचार से पृथ्वीराज प्रबन्ध मूलत १२९० वि० की रचना है अत पृथ्वीराज रासो का इससे पूर्व ही लिखा जाना सम्भव है। डा० दशरथ शर्मा ने एक ओर 'पुरातन प्रबन्ध-स'ग्रह' को आधार बनाते हुए तथा दूसरी ओर रासो के लघु स स्करण को लेकर ओझाजी के निष्कर्षों का प्रतिवाद पूरी दृढता से किया। उन्होने प्रमाणित किया कि ओझाजी के आक्षेप वृहत् स स्करण पर ही लागू होते हैं, लघु स स्करण पर नही। लघु स'स्करण मे केवल दो ही घटनाएँ ऐसी मिलती हैं जिन्हें इतिहास-विरुद्ध कहा जा सकता है, एक सयोगिता से विवाह की तथा अन्य गजनी मे वाण-वेध की। डा० शर्मा ने इन घटनाओ के भी ऐतिहासिक होने की सभावना पर बल दिया। साथ ही उन्होने भाषा की दृष्टि से भी लघु सस्करण पर विचार करते हुए प्रतिपादन किया कि मूल रासो अपभ्रश मे लिखा गया था तथा लघु सस्करण की भाषा किंचित् परिवर्तित हो गयी है फिर भी अपभ्र श के पर्याप्त निकट पडती है। इस प्रकार डा० शर्मा लघु सस्करण को पूर्णतः प्रामाणिक न मानते हुए भी उसे मूलरूप के पर्याप्त अनुरूप सिद्ध करते हैं।

इधर डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी एव डा० माता प्रसाद गुप्त ने भी इस क्षेत्र मे नया प्रयास किया है। डा० द्विवेदी केवल उन्ही सर्गों को प्रामाणिक मानते है। आरम्भ शुक-शुकी सवाद से हुआ है। इसी आधार पर उन्होने अपने द्वारा सपादित 'सक्षिप्त पृथ्वीराज रासो' मे इन सात सर्गों को स्थान दिया है —(१) आरम्भिक सर्ग (२) इछिनी का विवाह (३) शशिव्रता का विवाह (४) तोमर पाहार का

शहाबुद्दीन को पकडना (५) सयोगिता का विवाह (६) कैमास वध (७) गोरी वध। डा० द्विवेदी के अनुसार इन सर्गों की भाषा-शैली मे भी एकरूपता, व्यवस्था एव सहज प्रवाह मिलता है। दूसरी ओर डा० माता प्रसाद गुप्त ने लघु एव लघुतम सस्करण की विभिन्न प्रतियो के आधार पर पाठ-विज्ञान के नियमो के अनुसार पृथ्वीराज रासउ का संशोधित सस्करण प्रस्तुत किया है, जिसे उनके विचार से मूल रूप का निकटतम पाठ माना जा सकता है। पर साथ ही वे इस निष्कर्ष पर भी पहुँचते हैं कि "रासो पृथ्वीराज के समकालीन किसी कवि की रचना नही हो सकती। यह रचना चन्द्र के नाम पर किसी अन्य व्यक्ति द्वारा की हुई है। वह अन्य व्यक्ति कौन था, यह जानने के लिए हमारे पास कोई साधन इस समय नही है ?"[1] इसके रचनाकाल के सम्बन्ध मे उनका मतव्य है—'सभी दृष्टियो से पृथ्वीराज रासो की रचना स० १४०० के लगभग ही हुई मानी जा सकती है, इससे पूर्व नही।'

इस प्रकार डा० गुप्त के निष्कर्षो से हम उसी स्थिति पर पहुँच जाते हैं जो बहुत पूर्व श्री ओझाजी ने उत्पन्न की थी अर्थात् रासो चन्द की रचना नही है, परवर्ती (=अप्रामाणिक) रचना है। अन्तर केवल इतना पडा कि डा० गुप्त ने इसके रचनाकाल को स० १६०० के स्थान पर स १४०० को मान लिया है।

हमारे विचार से रासो निश्चित रूप से चन्दवरदायी की ही रचना है और पृथ्वीराज रासो का जो पाठ डा० माताप्रसाद गुप्त ने प्रस्तुत किया है, वह यदि प्रामाणिक है (या मूल रूप के निकट है) तो इसमे भी कोई सदेह नही रहता कि चन्दवरदायी एक ऐसे ऐतिहासिक व्यक्ति एव सफल कवि है जिन्हे पृथ्वीराज से भिन्न नही किया जा सकता। यदि चन्दवरदायी ने रासो जैसा ग्रन्थ न लिखा होता तो उसके २००-३०० वर्ष बाद कोई अन्य कवि रासो जैसी प्रौढ रचना लिखकर उसका यश चन्द को अर्पित करने का औदार्य्य प्रदर्शित नही कर पाता। नकल सदा असल की ही होती है, असल के अभाव मे किसी नकल के अस्तित्व की कल्पना नही की जा सकती। यदि कहा जाय कि किसी कवि ने धन-लोभ से या अपनी रचना को प्रसिद्ध करने के लिए ऐसा कर लिया होगा तो इस तर्क से भी यही सिद्ध होता है कि चौदहवी शती मे कवि चन्द की इतनी प्रसिद्धि थी कि जिसके नाम को अपनाने का लोभ एक परवर्ती कवि ने किया, पर यहाँ भी यह प्रश्न उठता है कि चन्द को ऐसी प्रसिद्धि किस आधार पर प्राप्त हुई जबकि पूर्व पक्ष के अनुसार उसने रासो लिखा ही नही तथा उसकी कोई अन्य कृति भी नही मिलती। अस्तु, एक ओर यह मानना कि चन्द ने कोई काव्य नही लिखा और दूसरी ओर यह मानना कि उसकी प्रसिद्धि को देख

---

१. 'पृथ्वीराज रासउ . डा० माताप्रसाद गुप्त पृ० १६८।

कर ही परवर्ती कवि ने उसके नाम पर अपनी रचना को प्रसिद्ध कर लिया—दो परस्पर-विरोधी मान्यताएँ हैं। वस्तुतः चन्द की प्रसिद्धि का आधार उसका रासो ही है—अत दोनो को भिन्न नही किया जा सकता।

'पुरातन प्रवन्ध-सग्रह मे, जिसका लिपिकाल पन्द्रहवी शती है तथा जिसकी मूल-रचना इससे भी कम से कम डेढ-दो शताब्दी पूर्व हुई थी, पृथ्वीराज रासो के साराश के साथ-साथ 'चन्द बलिद्दिक (वरदाई) कवि और उसके छन्दो को भी दिया गया है, जिससे चन्द के द्वारा रासो-रचना की पुष्टि सम्यक् रूप मे होती है। डा० माताप्रसाद गुप्त ने पुरातन प्रवन्ध-सग्रह मे उद्धृत चारो छन्दो मे भी पारस्परिक विरोध दिखाया है क्योकि एक छन्द मे कैमास जहाँ लोभी और लम्पट कहा गया है वहाँ दूसरे मे से उसे व्यास एव वशिष्ठ जैसा विद्वान भी माना गया है। हमारे विचार से एक ही व्यक्ति विद्वान होने के साथ-साथ लोभी व लम्पट भी हो सकता है—जैसा कि रावण को माना जाता है—अत केवल उसी के आधार पर इन छन्दो मे विरोध सिद्ध करते हुए इन्हें भी रासो से असम्बद्ध बताना उचित नही।

'पुरातन प्रवन्ध-सग्रह की कथा-वस्तु का स्थूल ढाचा वही है जो रासो के लघुतम सस्करणो मे मिलता है किन्तु सूक्ष्म विवरणो मे कही-कही अन्तर अवश्य है; जैसे—वर्तमान सस्करण मे कैमास को दो बाणो से मार डालने की बात कही है जब कि प्रवन्ध-सग्रह के अनुसार पृथ्वीराज एक ही बाण छोडता है जिससे कैमास जीवित रह जाता है। किन्तु इस प्रकार के विवरणो मे अन्तर होना यही सिद्ध करता है कि रासो के वर्तमान सस्करणो से पूर्व भी एक ऐसा सस्करण विद्यमान था जिसमे चौदनहवी शती तक थोडा-बहुत अन्तर आ गया था। अस्तु, यह अन्तर रासो की प्राचीनता के पक्ष मे पडता है।

डा० गुप्त का कथन है—'रचना कथा-नायक की समकालीन नही हो सकती है क्योकि जैसा हमने अन्यत्र देखा है उसके प्रस्तुत सस्करण के पाठ मे भी कुछ न कुछ इतिहास-असम्मत विवरण हैं, उसमे अनेक ऐसे शब्द आते है जो लगता है कि उत्तरी भारत की बोलचाल की भाषा मे सम्मिलित हो गये थे और उसकी भाषा भी 'प्राकृत पैंगल मे सकलित हम्मीर के सम्बन्ध के छन्दो (रचना काल स० १३५८ अर्थात् हम्मीर की देहान्त तिथि) और 'रणमल्ल छन्द (रचना-काल स० १४५४ के बीच की प्रतीत होती है। इस प्रकार सभी दृष्टियो से पृथ्वीराज रासो की रचना स०१४०० के लगभग हुई मानी जा सकती है, इससे पूव नही।[२] इस प्रकार डा० गुप्त ने रासो को चन्दपरवर्ती मानने के दो ही आधार बताये हैं—(१) इतिहास-असम्मत विवरण (२) भाषा। इनमे ऐतिहासिक विवरणो के सम्बन्ध मे तो स्वय उन्ही का निष्कर्ष इसी

---

२. पृथ्वीराज राउस : डा० माताप्रसाद गुप्त पृ० १६८।

पुस्तक के अन्य अध्याय मे इस प्रकार है—"रासो सम्पूर्ण रूप मे ऐतिहासिक रचना नही है, उसके अनेक उल्लेख या विस्तार अवश्य ही कल्पना-प्रस्तुत है, और इतिहास से समर्थित नही है। फिर भी अपने व्यापक रूप मे वह एक ऐसे जिम्मेदार कवि की रचना प्रतीत होती है जिसने हिन्दू-सूत्रो से प्राप्त सामग्री का यथेष्ठ सावधानी के साथ उपयोग किया और कथा-नायक के समय के बाद की किसी घटना अथवा किसी व्यक्ति का घाल-मेल कथा मे नही किया… निस्सदेह वह पृथ्वीराज का समकालीन तो नही था किन्तु बहुत बाद का भी नही था और उसने रचना यद्यपि काव्य की दृष्टि से अधिक और इतिहास की दृष्टि से कम की, फिर भी सामग्री का उपयोग जिम्मेदारी और कुशलता के साथ किया है।[१]

इस सम्बन्ध मे यहाँ अधिक विचार के लिए अवकाश नही है फिर भी सक्षेप मे हमारा निवेदन इतना ही है कि रासो का रचयिता यदि सचमुच ही इतिहास के प्रति इतना सावधान होता तो उसमे अनैतिहासिक विवरण—जो थोडे बहुत आये हैं—आते ही नही। पृथ्वीराज परवर्ती व्यक्तियो एव घटनाओ का न आना किसी परवर्ती कवि की विशेष सावधानी का काम नही है—क्योकि १४ वी शताब्दी मे ऐतिहासिकता का आज जैसा महत्व नही था जो इतनी सावधानी बरती जाती—अपितु कवि की समकालीनता का सहज स्वाभाविक परिणाम है। विवरणो मे थोडी-बहुत अनैतिहासिकता एक समकालीन कवि मे भी रह सकती है, जैसा कि बाण के 'हर्ष-चरित' मे है। फिर मूल पाठ अभी अनुपलब्ध है। इसकी भाषा-शैली १२ वी शती के अन्य रासो काव्यो—भरतेश्वर बाहुबली रास, आदि—से कुछ प्राचीन ही प्रतीत हो सकती है, परवर्ती नही है तथा थोडी-बहुत परवर्ती लिपिकारो द्वारा परिवर्तित भी हो सकती है, अतः इन कारणो के आधार पर रासो के रचयिता को यशस्वी चन्द से भिन्न एव परवर्ती मानना युक्ति-युक्त नही है। परवर्ती कवियो द्वारा उसमे शोधन, परिवर्द्धन एव क्षेपक होने की ही सम्भावना एक सीमा तक अवश्य स्वीकार की जा सकती है। अतः रासो मूलत पृथ्वीराज के समकालीन चन्दवरदायी की रचना है, इस विश्वास से डिग जाने की अभी आवश्यकता नही है।

काव्य-सौष्ठव—वस्तु-वर्णन, चरित्र-चित्रण, भाव-व्यञ्जना एव शैली की दृष्टि से भी पृथ्वीराज रासो एक उच्चकोटि की रचना है। कवि ने प्रसगानुसार विभिन्न विषयो—प्रकृति, नगर, बाजार, राज-सभा, रग-महल आदि—का वर्णन विस्तार से अलकृत शैली मे किया है। विभिन्न पात्रो का जिनमे तीन प्रमुख है—पृथ्वीराज, चन्द (स्वय), सयोगिता की भी चारित्रिक विशेषताओ का उद्घाटन सम्यक् रूप से किया गया है। पृथ्वीराज को जहाँ एक पराक्रमी, उत्साही एव दृढ योद्धा के रूप मे चित्रित

१. वही, पृ० ११३।

किया गया है, वहाँ चन्दवरदायी को एक ऐसे साहसी एव गम्भीर वक्ता के रूप मे प्रस्तुत किया है जिनकी वाणी विषम परिस्थितियो मे भी सत्य को कहने से नही चूकती। पृथ्वीराज के राजपूती गौरव एव आदर्श की झलक उस समय देखी जा सकती है जब कि कन्नौज मे संयोगिता का पाणिग्रहण कर लेने के अनन्तर उसके साथी सैनिक उसे परामर्श देते है कि वह अपनी नव-विवाहिता को लेकर दिल्ली प्रस्थान करे तब तक वे लोग किसी प्रकार जयचन्द की विशाल सेना का मुकाबला करते हुए उसे आगे रोकने का प्रयास करेगे। पृथ्वीराज का आत्म-गौरव इस प्रस्ताव को स्वीकार नही कर सका। भला, उसके साथी लडें और वह चुपचाप दिल्ली प्रस्थान कर जाय! जिसने बडे बडे हिन्दू एव तुर्क (सेनापतियो) को सरक्षण दिया, वही आज इस तरह अपने-आपको अपने ही सेना-नायको के सरक्षण मे सौप दे? नही, उसका उत्तर है—

मति घट्टी सामत मरण हुउ मोहि दिखावहु।
जम चीठी विणु कदन होइ जउ तुमउ वतावहु।
तुम गजउ भर भीम तास गव्वह भय मत्ता।
मइ गोरी साहव्वदीन सरवर साहत्ता।
मुहि सरणहि हीदू तुरक तिह सरणागत तुमकरहु।
बूझिअइ न सूर सामत ही इतउ वोझ अपन्न धरहु॥

अर्थात् 'हे सामन्तो! क्या तुम्हारी मति घट गई है जो मुझे इस तरह मृत्यु का हौआ दिखा रहे हो! क्या यम के परवाने के विना कभी मौत आ सकती है? ठीक हैं, तुमने भट्ट भीम को नष्ट किया जिसके गर्व से तुम मदमत्त हो गये हो, पर मैंने भी गोरी शहाबुद्दीन को सरवर मे साधा (वश मे किया) है। जिसकी शरण मे हिन्दू तुर्क (सब) हैं, उसी को आज तुम शरण देना चाहते हो? तुम शूर सामन्त होकर भी नही समझते हो, (कि मैं इस प्रस्ताव को कैसे स्वीकार कर लूगा।) अपना यह भार (एहसान) अपने पास ही रखो।

उपर्युक्त अश से जहाँ नायक के आत्म-गौरव की व्यजना हुई है वहाँ उसमे उस राजपूती अह की भी पूरी झलक मिलती है, जिसके कारण ये नरेश अपने ही सामन्तो को मौके बे मौके, छोटी सी बात पर दुत्कार देते थे। सामन्तो ने जो प्रस्ताव रखा था, वह उनकी सच्ची स्वामि-भक्ति का ही द्योतक था, भले ही पृथ्वीराज उसे स्वीकार न करते किन्तु इसे इतनी दुत्कार के स्थान पर ऐसे शब्दो के द्वारा भी टाला जा सकता था जिससे कि सामन्तो के सद्भावपूर्ण हृदय को ठेस न लगती। पर उस युग के राजपूती नरेशो मे इस नीति का अभाव था और सभवत यही कमी उनके पतन का सबसे बडा कारण बनी। पृथ्वीराज रासो मे भी यह स्पष्ट रूप मे दिखाई देता है कि पृथ्वीराज का पतन उसकी अपनी ही तीन महत्त्वपूर्ण गलतियो के कारण

होता है एक कैमास जैसे साथी को छोटी सी बात पर मार देना, दूसरे, जयचन्द जैसे शक्तिशाली नरेश के राजसूय यज्ञ का विरोध करना और तीसरे सयोगिता के साथ विलास मे इस प्रकार लीन हो जाना कि राज-काज की सुध भी भूल जाना। पृथ्वीराज सभवत अत्यधिक आत्म-विश्वासी होने के कारण इन भूलो की परवाह नही करते थे, किन्तु कवि चन्दवरदायी इनके परिणाम से भली भाँति परिचित थे, उन्होने अपने स्वामी को समझाने का प्रयास भी बार-बार किया, जैसे कैमास के वध के समय उन्होने स्पष्ट कह दिया था—'कइवास विआस विसटठ् विणु मच्छि वन्धि बद्धओ मरिसि' (व्याम और वशिष्ट जैसे कैमास के विना तुम मछली की भाति जाल मे बध कर मरोगे !), और इसी प्रकार सयोगिता के मोह-पाश मे आवद्ध हो जाने पर उसे चेताते हुए कहा था—'गोरी रत्तउ तुव धरा तु गोरी अनुरत्त' अर्थात् शहाबुद्दीन गोरी तेरी धरा पर अनुरक्त हो रहा है और तू गोरी (सयोगिता) मे अनुरक्त हो रहा है।

यद्यपि इस काव्य का नायक पृथ्वीराज है किन्तु व्यक्तित्व की गम्भीरता एवम् चारित्रिक गरिमा की दृष्टि से उसकी अपेक्षा चन्द अधिक प्रभावशाली प्रतीत होते हैं, वे सम्राट के अधीन है किन्तु ऐसा औपचारिक रूप मे ही है, सामान्यतः तो वे एक ऐसे फक्कड, ओजस्वी, स्पष्टवक्ता, गम्भीर, दूरदर्शी एव कल्पनाशील कवि के रूप मे दिखाई देते है, जिनका हृदय और मस्तिष्क किसी की भी परतन्त्रता एव अधीनता को स्वीकार नही करता। पृथ्वीराज के स्वभाव की तो वे परवाह ही नही करते, जयचन्द की समस्त शक्ति और उसके सारे वैभव को देखकर भी वे तनिक विचलित नही होते। कन्नौज मे पहुँचकर वहा की पनहारियो, बाजारो, राज-द्वार, राज्य-सभा एव राजमहल के अद्भुत सौंदर्य एव वैभव को देखकर वे चकित होते है, पर मुग्ध नही। पर सारे कन्नौज मे एक स्थल अवश्य ऐसा है जहाँ कवि पहुँचकर अपने आपको मुग्ध, विभोर एव धन्य समझे बिना नही रहता, वह स्थल है, कवि दरबार ! वहाँ उसे अनुभव होता है कि वह आज सच्चे काव्य-मर्मज्ञो के बीच पहुचा है ! कन्नौज के कवि-समाज मे प्रतिष्ठा पाकर वह कदाचित् जीवन मे पहली बार अपने कवि-जीवन की चरम सार्थकता का अनुभव करता है और यहाँ तक सोचने लगता है कि यदि यह अवसर उसे न मिलता तो उसकी वैसी ही स्थिति होती जैसी स्वर्ण के अभाव मे दीन (विच्छिन्न) नग की होती है ! उसके शब्दो मे—

कवि देषत कवि कउ मन रत्तो।
न्याय नयर कनवज्जि पहुत्तो।
कवि अग्गहि अगीकित हीनउ।
हेम विना जिम नग्ग दीनउ॥

कन्नौज मे पृथ्वीराज को अपने ताम्बूल-वाहक के रूप मे रखते हुए उसे तथा

अपने आपको जयचन्द के समक्ष सुअवस्थित एव संयमित बनाये रखने का कार्य भी चन्द ने बडी कुशलता से निर्वाहित किया। परिस्थितिवश एक बार इस ताम्बूल-वाहक को जयचन्द की सेवा मे भी ताम्बूल अर्पित करने का कार्य करना पडा। ऐसी स्थिति मे पृथ्वीराज कही कुछ और न कर बैठे, इसे भाँप कर चन्द ने पहले ही सकेत मे कहा—

थिरु रहहि थवाइत वज्र कर छडि सकारह पिनुक रहि।
जिहि असी लष्ष पल्लाणिहि तिहि पान देहि दिठ हथ्थ गहि॥

अर्थात् 'हे ताम्बूल-वाहक! तू स्थिर रह और वज्र कर को छोडकर एक क्षण सत्कार मे रह। जिसके अस्सी लाख (घोडे) पलाने जाते है, उसे तू दृढ हाथो से ग्रहण कर पान दे!'

चन्द के इस सकेत के बावजूद पृथ्वीराज से भली-भाँति पान देते नही बनता, उसकी चेष्टाओ को देखकर अन्तत जयचन्द जान जाते हैं कि यह ताम्बूल-वाहक कोई और नही, पृथ्वीराज ही है। इस प्रकार उनका रहस्य उद्घाटित हो जाता है। अस्तु, इसमे कोई सन्देह नही कि समय-समय पर चन्द ने अपनी सयम शक्ति, व्युत्पन्न मति एवं दूरदर्शिता का परिचय सम्यक् रूप से दिया है, भले ही कथा-नायक उसका लाभ न उठा पाया हो।

पृथ्वीराज एव चन्द की दर्पोक्तियाँ जहाँ सामान्यतः वीर-रस की व्यजना करती हैं, वहाँ सयोगिता का प्रसग सौन्दर्य, प्रेम और विरह की मार्मिक झाँकियाँ प्रस्तुत करता है। सयोगिता के महज सौन्दर्य, उसकी यौवनकालीन छटा उसकी अनुरागपूर्ण चेष्टाओ एव उसके हृदय की कोमल भावनाओ से परिपूर्ण उक्तियो के प्रस्तुतीकरण मे कवि ने पूर्ण सहृदयता, मनोवैज्ञानिकता एव मार्मिकता का प्रमाण दिया है। उसकी प्रथम झलक ही पर्याप्त मनोमुग्धकारी है—

जव अकुर करि पानि चरावति वच्छ मृगु।
मनु मानिनि मिस इदु आनदइ देखि दृगु।
सहि सहचरिति चरत्त परस्पर वत्तु किअ।
सुभ सजोगि सजोग जानुह मनमथ्थ किअ॥

'वह यवाङ्कुरो को हाथ मे लेकर मृग-शावको को खिला रही थी। मानो उस मनिनी के मिस इंदु ही उन्हे देखकर आनन्दित हो रहा था। साथ की सखियाँ और सहचरियाँ कह रही थीं, ऐसी शुभा सयोगिता के लिए तो कोई कामदेव ही (वर) होना चाहिए।

मृग-शावको के साथ खेलने वाली यह सयोगिता ऐसी अभिमानिनी एवं अनुरागिनी है कि कुटुम्ब के लोगो के द्वारा बार-बार समझाये जाने पर भी पृथ्वीराज को वरण करने के निश्चय से जरा भी नही डिगती! वह स्पष्ट शब्दो मे घोषित कर देती है—'कइ वहि गगहि सचरउ कइ पानि गहउ पृथ्वीराज!' (या तो गगा मे वह जाऊँगी या पृथ्वीराज का ही पाणिग्रहण करूँगी!)

वह अपने प्रणय-व्रत मे इतनी दृढ है कि यदि उस जीवन मे भी उसे पृथ्वीराज न मिले तो न सही, अगले जीवन मे ही सही, पर उसके प्राणेश्वर सदा वही दिल्लीश्वर रहेगे—"··· अन्य प्राणेऽथवा प्राणे प्राणेश दिल्लीश्वर'

पर इसी सयोगिता को जब भ्रम हो जाता है कि उसका आराध्य नायक युद्ध से विमुख होकर प्रेमिका के पास लौट रहा है तो एक सच्ची वीराङ्गना की भाँति उसे ग्लानि होती है, और वह यह कहे विना नही रहती—'जिहि प्रिय तन अगलि फिरइ तिहि प्रियजन कहा कज्ज ! (जिस प्रिय की ओर लोग अगुली उठावे उस प्रियजन से क्या काम !)

अस्तु, हम देखते है कि 'पृथ्वीराज रासो, बावजूद अपनी सारी अनैतिहासिकता एव अप्रामाणिकता के एक उच्चकोटि का महाकाव्य है, जिसमे उच्च पात्रो, उदात्त विचारो एव गभीर भावो की अभिव्यक्ति मार्मिक रूप मे हुई है। इसके पात्र जहाँ मध्यकालीन सामंत वर्ग की एक जीवित तस्वीर प्रस्तुत करते है, वहाँ इसमे व्यजित भावनाएँ उस युग के आदर्शो एव लक्ष्यो को पूर्ण सच्चाई के साथ व्यक्त करते हैं। साथ ही इसका छद-वैविध्य—दोहा, कवित्त, रासा, मुडिल्ल, पद्धडी, गाथा, अडिल्ल, चौपाई, सारिका, भुजग, आदि का प्रयोग—पूर्व-वर्ती एव परवर्ती काव्य-शैली के विकास-क्रम को भी भली-भाति स्पष्ट करता है। अत विषय-वस्तु, भाव-व्यजना एव शैली—तीनो की दृष्टि से यह काव्य अपने युग के आदर्शों, भावो एवं परम्पराओ का एक ऐसा सरस कलात्मक इतिहास कहा जा सकता है, जिससे सन्-सवतो का अक-गणित भले ही असत्य हो किन्तु भावनाओ की सूक्ष्म रेखाएँ निश्चित ही यथार्थ और सत्य हैं।

रासो पर यह आक्षेप भी लगाया है कि इसका कवि अपने युग को कोई स देश नही देता, किन्तु वस्तुत· ऐसा नही है। उन परिस्थितियो मे कवि जो स देश दे सकता था, वह उसने अवश्य दिया है। पृथ्वीराज के वैभव-काल मे वह उसे सदा सुमार्ग पर चलाने का प्रयास करता रहा तो उसके कैद हो जाने पर वह समस्त क्षत्रियो को तलवार उठाने के लिए आमन्त्रित करते हुए कहता है—

प्रथिराज देव दूवन गहउ रे छत्रिअ कर षग्ग गहु न !

"क्षत्रियो ! देव पृथ्वीराज को दुर्जन ने पकड लिया है, क्यो नही तलवार उठाते !"

हमे लगता है कवि की यह पुकार उसके काव्य की अन्तिम पक्ति है। इसके बाद अगले अध्याय मे प्रसग जोड़ा गया है वह संभवत. परवर्ती कवि द्वारा—या कवि के पुत्र द्वारा रचित है।

अस्तु, राष्ट्र-पतन की विषम बेला मे समस्त क्षत्रियो के द्वारा एक साथ तल-

वार उठाने के सदेश से बढकर कोई और सदेश क्या हो सकता था । काश उस युग के क्षत्री इस सदेश को ग्रहण कर पाते ।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि हिन्दी के ऐतिहासिक रासो काव्यो मे 'पृथ्वीराज रासो' का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। वह कथावस्तु की नियोजना, चरित्र-चित्रण की स्वाभाविकता, भावो की उत्कटता, शैली की उत्कृष्टता एव उद्देश्य की उच्चता की दृष्टि से अपने युग का अनूठा काव्य है। कदाचित् इसी काव्य के प्रभाव से आगे चलकर मध्यकाल मे ऐतिहासिक रासो-काव्यो की रचना भारी सख्या मे हुई, जिनकी चर्चा यहाँ सभव नही है, जैसा कि हिन्दी-साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास मे स्पष्ट किया गया है, मध्यकाल मे राजस्थान के राज दरबारो मे अनेक दर्जन ऐसे काव्य लिखे गये जो कि ऐतिहासिक रासो-काव्य परपरा मे आते हैं। वस्तुत. आदिकाल मे तो इस परपरा का प्रवर्त्तन ही हो पाया था, पूर्ण विकास तो मध्यकाल मे ही हुआ है।

४. महाराष्ट्रीय सन्त-काव्य एवं नामदेव

हिन्दी मे सन्त-काव्य परम्परा के प्रचलन के लगभग दो शताब्दी पूर्व ही महाराष्ट्र मे सत-काव्य की रचना आरम्भ हो गई थी। जैसा कि हम आगे स्पष्ट करेगे, हिन्दी की सत-काव्य-परम्परा वस्तुत इस महाराष्ट्रीय परम्परा की ही एक शाखा है, या उसी का एक विकसित रूप है। महाराष्ट्र मे इस परम्परा के आदि कवि मुकुन्दराज (११२७-१२०० ई०), माने जाते हैं जिन्होने सन् ११९० मे मराठी का पहला काव्य ग्रन्थ 'विवेक सिन्धु' लिखा था। इसमे गुरु के महत्त्व, ब्रह्म, जीव, माया, पच महाभूत, सगुण, निर्गुण, तत्त्वमसि आदि विषयो का प्रतिपादन ऐसी शैली मे किया गया है जिसे जन-साधारण भी समझ सके। मुकुन्दराज का एक अन्य ग्रन्थ 'परमामृत' भी उपलब्ध है, जिसमे अद्वैत की अनुभूति का प्रकाशन है। जैसा कि प्रो० देशपाडे ने लिखा है—'इन दोनो ग्रन्थो मे शाकर अद्वैत, योगानुभव और सगुणोपासना का प्रतिपादन'[६] किया गया है। वैसे मुकुन्दराज स्वय नाथ सम्प्रदाय मे दीक्षित थे किन्तु उन्होने अपने ग्रन्थो मे ऐसे विचारो का प्रतिपादन किया जो सत-मत के अधिक अनुरूप हैं। अत मुकुन्दराज को हम नाथ-पथ संत मत के बीच की कडी मान सकते है।

मुकुन्दराज के देहात-काल के कुछ पूर्व ही महात्मा चक्रधर (११९४-१२७४ ई०) का आविर्भाव हुआ, जिन्होने 'महानुभाव पथ' की स्थापना करते हुए अपने क्रान्तिकारी विचारो का प्रचार किया। उन्होने विविध देवी-देवताओ की उपासना के स्थान पर परब्रह्म परमेश्वर की ही उपासना पर बल दिया पर साथ ही वेदो और अद्वैतवाद को अमान्य घोषित किया। जाति-पाँति और छुआछूत के विचारो का भी उन्होने पूरी शक्ति से खण्डन किया। इस प्रकार उन्होने धर्म-क्षत्र मे एक नया दृष्टि-कोण प्रस्तुत किया जो परवर्ती सतो के द्वारा भी मान्य हुआ। फिर भी सन्त-मत को सम्यक् प्रतिष्ठा का पूर्ण श्रेय चक्रधर को नही दिया जा सकता। इसका कारण यह है कि इन्होने उस अवतारवाद को अधिक महत्त्व दिया जो निर्गुण-उपासना की अपेक्षा सगुण-भक्ति के अधिक समीप पडता है। इसलिए महानुभाव-सम्प्रदाय के कवियो ने

---

६. मराठी का भक्ति-साहित्य . भी० गो० देशपाडे, पृ० १५।

अपने काव्यों—वत्सहरण (१२७८), रुक्मिणी-स्वयवर, (१२९२), शिशुपाल वध (१३०६) आदि—मे पौराणिक आधार पर लीलाओ का गुण गान किया है। वस्तुत. मुकुन्दराज एव चक्रधर को सन्त-परम्परा की पृष्ठ भूमि तैयार करने का ही अधिक श्रेय है, उसकी सम्यक् प्रतिष्ठा तेरहवीं शती के अन्तिम चरण मे वारकरी सम्प्रदाय के सन्तो के द्वारा ही हुई। सम्भवत. यही कारण है कि प्रारम्भ के इन दोनो कवियो के साथ 'सन्त' विशेषण का प्रयोग नही किया जाता।

वारकरी सम्प्रदाय के मूल प्रवर्त्तक तो सन्त पुण्डलिक माने जाते हैं किन्तु उनके सम्बन्ध मे ऐतिहासिक सामग्री का सर्वथा अभाव है। वस्तुत. पुण्डलिक के साथ इस प्रकार के चमत्कार-पूर्ण प्रसग जुड गये हैं जिसमे वे एक ऐतिहासिक व्यक्ति के स्थान पर पौराणिक ही अधिक प्रतीत होते है। ऐतिहासिक दृष्टि से इस सम्प्रदाय के प्रथम उन्नायक सन्त ज्ञानेश्वर (१२७५-१२९६ ई०) सिद्ध होते हैं। इन्होने गीता की प्रसिद्ध टीका 'भावार्थ दीपिका' (ज्ञानेश्वरी'), अमृतानुभव, हरिपाठ के अभग, चागदेव पैसठी और सैकडो फुटकर अभगो की रचना की, जिनमे इनके दार्शनिक विचारो एव भक्ति की अनुभूति की अभिव्यक्ति हुई है।[७] ज्ञानेश्वर के ही साथ-साथ नामदेव (१२७०-१३५० ई०), निवृत्तिनाथ (१२७३-१२९३), सोपानदेव (१२७८-१२९७), मुक्ताबाई (१२७९-१२९७) प्रभृति सन्त हुए जिन्होने अपनी अलौकिक अनुभूतियो को साहित्यिक माध्यम से प्रकाशित किया। यहाँ यह उल्लेखनीय है, कि इनमे नामदेव को छोडकर शेष तीनो ज्ञानेश्वर के भाई-बहन थे जिन्होने अपना समस्त जीवन आध्यात्मिक साधना मे ही व्यतीत किया। नामदेव भी ज्ञानेश्वर के समाधि-काल तक उनके साथ ही रहे किन्तु बाद मे वे धर्म का प्रचार करते हुए पंजाब मे चले गये तथा वही अठारह वर्ष तक रहे। वस्तुत ज्ञानेश्वर एवं नामदेव ने अपने आकर्षक व्यक्तित्व, दिव्य-चरित्र एव सच्ची भक्ति-भावना से जनता को इस प्रकार मुग्ध कर लिया कि थोडे समय मे ही सारे महाराष्ट्र एव उत्तरी भारत मे भक्ति की बाढ-सी आ गई। वैसे तो आगे चलकर इस क्षेत्र मे और भी कई सम्प्रदाय अवतरित हुए किन्तु महाराष्ट्र का महानुभाव सम्प्रदाय इनमे अग्रणी माना जा सकता है। वह अग्रणी केवल समय की दृष्टि से ही नही, विचारो की दृष्टि से भी कहा जा सकता है। उसने जनता के निम्नतम स्तर के लोगो के हृदय मे भक्ति की लौ प्रज्वलित की, परिणाम-स्वरूप हम इनकी मडली मे गोरा कुम्हार (१२६७-१३०९ ई०), सावता माली (१२५०-१२९५) नरहरि सुनार (१३वी शती), सेनानाई, विसोबा खेचर, राका कुम्हार, वका धेड जैसे सतो को देखते हैं जो जाति और पेशे से निम्न होते हुए भी सतो मे उच्चतम स्थान के अधिकारी हुए। वारकरी सप्रदाय की यह सत-परपरा

---

७. मराठी का भक्ति साहित्य, पृ० ४६।

आगे अठारहवी शती के अंत तक अखंड रूप से चलती रही जिसमे सत्यामल नाथ (१२७८-१३५८ ई०), कवि चोखा (१३७८), कवयित्री कान्होपात्रा (१४वी शती), संत भानुदास (१४वी शती), दामा जी पंत (१४वी शती), नृसिंह सरस्वती (१४०८-१४५८), जनार्दन स्वामी (१५०४-१५७५), दासोपंत देशपांडे (१५५१-१६१५ ई०) संत एकनाथ (१५३३-१५९९ ई०) कवीश्वर मुक्तेश्वर (१५७४-१६४५), संत तुकाराम (१६०८-१६५०), कवयित्री बहिणाबाई (१६२८-१७००), महिपति बोवा तहराबादकर (१७१५-१७९०) प्रभृति संत हुए। प्राय इन सभी ने मराठी मे साहित्य-रचना की है, जिसका विवरण प्रो० भी० गो० देशपांडे की पुस्तक 'मराठी का भक्ति-साहित्य' मे देखा जा सकता है।

जहाँ तक हिन्दी की संत-काव्य परम्परा का सम्बन्ध है, हम वारकरी सम्प्रदाय के इतिहास को दो खण्डो मे बाँट सकते हैं—(१) १४वी शती के अन्त तक (२) १४वी शती के बाद का। इनमे से प्रथम खण्ड के साधको को हिन्दी संत-कवियो के पूर्वज रूप मे स्वीकार किया जाता है जिन्होने विभिन्न स्रोतो से प्राप्त विचार, भाव एवं शैली को नया रूप देकर हिन्दी संत-काव्य परम्परा का मार्ग प्रशस्त किया। सिद्ध एवं नाथ पंथ की जो विशेषताएँ हिन्दी के संत-काव्य मे दृष्टिगोचर होती हैं, वे संभवत महाराष्ट्रीय संतो के माध्यम से ही उसमे आई है। इसलिए जहाँ अन्य स्रोतो से हिन्दी संत काव्य का अप्रत्यक्ष सम्बन्ध है, वहाँ महाराष्ट्रीय सन्त सम्प्रदाय से इसका प्रत्यक्ष सम्बन्ध है। इतना ही नही, हिन्दी सन्त-परम्परा के प्रथम कवि कबीर के आविर्भाव से भी बहुत पूर्व चक्रधर, ज्ञानेश्वर, नामदेव, मुक्ताबाई आदि ने हिन्दी मे ऐसे पदो की रचना की थी, जो शैली की दृष्टि से कबीर के पदो से गहरा साम्य रखते हैं। इन महाराष्ट्रीय सन्तो ने हिन्दी की अपेक्षा मराठी मे अधिक रचना की है, अन्यथा हिन्दी साहित्य के इतिहास मे भी उन्हे उतना ही स्थान दिया जा सकता था जितना कि इन्हे मराठी साहित्य के इतिहास मे प्राप्त है। वस्तुत: विचारधारा, भावना, शैली और भाषा से सम्बन्धित प्राय वे सभी तत्त्व इन कवियो मे मिल जाते है जो परवर्ती सन्तो - कबीर, रैदास, दादू आदि—मे मिलते है। इस तथ्य को अधिक स्पष्ट करने के लिए हम यहा संक्षेप मे महाराष्ट्रीय सन्त-काव्य की उन विशेषताओ की चर्चा करते है जो हिन्दी सन्त-काव्य मे भी प्रमुख रूप मे मिलती है:

(१) **अद्वैतवाद और भक्ति मे सामंजस्य**—वारकरी सम्प्रदाय के सन्तो ने अन्य भक्ति-सम्प्रदायो की भाति अद्वैतवाद का विरोध नही किया, अपितु उन्होने इसे स्वीकार करते हुए बताया कि अद्वैत की 'सच्ची अनुभूति भक्ति के द्वारा ही संभव है। उनके विचार से अद्वैतवाद और भक्ति मे विरोध नही है, अपितु भक्ति की चरम अवस्था ही अद्वैतानुभूति है। सन्त ज्ञानेश्वर ने लिखा है—'जब गुरु की कृपा से ऊषाकाल हो जाता है तो ज्ञान-सूर्य की किरणे आकर पड़ने लगती हैं, तब दृष्टि के सामने भेद-भाव-

रहित एकत्व की सम्पत्ति प्रकट होती है। ऐसी अवस्था मे भक्त जिस दिशा मे देखता है उस दिशा मे केवल मै (ईश्वर) ही दिखाई पडता हूँ। मेरे सिवा उसके कही और कुछ भी नही रहता।'[८] आगे चलकर सन्त एकनाथ ने भी इस सम्बन्ध मे लिखा है—'अद्वैतानुभव के बिना खरी भक्ति सम्भव ही नही है। आर्त, जिज्ञासु और अर्थार्थी भक्त के प्रकार हैं पर जो अभेद भाव से ईश्वर की उपासना करते हैं वे ही श्रेष्ठ भक्त हैं। जिनका देहाभिमान नष्ट हो जाता है जो सब भूतो मे भगवान को देखते हैं, जिनके मन से द्वन्द्व की भावना मिट जाती है वे ही अद्वैतानन्द के पात्र बनते हैं।'[९] अद्वैत और भक्ति का यह समन्वय हिन्दी के सन्त-काव्य मे दृष्टिगोचर होता है, जिसकी विवेचना आगे की जायगी।

(२) **सगुण और निर्गुण में समन्वय**—यद्यपि महानुभाव सम्प्रदाय मे सगुण को निर्गुण की अपेक्षा अधिक महत्त्व दिया गया है किन्तु परवर्ती वारकरी सम्प्रदाय के सन्तो ने ऐसा नही किया। उन्होने ब्रह्म को अनादि, नित्य, ज्ञानमय, अव्यक्त, निर्गुण और सर्वव्यापक माना है पर साथ ही उसके सगुण रूप को भी अस्वीकार नही किया। इनके विचार मे निर्गुण ईश्वर ही सगुण के रूप मे अवतरित होता है। सन्त ज्ञानेश्वर ने निर्गुण और सगुण की इसी एकता को स्वीकार करते हुए अपने एक अभग मे कहा है—हे गोविन्द! मेरी समझ मे नही आता कि मैं तुझे सगुण कहूँ या निर्गुण। तुझे स्थूल कहूँ या सूक्ष्म! तू तो इन दोनो मे व्याप्त है। तुझे दृश्य कहूँ या अदृश्य! तू तो दृश्य और अदृश्य दोनो है।[१०] परवर्ती सन्तो मे भी यही दृष्टिकोण मिलता है।

(३) **माधुर्यभाव की अनुभूति**—इन सन्तो ने भक्ति के अन्तर्गत उस माधुर्य भाव का भी सम्मिश्रण किया है, जिसे हिन्दी के विद्वान भूल से सूफी रहस्यवाद का प्रभाव मानते हैं। सन्त ज्ञानेश्वर ने आराध्य देव एव स्वय के बीच पति-पत्नी सम्बन्ध की स्थापना करते हुए अपनी प्रेमानुभूतियो की व्यजना अनेक पदो मे की है। एक पद मे वे कहते हैं—'मुझे रात्रि दिन जैसी हो गई है और नीद हराम हो गई है। मेरे पति के परदेश मे होने के कारण उसकी स्मृति मुझे सदा जला रही है। ऐ रुक्मिणी के पति श्री विठ्ठल। मुझे त्वरित दर्शन दीजिए।'[११] सन्त नामदेव, एकनाथ, तुकाराम, तथा अनेक सन्त-महिलाओ ने भी इसी भावना का प्रकाशन किया है।

उपर्युक्त प्रवृत्तियो के अतिरिक्त गुरु के महत्त्व का गुण-गान, सभी मनुष्यो की समानता, जाति-पाति का विरोध, नाथ-पथी शब्दावलियो का प्रयोग, उलटवासियो एव रूपको का प्रयोग आदि की प्रवृत्तियाँ भी इनमे हिन्दी सत-काव्य के समान ही मिलती है, केवल स्थानाभाव से ही उनकी विस्तृत चर्चा यहाँ नही की जा रही है।

८—९ मराठी साहित्य का भक्ति-साहित्य भी० गो० देशपाडे, पृ० १४-१५।

१० मराठी का भक्ति-साहित्य भी० गो० देशपाडे, पृ० १७।

११ वही, पृ० २४।

अस्तु उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि सत-काव्य का यह वट-वृक्ष हिन्दी-क्षेत्र मे फैलने से पूर्व महाराष्ट्र मे पर्याप्त पल्लवित एव विकसित हो चुका था। मराठी और हिन्दी के सत-काव्य की समानताओ को देखते हुए हम बिना किसी सकोच के परवर्ती को पूर्ववर्ती की ही एक शाखा मान सकते है। इतना अवश्य है कि पन्द्रहवी शती के अनन्तर ये शाखाएँ एक दूसरी से क्रमश दूर होती गई, जिससे इनमे थोडा अन्तर आ गया। यह अन्तर मुख्यत. इस बात का है कि जहा मराठी लीलाओ का भी गुण-गान किया, वहाँ हिन्दी के संत कवियो ने राम, कृष्ण, गोविंद के केवल नाम का ही स्मरण किया, उनकी लीलाओ को अधिक महत्त्व नही दिया। दूसरे, मराठी के सतो मे खण्डन-मण्डन की तीक्ष्णता हिन्दी सत कवियो की अपेक्षा कम है, भक्ति का आवेश अधिक है। मराठी सतो मे अनेक उच्च जाति—ब्राह्मण—के हिन्दू थे, जो सुशिक्षित एव सुसंस्कृत थे जब कि हिन्दी के प्राय सभी प्रारम्भिक सत-कवि उच्च वर्ग एव उच्च-शिक्षा के सस्कारो से वचित थे, सभवत इसी अन्तर के कारण हिन्दी सत-काव्य मे मराठी सत-काव्य की अपेक्षा अधिक तीक्ष्णता एव विद्रोह मिलती है। पर यह अन्तर न केवल मराठी और हिन्दी के सतो मे अपितु हिन्दी के पूर्ववर्ती एव परवर्ती सतो मे भी परस्पर मिलता है, यथा कबीर का सा खण्डन-मण्डन सुन्दरदास मे नही मिलता। अस्तु, यह अन्तर इतना अधिक महत्त्वपूर्ण नही हैं, जिसके कारण मराठी और हिन्दी के सन्तो को, या हिन्दी के पूर्ववर्ती एव परवर्ती सन्तो को एक-दूसरे से अलग किया जा सके। अत हिन्दी सन्त-परम्परा का महाराष्ट्रीय सन्त-परम्परा से अविच्छेद्य सम्बन्ध स्वीकार किया जा सकता है।

हिन्दी मे सत-काव्य परपरा का प्रवर्त्तन—अब तक के विवेचन से स्पष्ट है कि हिन्दी मे इस काव्य-परम्परा का प्रवर्त्तन सर्वथा मौलिक रूप मे नही हुआ, अपितु यह मराठी मे विकसित होती हुई हिन्दी मे पहुँची है। हिन्दी मे इसे प्रचलित करने का श्रेय भी महाराष्ट्रीय सन्त नामदेव (१२७०-१३५० ई०) को है, जिन्होने एक ओर उत्तरी भारत मे दीर्घकाल तक रहकर अपने विचारो का प्रचार किया तो दूसरी ओर हिन्दी मे विपुल पदो की रचना की, जिनमे से शताधिक आज भी उपलब्ध हैं। उनके पदो मे परवर्ती सन्त-काव्य की प्राय सभी विशेषताएँ—विचार, भाव, भाषा, शैली आदि—मिलती हैं, ऐसी स्थिति मे कोई कारण नही कि हम उन्हे हिंदी-सन्त-काव्य परम्परा का प्रवर्त्तक न माने। पर यह आश्चर्य की बात है कि अब तक हिन्दी के प्राय सभी इतिहासकारो ने इनकी चर्चा करते हुए भी हिन्दी सन्त-परम्परा का प्रवर्त्तक इन्हे न मानकर कबीर को माना है, जिनका आविर्भाव-काल नामदेव के देहावसान के भी ४८ वर्ष बाद (=१३९८ ई०) पडता है। हमारे इतिहासकारो ने इसका कोई स्पष्ट कारण भी नही बताया है। नामदेव मूलत: मराठी के कवि थे, सम्भवत इसलिए उन्हे इस श्रेय से वचित कर दिया गया है, किन्तु यह ठीक नही। विद्यापति

ने संस्कृत और अपभ्रंश के अतिरिक्त हिन्दी मे पदो की रचना की थी, जिसके लिए उन्हें हिन्दी की कृष्ण-गीति-परम्परा का प्रवर्त्तक माना जाता है। नामदेव की स्थिति भी लगभग ऐसी ही है, फिर उन्हे प्रवर्त्तक क्यो न माना जाय ? प० परशुराम चतुर्वेदी ने एक स्थान पर लिखा है कि 'नामदेव मे उत्तरी भारत के सन्त मत की सारी विशेषताएँ नही मिलती' पर यह बात भी ठीक नही है। उदाहरण के लिए यहा नामदेव के हिन्दी-काव्य से उन सभी प्रवृत्तियो के प्रमाण प्रस्तुत किये जाते हैं, जो उत्तरी भारत के सन्त मत से सम्बन्धित हैं, देखिए—

(क) ईश्वर के प्रति दृढ अनुराग, माधुर्यपूर्ण भक्ति एव विरह-व्यजना—

मोहि लागत ताला वेली। बछरे बिनु गाइ अकेली।
पानीआ बिनु मीनु तलफै। ऐसे राम नामो बिनु बापुरो नामा॥

× × ×

कामी पुरुष कामनी पिआरी। ऐसी नामे प्रीत मुरारी

× × ×

मैं बउरी मेरा राम भरतार।
रचि रचि ताकउ करउ सिंगार॥

(ख) अद्वैतवाद का प्रतिपादन—

सभु गोविन्दु है, सभु गोविंदु है, गोविंदु बिनु नही कोई।
सूतु एकु मणि सत सहस जैसे उतिपोति प्रभु सोई॥
जलतरग अरु फेन बुदबुदा, जल ते भिन्न न कोई।
इहु परपन्चु पारब्रह्म की लाला विचरत आन न होई।

× × ×

कहत नामदेऊ हरि की रचना देखहु रिदै विचारी।
घट-घट अंतरि सरब निरन्तरी केवल एक मुरारी॥

—(हिन्दी को मराठी सन्तो की देन, पृ० १११)

(ग) गुरू का महत्त्व स्वीकार करना—

जऊ गुरदेऊ न मिलै मुरारी।
जऊ गुरदेऊ न उतरै पारि॥ —(वही पृ० ११३)

(घ) मूर्ति-पूजा पर व्यंग्य—

एकै पाथर कीजै पाऊ। दूजै पाथर धरिए पाऊ।
जै इहु देऊ तऊ उहु भी देवा। कहि नामदेव हरि की सेवा।

(ङ) जाति-पाति भेद का विरोध—

कहा करउ जाती, कहा करउ पाती।
राम को नामु जपउ दिन राती। —(वही, पृ० ११४)

(च) अनहद नाद एवं अलौकिक अनुभूतियों की अभिव्यक्ति—

नादि समाइलो रे सति गुर भेटिले देवा।
जह झिलिमिलि कारु दिसता। वह अनहद सबद वजंता।
जोति-जोति समानी। मैं गुर परसादी जानी।
रतन कमल कोटरी। चमकार बिजुल तही।
नेरै नाही दूरि। निज आतमै रहिआ भरपूरि।

—(वही, पृ० ११५)

(छ) इडा, पिंगला, सुषुम्ना आदि का संयमन एवं यौगिक साधना की चर्चा—

वेद पुरान सासत्र आनँता गीत कबित न गावऊगो।
अखण्ड मण्डल निरन्कार महि अनहद बेनुबजावऊगो।
बैरागी रामहि गावऊगो।
सबहि अतीत अनाहदि राता, आकुल कै घरि जाऊगो।
इड़ा पिंगुला अउरु सुखमना पऊनै बधि रहाऊगो।
× × ×
अठसठि तीरथ गुरु दिखाए घटहि भीतरि नाऊगो।
× × ×
नामा कहै चितु हरि सिऊ राता सुन्न समाधि पावऊगो॥

—(वही, पृ० ११६)

(ज) हिन्दू-मुस्लिम एकता का प्रतिपादन—

हिंदू अधा तुरकू काणा, दोहा ते गिआनी सिआणा
हिन्दू पूजै देहुरा मुसलमाणु मसीत।
नामे सोई सेविआ जह देहुरा न मसीत।

—(पंजाबी तील, नामदेव, पृ० १११)

यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि नामदेव का प्रभाव परवर्ती युग के अनेक सन्त कवियों पर पर्याप्त मात्रा में परिलक्षित होता है। कबीर, रज्जब, रैदास, दादू आदि ने अनेक विचारों एवं भावों को ग्रहण करने के साथ-साथ नामदेव का स्मरण बड़ी श्रद्धा के साथ किया है, जैसे—

गुरु परसादी जै देव नामा।
प्रगति के प्रेम इन्हहि है जाना। —कबीर

नामा, कबीर सुकीन थे कुन रांका बांका,
भगति समानी सब धरनी तजि कुल काना का। —रज्जब

नामदेव कबीर तिलोचन सधना धरनी सैनु तरै।
कह रविदास सुनहु रे संतो, हरि जीउ ते सभै सरै। —रैदास

नामदेव कबीर जुलाहो जन रैंदास तिरैं।
दादू बेगि बार नहिं लागै, हरि सौ सबै सरैं। —दादू

इन कवियो ने न केवल नामदेव का उल्लेख किया है, अपितु उन्हे सन्त परम्परा मे शीर्ष स्थान भी दिया है। जिस नामदेव को कबीर, रज्जब, रैदास, दादू आदि ने एक स्वर मे अपनी परम्परा मे प्रथम स्थान दिया है उन्हे ही आज के इतिहासकारो द्वारा परम्परा से विच्छिन्न एव वियुक्त कर देना कहाँ तक न्याय है ? आचार्य विनय मोहन शर्मा ने अपने प्रबन्ध—'हिन्दी को मराठी सन्तो की देन'—मे विभिन्न दृष्टिकोणो से विचार करते हुए नामदेव को ही इस परम्परा के प्रवर्त्तक मानने का निर्णय देते हुए लिखा है—'नामदेव मे उत्तरी भारत के सन्त-मत की सारी विशेषताएँ विद्यमान हैं। इसीलिए हम उन्हे उत्तर भारत मे निर्गुण भक्ति-मत का प्रथम प्रचारक एव प्रवर्त्तक तथा कबीर आदि सन्तो का पथ-प्रदर्शक मानते हैं।...... ...यह सत्य है कि कबीर के समान नामदेव की हिन्दी रचनाएँ प्रचुर मात्रा मे नही मिलती, परन्तु जो कुछ प्राप्य हैं उनमे उत्तर भारत की सन्त-परम्परा का पूर्व आभास मिलता है और उनके परवर्ती सन्तो पर निश्चय ही उनका प्रभाव पडा है—जिसे उन्होने मुक्त कंठ से स्वीकार किया है ऐसी दशा मे उन्हे उत्तर भारत मे निर्गुण-भक्ति का प्रवर्त्तक मानने मे हमे कोई झिझक नही होनी चाहिए।'[1]

आचार्य शर्मा के उपर्युक्त निर्णय को स्वीकार करने से पूर्व हमे दो शकाओ पर और विचार कर लेना चाहिए। एक तो यह कि यदि नामदेव को हिन्दी सन्त परम्परा मे स्थान देते हैं तो अन्य महाराष्ट्रीय कवियो को जिन्होने हिन्दी मे रचना की है, इसमे स्थान क्यो न दिया जाय ? दूसरे, क्या नामदेव से कबीर तक यह परम्परा अखड रूप मे मिलती है ? इनमे से पहली शका के सम्बन्ध मे तो हमारा विचार है कि उन सभी कवियो को, जिन्होने भले ही वे महाराष्ट्रीय हो या किसी और स्थान के, जिन्होने हिन्दी मे रचना की है, इतिहास मे स्थान मिलना चाहिए, यह दूसरी बात है कि यह स्थान उनकी रचनाओ के महत्त्व के अनुरूप ही होगा। उदाहरण के लिए नामदेव के अतिरिक्त चक्रधर, महदायिसा, दामोदर पण्डित, ज्ञानेश्वर मुक्ताबाई, आदि के भी हिन्दी पद मिलते हैं, किन्तु वे सख्या मे इतने कम हैं कि उनके रचयिता का केवल उल्लेख मात्र ही किया जा सकता है, उन्हे नामदेव जितना महत्त्व देना सभव नही। नामदेव के अनन्तर भी सन्त एकनाथ, अनन्त महाराज, तुकाराम, समर्थ रामदास, रगनाथ, केशवस्वामी प्रभृति सतो ने मराठी के अतिरिक्त हिन्दी मे रचना की, जिसके लिए समस्त हिन्दी-जगत उनका कृतज्ञ है, पर साहित्यिक दृष्टि से उन्हे वह सम्मान देना सम्भव नही जो नामदेव को दिया जा सकता है। फिर भी जो जितने

---

१ हिन्दी को मराठी-सन्तो की देन डा० विनय मोहन शर्मा, पृ० १२८-१२९।

स्थान का अधिकारी है, उसे उतना दिया ही जाना चाहिए, इसका हम समर्थन करते हैं। अस्तु, नामदेव के ऐतिहासिक एवं साहित्यिक महत्त्व तथा परवर्ती कवियो द्वारा प्राप्त मान्यता को देखते हुए यदि उन्हे हिन्दी सन्त-परम्परा मे प्रथम स्थान दे दिया जाय तो ऐसी कोई नयी समस्या उत्पन्न नही होगी, जिसका समाधान सम्भव न हो।

दूसरी शका भी विशेष महत्त्वपूर्ण नही है। एक तो नामदेव और कबीर के बीच बहुत बडा अन्तर नही है। एक ऐसी परम्परा मे जो लगभग ६-७ शताब्दियो तक प्रवाहित होती रही, ५०-६० वर्ष का व्यवधान विशेष महत्त्व नहीं रखता। दूसरे, अनेक ऐसे सन्तों—त्रिलोचन, सदन, बेनी आदि—का उल्लेख भी मिलता है, जिनकी रचनाएँ आज उपलब्ध नही है किन्तु उन्हे ऐतिहासिक दृष्टि से नामदेव और कबीर के बीच की कडियो के रूप मे स्वीकार किया जा सकता है। डा० रामकुमार वर्मा ने इन तीनो कवियो का परिचय देते हुए इनका आविर्भाव नामदेव और कबीर के बीच के समय मे ही माना है। अस्तु, तथ्य यह है कि इन कवियो के माध्यम से या अन्य स्रोतो से नामदेव की परम्परा अविच्छिन्न एवं अपरिवर्तित रूप मे परवर्ती सन्तो तक पहुँची है, जिसका प्रत्यक्ष प्रमाण इनके काव्य-रूप एवं काव्य-प्रवृत्तियो की समानता मे निहित है, यहा परवर्ती सन्तो से नामदेव की तुलना करने के लिए अधिक स्थान नही है किन्तु जैसा कि आचार्य विनयमोहन शर्मा ने अपने प्रबन्ध मे विस्तार से स्पष्ट किया है, परवर्ती सन्तो—कबीर, दादू, रज्जब, रैदास, धर्मदास, सुन्दरदास, सहजोबाई आदि—ने न केवल नामदेव के भावो विचारो और शैली का अनुसरण किया है अपितु उनकी उक्तियो और शब्दावलियो तक को ग्रहण किया है, अत इसमे कोई सन्देह नही कि हिन्दी-सन्त-परम्परा से नामदेव का इतना घनिष्ठ सम्बन्ध है कि इतिहासकार का कोई भी तर्क उन्हे इससे विच्छिन्न नही कर सकता। मराठी से हिन्दी मे आने वाले नामदेव पर हमारा उतना ही अधिकार है जितना उर्दू से हिन्दी मे आनेवाले उपन्यासकार प्रेमचन्द पर है यह दूसरी बात है कि नामदेव की रचनाओ का परिमाण प्रेमचन्द-साहित्य की अपेक्षा बहुत कम है, पर ऐतिहासिक दृष्टि से वह भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं है।

नामदेव का व्यक्तित्व, चरित एव साहित्य—नामदेव का जन्म महाराष्ट्र के एक साधारण दर्जी परिवार मे सन् १२७० मे हुआ था। उनके पिता दामाशेट प्रतिवर्ष पंढरपुर की यात्रा करते थे, जिससे नामदेव को भक्ति के सस्कार बाल्यावस्था मे ही प्राप्त हो गये थे। कहते हैं कि बचपन मे ही विट्ठल की मूर्ति को दूध पीने के लिए बाध्य करते समय इन्हे ईश्वर का साक्षात्कार प्राप्त हो गया था। विवाह के अनन्तर भी उनकी भक्ति भावना मे कोई अन्तर नही आया, अपितु इनके प्रभाव से इनके परिवार के सभी लोग भक्त हो गये। आगे उन्हे सन्त ज्ञानेश्वर का सान्निध्य प्राप्त हो गया तथा उनके आदेश से इन्होने विसोबा खेचर से दीक्षा ग्रहण की तथा ज्ञानेश्वर के

समाधिस्थ होने तक उन्ही की मन्डली मे रहे। तदनन्तर वे भक्ति का प्रचार करते हुए पंजाब चले गये जहा वे लगभग अठारह वर्ष तक रहे गुरदासपुर (पजाब) जिले के घोमान नामक स्थान पर आज भी सन्त नामदेव का मन्दिर स्थिति है तथा इसके आस-पास नामदेव सप्रदायियो की वस्ती है। इस मन्दिर को 'गुरू द्वारा बाबा नामदेव कहा जाता है। इनके पजाब मे बहुत शिष्य हुए थे, जिनमे विष्णुस्वामी, बहारेदास, जालतो सुनार, लध्धा खत्री, केशो कलाधारी आदि का नाम उल्लेखनीय है। अपने जीवन के अन्तिम भाग मे वे पुन काठियावाड एव गुजरात होते हुए महाराष्ट्र मे आ गये तथा ८० वर्ष की आयु मे पढरपुर के विट्ठल मन्दिर के महाद्वार पर समाधि ले ली।

सत नामदेव के देन पर विचार करते हुए प्रो० देशपाडे लिखते हैं—'उन्होने उत्तर भारत मे भक्ति मार्ग का प्रचार करके हिन्दू समाज को जाति-भेद की सकीर्णता बहुदेवोपासना का सच्चा अर्थ धर्माडम्बर और अनावश्यक आचार-विचार के सम्बन्ध मे जागृत किया। वे यथार्थ मे सच्चे लोक-शिक्षक थे। उन्होने सन्त कबीर, गुरु नानक जैसे परवर्ती सन्तो का मार्ग प्रशस्त बनाने मे कुछ न उठा रखा। सचमुच वे उत्तर भारत के सांस्कृतिक एवम् धार्मिक जागरण के आद्य प्रणेता थे। 'सन्त नामदेव का व्यक्तित्व जितना पवित्र, भावुक और महान् था उतनी उनकी साहित्य-रचना भी (महान) थी।'[१४]

नामदेव के मराठी मे लगभग तीन हजार अभग प्राप्त है जो 'नामदेव की गाथा' मे सगृहीत है। हिन्दी मे उनका लगभग ७० पद उपलब्ध है जो सिक्खो के 'गुरु ग्रन्थ साहिब' तथा श्री आवटे के 'सकल सन्त गाथा मे सग्रहीत हैं। डा० विनय मोहन शर्मा ने इन्हे सुसपादित रूप मे अपने प्रबन्ध के अन्त मे प्रस्तुत किया है। जैसा कि शर्माजी ने निर्देश किया है, 'गुरु ग्रन्थ साहब, नामदेव के ढाई सौ बष बाद की रचना है, अत सम्भव है कि उनके पदो की भाषा मे परिवर्तन आ गया हो, किन्तु जनता सन्तो की बाणी मे दैवी शक्ति मानकर उनका पाठ शुद्ध रखने का प्रयास करती है, अत' नामदेव के पद बहुत अधिक परिवर्तित हो गये है, ऐसा नही कहा जा सकता। वैसे भी इनकी भाषा कबीर के उपलब्ध काव्य की भाषा से प्राचीन प्रतीत होती है तथा उस पर मराठी का प्रभाव भी यत्र-तत्र दृष्टिगोचर होता है, अत उनमे अधिक परिवर्तन नही हुआ है।

जैसा कि पीछे कहा गया है, उनके काव्य मे मुख्यत ईश्वर-भक्ति, माधुर्य भाव अद्वैतानुभूति, गुरु-महिमा, जाति पाति-विरोध, बाह्याचारो का खण्डन, यौगिक शब्दावली, पद या गीति शैली, आदि की प्रवृत्तिया मिलती है, किन्तु उनका मूल

---

१४. मराठी का भक्ति-साहित्य . देशपाडे, पृ० ७५।

स्वर अलौकिक प्रेम का ही है । उस प्रेम मे आस्था, विश्वास, करुणा एव विरह की भावना सम्मिश्रित है । प्रो० पटवर्धन ने ठीक ही लिखा है कि नामदेव की कविता मे हमे उस प्रकाश के रोमाच का अनुभव होता है जो कभी इस धरती या समुद्र पर नही उतरा । उसमे हमे एक ऐसे स्वप्न के दर्शन होते है जो इस धूल-भरी धरती पर इससे पहले कभी नही झलका । उस प्रेम की प्रतीत होती है जिसने वासना को कभी उत्तेजित नही किया । उसमे एक ओर करुण, विश्वास एव भक्ति का रोमाच है तो दूसरी ओर मानवात्मा की दिव्य शक्ति के प्रति आत्म-समर्पण है । उसमे हम भक्ति या दिव्य प्रेम का रोमाच, हृदय का हृदय के प्रति सगीतमय निवेदन और भावातुर मन के सहज, मधुर व रस भीने उद्‌गार पाते है । नामदेव की कविता के महत्त्व के सम्बन्ध मे इससे अधिक कुछ और कहना अनावश्यक है ।

नामदेव के हिन्दी पदो की भाषा के सम्बन्ध मे भी विद्वानो मे पर्याप्त मत-भेद है । मराठी के प्रसिद्ध विद्वान् श्री प्रियोलकर के मतानुसार वह पजाबी मिश्रित हिन्दी है, उस पर मराठी का प्रभाव नही है तथा इसी आधार पर उन्होने इन पदो के रचयिता नामदेव को प्रसिद्ध नामदेव से भिन्न सिद्ध करने का भी प्रयास किया था, किन्तु मराठी के दूसरे विद्वान श्री म० गो० वारटवके ने इन पदो की भाषा का विस्तृत विश्लेषण करते हुए उसे मराठी से प्रभावित माना है तथा श्री प्रियोलकर के उपर्युक्त मत का खडन किया है । उदाहरण के लिए नामदेव के पदो की निम्नाकित भाषागत प्रवृत्तियाँ मराठी प्रभाव की द्योतक मानी गई है --

(क) उ का बाहुल्य—अजामलु, अबरीकु, एक, कवनु, खेदु आदि ।

(ख) क्रियापदो के काल—तारीले, आनीले, केला, दैला, भेटल आदि ।

(ग) शब्द एव विभक्ति-प्रत्यय—नादि, घरि, सीसू, अकासी, सनाने, बागटा, ताची जागि, ता चे असा, तुम चे पारसु, हम चे लोहा आदि ।

(घ) वाक्यो पर मराठी की छाया, जैसे—'रे नादि समाइलो, सतिगुरु देवा भेटले (मराठी-रूप अरे ! नादी समाविलो, सदगुरुदेव भेटले ।)

अस्तु, इसमे कोई सन्देह नही कि नामदेव के हिन्दी-पदो की भाषा पर मराठी का थोडा-बहुत प्रभाव अवश्य है । आचार्य विनयमोहन शर्मा के मतानुसार उनकी भाषा पर ब्रज, पूर्वी हिन्दी, और पजाबी का भी प्रभाव है । उनकी भाषा मे भी कबीर के समान विविधता है । इसके अतिरिक्त, जैसा कि पहले कहा गया है, उसमे किंचित् परिवर्तन परवर्ती लिपिकारो के द्वारा भी सम्भव है ।

जहाँ तक नामदेव के प्रसिद्ध महाराष्ट्रीय नामदेव से भिन्न होने की बात है, यह भी सर्वथा अमान्य सिद्ध हो गई है । महाराष्ट्रीय नामदेव जाति के 'छीपे' (जिसका मराठी मे दर्जी के अर्थ मे प्रयोग होता है) थे, इसका उल्लेख उनके मराठी और हिन्दी के पदो मे समान रूप से पाया जाता है, जैसे —

(क) शिंपिआचे कुली जन्म झाला'। (मराठी पदो मे)

(ख) छीपे के घरि जनमु देला, गुरु उपदेसु भैला। (हिन्दी पदो मे)

(ग) हीनडी जात मेरी जातुदम राइया।
छीपे के जनमि काहे कउ आइआ।

इसके अतिरिक्त प्रसिद्ध नामदेव से सम्बन्धित घटनाएँ (जैसे विठ्ठल को दूध पिलाने की विभिन्न घटनाओ के उल्लेख, आराध्यदेव विठ्ठल के नाम का प्रयोग; भाव धारा, विचार, शैली आदि की दृष्टि से भी गुरु ग्रथ-साहब मे संकलित हिन्दी पद प्रसिद्ध नामदेव के ही सिद्ध होते हैं। अतः इस सम्बन्ध मे शका या सदेह के लिए कोई स्थान नही रह जाता।

नामदेव ने खसम, भरतार, निरजन, बीठुला नाद, शून्य (सुन्न), अनहृत आदि शब्दो का प्रयोग विशिष्ट अर्थों मे किया है। यह प्रवृत्ति परवर्ती हिन्दी सत-काव्य मे भी मिलती है। अस्तु, परवर्ती हिन्दी-सत काव्य को नामदेव की देन अनेक क्षेत्रो मे—भाव, विचार, शैली आदि—प्राप्त है। इस सम्बन्ध मे यदि स्वतन्त्र शोध-कार्य किया जाय तो और अधिक स्पष्टीकरण की सभावना है।

हिन्दी का प्रथम काव्य

भरतेश्वर बाहुबली रास

रचयिता :

शालिभद्र सूरि

रचना-काल : १२४१ वि० (११८४ ई०)

भरतेश्वर बाहुबली रास

रिसह जिणेसर पय पणमेवी, सरसति सामिणी मनि समरेवि,
नमवि निरन्तर गुरू-चरण ॥ १ ॥
भरह नरिंदह तणु चरित्तो, जं जुगी वसहा–वलय वदीतो,
वार वरिष विहुँ बधवह ॥ २ ॥
हुं हिव पभणिसु रासह छंदिहिं, त जन मनहर मन आणदिहिं,
भाविहिं भवीयण सभलेउ ॥ ३ ॥
जबुदीवि उवझाउरि नयरो, धणि कणि कचणि रयणिहिं पवरो,
अवर पवर किरि अमर परो ॥ ४ ॥
करइ राज तहिं रिसह जिणेसर, पावतिमिर मय-हरण दिणेसर,
तेजि तरणि कर तहिं तपइये ॥ ५ ॥
नामि सुनद सुमगल देवि, राय रिसहेसर राणी बेवि,
रूवरेहि रति प्रीति जिन ॥ ६ ॥
बिवि बेटी जनमी सुनदन, तेह जि तिहूयण मन आनन्दन,
भरह सुमगल देवि तणु ॥ ७ ॥
देवि सुनदन नदन बाहूबलि, भजइ भिउड महाभड भूयवलि,
अवर कुमर वर वीर धर ॥ ८ ॥
पूवर लाख तेणि तेयासी, राजतणी परि पुहवि पयासी,
जुग जुग मारग दाखीउ ए ॥ ९ ॥
उवझापुरि भरहेसर थापीय, तक्षशिला बाहूबलि आपीय,
अवर अठाणु वर नयर ॥ १० ॥
दान दियइ जिणवर सवत्सर, विसय विरत्त वहइ संजमभर,
सुर असुरा नरि सेवीइए ॥ ११ ॥
परमताल पुरि केवल नाणुं, तस ऊपन्नूं प्रगट प्रमाणूं,
जाण हवु भरहेसरह ॥ १२ ॥

तिणि दिणि आउधसालंह चक्को, आवीय अरोपण पडीय ध्रसहो.
भरह विमासइ गहगहीउ ॥ १३ ॥
धनु-धनु हु घर मडलि राउ, आज पढम जिणवर मुझ ताउ,
केवल लच्छि अलकीयउ ॥ १४ ॥
पहिलु ताय पाय पणमेसो, राज रिद्धि राणिमा फल लेसो,
चक्करयण तंव अणसरउ ॥ १५ ॥

*

वस्तु---चलीय गयवर चलीय गयवर, गडीय गज्जत
हू पत्तउ रोसभरि, हिण-हिणत हय थट्ट हल्लीय
रह भय भरि टल टलीय मेरू, सेसुमणि मउड खिल्लीय
सिउं मरूदेविहि सचरीय, कुजरी चडिउ नरिंद।
समोसरणि सुरवरि सहिय, वदियं पढम जिणंद॥
पढम जिणवर पढम जिणवर, पाय पणमेवि,
आणदिहिं उच्छव करीय, चक्करयण वलि वलिय पुज्जइ
गडयडत गजकेसरीय, गरूय नदि्द गजमेह गज्जइ
वहिरीय अम्बर तूर रवि, वलिउ नीसाणे घाउ
रोमचिय रिउ रायवरि, सिरि भरहेसर राउ ॥ १७ ॥

ठवणि १

प्रहि उगमि पूरवदिसिहिं, पहिलउ चालीय चक्क तु
धूजीय धरयल थरहर ए, च्लीय कुलाचल चक्क तु ॥ १८ ॥
पूठि पीयाणुं तउ दियए, भयबलि भरह नरिंद तु
पिडि पचायख परदलह, इलियलि अवर सुरिंद तु ॥ १९ ॥
कज्जीय सयहरि सचरीय, सेनापति सामत तु
मिलीय महाधर मडलीय, गाढिम गुण गज्जत तु ॥ २० ॥
गडयडतु गयवर गुडीय, जगम जिम गिरिशृ ग तु
सुड दण्ड चिर चालवइ, वेलइ अगिहिं अङ्ग तु ॥ २१ ॥
गजइ फिरि फिरि गिरि सिहरि, भजइ तरूवर डालि तु
अकम वसि आवइ नही य, करइ अपार अणालि तु ॥ २२ ॥
हीसइ हर्समसि हणहणइ ए, तरवर तार तोषार तु
खूदइ खुरलइ खेडवीय, मन मानइ असुवार तु ॥ २३ ॥

कटक न कवणिहिं भर तणुं, भाजइ भेडि भिडंत तु
रेलइ रयणायर जमले, राणोराणि नमत तु ॥ ३९ ॥
साठि सहस सवच्छरह, भरहस भरह छ खण्ड तु
समरेगणि साधइ सधर, वरनइ आण अखण्ड तु ॥ ४० ॥
बार वरिस नमि विनमि, भड भिडीय तानावीय आण तु
आवाठी तडि गग तणइ, पामइ नवह निहाण तु ॥ ४१ ॥
छत्रीस सहस मउड्डुध सिउ, चउद रयण सम्पत तु
आविउ गगा भोगवीय, एक सहस वरसाउ तु ॥ ४२ ॥

ठवणि २

तउ तिहिं आउध साल, आवइ आउधराउ नवि
तिणि खिणि मणि भूपाल, भरह भयउ लोलावडओ ॥ ४३ ॥
वारिरि वहूय अणालि, अलू आरीय अहनिसि करइ ए
अति उतपात अकालि, दाणव दल वरि दाषवइ ए ॥ ४४ ॥
मति सागर किणि काजि, चक्क त (न) पुरि परवस करइ
तइ जि अम्हाइ इ राजि, धोरीय धर धरीउ धरह ॥ ४५ ॥
देव कि थमीउ एय, कवणि कि दानव मानविहि
एउ आखि न मुझ भेउ, वयरीय वार न लाईइ ए ॥ ४६ ॥
बोलइ मन्त्रि मयक, सभलि सामीय चक्क धरो
अवर नही कोइ वक्रु, चक्करयण रहवा तणउ ॥ ४७ ॥
सकीय सुरवर सामि, भरहेसर तूय भूय भवणे
नासइं ति सुणीय नामि, दानव मानव कहि कवणि ॥ ४८ ॥
नवि मानइ तूंय आण, वाहूबलि बिहु बाहुबले
वीरह वयर विनाणु, विसमा वहडइ वीर वरो ॥ ४९ ॥
तीणि कारणि नरदेव, चक्क न आवइ नीय नयरे
विण बधव तूय सेव, सहू कोइ सामीय साचवइ ए ॥ ५० ॥
त ति सुणीय तीणइ तालि, कठीउ राउ सरोस भरे
भमइ चडावीय भालि, पभणइ मोडवि मूंछि मूहे ॥ ५१ ॥
जुन मानइ मझ आण, कवण सु कहीइ बाहुबले
लीलह लेसु ए राण, भजउं भुज भारिहिं भिडीय ॥ ५२ ॥

स मति–सागर मति, वलि वसुहाहिव वीन वइ
नवि मनि कीजइ खति, बन्धव सिउ कहि कवण बलो ॥ ५३ ॥
दूत पठावीयइ देव, पहिलउ वात जणावीइ ए
जु नवि आवइ देव, तु नरवर कटकई करउ ॥ ५४ ॥
त मनि मानीय राउ, वेगि सु वेगह, आइ–सइ ए
जईय सुनदा–जाउ, आण मनावे आपणीय ॥ ५५ ॥
जा रथ जोत्रीय जाइ, सुजि आऐसिहिं नरवरह
फिरि फिरि साहमु थाइ, वाम तुरीय वाहणि तणउ ॥ ५६ ॥
आजल–काल बिराल, आवीय आडिहिं उतरइ ए
जिमणउ जम विकराल, खरू खु रव उछलीय ॥ ५७ ॥
सूकीय वाउल डालि, देवि वइठीय सुर करइ ए
झापीय झाल मझालि, घूक पोकारइ दाहिण ओ ॥ ५८ ॥
डावीय डगलइ सादि, भयरव भैरव खु करइ ए
जिमण इ गमइ विषादि, फिरीय फिरीय शिव फेकरइ ए ॥ ५९ ॥
वड जखनइ कालीयार, एकउ वेढ्ढु उतरइ ए
नीजलीउ अगार सचरता, साहमु हुइ ए ॥ ६० ॥
काल भुयगम काल, दतीय दसण दाखवइ ए
आज अखूटउ काल, षूटउ रहि रहि इम भणइ ए ॥ ६१ ॥
जाइ जाणी दूत, जीवह जोषि, आगमइ ए
जेम भमतउ भूत, गिणइ न गिरि गुह वण गहण ॥ ६२ ॥
तईड नेसमि वेस, न गिणइ नइ दह नीझरण
लघीय देस असेस, गाम नयर पुर पाटणह ॥ ६३ ॥
बाहरि वहूय आराम, सुरवर नइ ता नीझरण
मणि तोरण अभिराम, रेहइ धवलीय धवलहरो ॥ ६४ ॥
पोयण पुर दीसति, दूत सुवेग सु गहरा हीउ
व्यवहारीया वसति, धणि कणि कचणि मणि पवरो ॥ ६५ ॥
धरणि तरणि ताडक, जेम तुग त्रिगढ्ढु, लहइ ए
एह कि अभिनव लक, सिरि कोसीसा कणयमय ॥ ६६ ॥
पोढा पोलि पगार, पाडा पार न पामीइ ए
सख न सीहद्रूयार, दोसइ देउल द ह दिसिइ ॥ ६७ ॥

पेखवि पुरह प्रवेसु, दूत पहूतउ रायहरे
सिउ प्रतिहार प्रवेसु, पामीय नरवर पय नमइ ए ॥ ६८ ॥
चउकीय माणिक थंभ, माहि वइठउ बाहुबले
रूपिहिं जिसीय रंभ, चमर-ढारि चालइ चमर ॥ ६९ ॥
मडीय मणिमइ दंड, मेघाडम्बर सिरि धरिय
जस पयडे भूयुदंडि, जयावती जयसिरि वसइ एं ॥ ७० ॥
जिम उदयाचलि सूर, तिम सिरि सोहइ मणिमुकुटी
कसतुरीय कुसुम कपूर, कुचू वरि महमहइ ए ॥ ७१ ॥
झलकइ ए कुंडल कानि, रवि शशि मडीय किरि अवर
गगाजल गजदानि, गाढिम गुण गज गुडअडइ ए ॥ ७२ ॥
उरवरि मोतीय हार, वीरवयल करि झलहलइ ए
तंवल अगि सिंणगार, खलक ए टोडरवामा ॥ ७३ ॥
पहिरणि जादर चीर, ककोलई करिमाल करे
गुरूउ गुणि गभीर, दीठउ अवर कि चवकधर ॥ ७४ ॥
रजिउ चित्ति सु दूत, देखीय रणिम तसु तणीय
धन रिसहेरपूत, जयवतु जुगि बाहुबले ॥ ७५ ॥
बाहुबलि पूछेइ कुवण, काजि तुहि आवीया ए
दूत भणइ निज काजि, भरहेसरि अम्हि पाठव्या ए ॥ ७६ ॥
वस्तु—राउ जंपइ, राउ जपइ, सुणि न सुणि दूत
भरहखड भूमीसरह, भरह राउ, अम्ह सहोयर
सवाकोडि कुमरिहिं सहीय, सूइकुमर तहिं अवर नरवर
मति महाधर मडलिय, अतेउरि परिवारि
सामंतहसीमाड सह, कहि न कुसल सविचार ॥ ७७ ॥
दूत पभणइ, दूत पभणइ, बाहुबलि राउ
भरहेसर चक्कधर, कहि न कवणि दूहवणह किज्जइ
जिहु लहु बंधव तूय, सरिसगडयड त गज भीम गज्जइ
जइ अधारइ रवि किरण, भड भजइ वर वीर
तु भरहेसर समर भरि, जिप्पइ माहरी धीर ॥ ७८ ॥

ठवणि ३

वेगि सुवेगि सु बुल्लइ, सम्भलि बाहूबलि
राउत कोई मुह तुल्लइ, ईणिई अछइ रवितलि ॥ ७९ ॥

जा तव बन्धव भरह नरिंदो, जमु भुइ कप सगि सुरिंदो
जीणइ जीता भरह छ खड, म्लेच्छ मनाव्या आण अखड ॥ ८० ॥
भडि भडत न भुयवलि भाजइ, गडयडतु गाढ गाढिम गाजइ
सहस बतीस मउडाधा राय, तू य बवव सवि सेवइ पाय ॥ ८१ ॥
चऊद रयण घरि नवइ निहाण, सख न गयघड जमु केवाण
हूय हवडा पाटह अभिषेको, तूं य नवि आवीय कवण विवेको ॥ ८२ ॥
विण बन्धव सवि सपय ऊणी, जिम विण लवण रसोइ अलूणी
तुम देसण उतकठिउ राउ, नितु नितु वाट जोइ तुह भाउ ॥ ८३ ॥
वडउ सहोयर अनइ वड वीर, देवज प्रणमइ साहस धीर
एक सीह अनइ पाखरीउ, भरहेसर नइ नइ परवरीउ ॥ ८४ ॥

ठवणि ४

तु बाहूवलि जपइ कहि वयण म काचु
भरहेसर भय कपइ, ज ज तु साचु ॥ ८५ ॥
समरगणि तिणि निउ कुण काछइ, जहि बन्धव मइ सरिसउ पाछइ
जावत जंबुदीवि तमु आण, ता अम्ह कहीइ कवण ए राण ॥ ८६ ॥
जिम जिम मुजि गढ गाढिम गाढउ, हय गय रह वरि करीय सनाढ
तस अरधासण आपइ इदो, तिम तिम अम्ह मनि परमाणदो ॥ ८७ ॥
जुन आव्या अभिषेकह वारं, तु तिणि अम्ह नवि कीधा सार
वडउ राउ अम्ह वडउ जि भाई, जहि भावइ तिहा मिलिसिउ जाइ ॥ ८८ ॥
अम्ह ओलगनी वाट न जोई, भड भरहेसर विकर न होइ
मझ वधव नवि फीटइ कीमइ, लोभीया लोक भणइ लख ईम्हई ॥ ८९ ॥

ठवणि ५

चालिम लाइसि वार वन्धव भेटीजइ
चूकि म चीति विचार मूय वयण सुलीजइ ॥ ९० ॥
वयण अम्हारू तूय मनि मानि, भरह नरेसर गणि ठाजदानि
सतूठउ दिइ कवण भार, गयघड तेजीय तूरल तुषार ॥ ९१ ॥
गाम नयर पुर पाटण आपइ, देसाहिव थिर थोभीय थापइ
देय अदेय न दतु विमासइ, सगपणि कह नवि किंपि विणसइ ॥ ९२ ॥
जाण राउ ओलगिउ जाणइ, माणणहार विरोपिइ मारइ
प्रतिपन्नउं प्रगट प्रति पालइ, प्रारथिउ नवि घढी विमरालइ ॥ ९३ ॥

तिणि सिउं देव न कीजइ ताडउ, सुजि मनाविइ माडम आडउ
हु हितकारणि कहु सुजाण, कूडू कहूँ तु भरहेसर आण ॥९४॥

वस्तु

राउ जपइ, राउ जपइ, सुणि न सुणि दूत
तविहि लहीड भालहलि, त जि लोय भवि भविहिं पामइ
ईमइ नीसत नर ति (नि) गुण, उतमाग जण जणह नामइ
बभ पुरन्दर सुर असुर, तिह न लघइ कोइ
लब्भइ अधिक न ऊण पणि, भरहेसर कुण होइ ॥ ९५ ॥

ठवणि ६

नेसि निवेसि देसि घरि मदिरि, जलि थलि जगलि गिरि गुह कदरि
दिसि दिसि देसि देसि दीपतरि, लहीउ लाभइ जुगि सचरा चरि ॥ ९६ ॥
अरिरि दूत सुणि देवन दानव, महिमडलि मडल वैमानव
कोइ न लघइ लहीया लीह, लाभइ अधिक न उछा दीह ॥ ९७ ॥
घण कण कचण नवइ निहाण, गयघड तेजीय तरल केकाण
सिर सरवस सपतग गमीजइ, तोइ निसत्त पणइ न नमीजइ ॥ ९८ ॥

ठवणि ७

दूत भणइ एहुभाई, पुन्निहिं पामीजइ
पइ लागीजइ भाई, अम्ह कहीउ कीजइ ॥ ९९ ॥
अवर अठाणू जु जई पहिलू, मिलसिइ तु तुझ मिलिउ न सयलु
कहि विलब कुण कारणि कीजइ, माम म निगमि वार वलीजइ ॥१००॥
वार वरापह करसण फलीजइ, ईणि कारणि जई वहिला मिलीइ
जोइ न मन सिउ वात विमासी, आगइ चारूअ वात विणासी ॥१०१॥
मिलिउ न किहा कटक मेलावइ, तउ भरहेसर तइ तेडावइ
जाण रखे कोइ भूझ करे सिइ, सहू कोइ भरह जि हियडइ धरेसिइ ॥१०२॥
गाजता गाढिम गज भीम, ते सवि देसह लीधा सीम
भरह अछइ भाइ भोलावउ, तउ तिणि सिउ न करीजइ दावउ ॥१ ३॥

वस्तु

तव सु जपइ तव सु जपइ, बाहुबलि राउ
अप्पह बाह, भजा न वल, परह आस कहइ कवण कीजइ

सु जि मूरख अजाण पुण, अवर देखि वरवयइ ति गज्जइ
हु एकल्लउ समर भरि, भड भरहेसर घाइ
भंजउ भुजबलि रे भिडिय, भाह न भेडि न धाइ ॥१०४॥

ठवणि ८

जइ रिसहेसर केरा पूत, अवर जि अम्ह सहोयर दूत
ते मनि मान न मेल्हइ कीमइ, आलईयाणम भखिषि ईम्हइ ॥१०५॥
परह आस किणि कारणि कीजइ, साहस सइवर सिद्धि वरीजइ
हीउं अनइ हाथ हत्थीयार, एह जि बीर तणउ परिवार ॥१०६॥
जइ कोरि सीह सियालिइं खाजइ, तु वाहुबलि भूयवलि भाजइ
जु गाइ वाघिणि षाई जइ, अरे दूत तु भरह जि जीपइ ॥१०७॥

ठवणि ९

जु नवि मन्नसि आण, वरवह , वाहूबलि
लेसिइ तु तू प्राण, भरहेसर भूयवलि ॥१०८॥
जस छन्नवइ कोडि छइ पायक, कोडि वहुत्तरि फरकइ फारक
नर नरवर कुण पामइ पारो, सही न सकीइ सेना भारो ॥१०९॥
जीवन्ता विहि सहू सपाडइ, जु तुडि चडिसि तु चडिउ पवाडइ
गिरि कदरि अरि छपिउ न छूटइ, तू वाहूवलि मरि म अखूटइ ॥११०॥
गय गद्दह हय हड जिम अन्तर, सीह सीयाल जिसिउ पटतर
भरहेसर अन्नइ तूय विहरउ, छूटिसि किम्हइ करत न निहरू ॥१११॥
सखसु सु पि मनावि न भाई, कहि कुणि कूडी कूमति विलाइ
मु झि म मूरख मरि न गमार, पय पणमीय करि करि न समार ॥११२॥
गढ गजिउ भड भजिउ प्राणि, तइ हिव सारइ प्राण विनाणि
अरे दूत बोली नवि जाण, तु ह आव्या जमह प्राण ॥११३॥
कहि रे भरहेसर कुण कहीइ, मइ सिउ रणि सुरि असुरि न रहीइ
जे चक्किइ, चक्रवृति विचार, अम्ह नर्गरि कू भार अपार ॥११४॥
आपणि गगा तीरि रमता, धसमस घू धलि पडीय, घमता
तइ उआलीय गयणि पडतउ, करुणा करीय वली झालतउ ॥११५॥
ते परि काइ गमार वीसार, जु तुडि चडिसी तु जाणिसि सार
जउ मउडुधा मउड उतारउ, खहिरू रिल्लि जुन हयगय तारउ ॥११६॥

जउ न मारउ भरहेसर राउ, तउ लाजइ रिसहेसर ताउ
भड भरहेसर जई जणावे, हय गय रह वर वेगि चलावे ॥११७॥

वस्तु

दूत जपइ, दूत जपइ, सुणि न सुणि राउ
तेह दिवस परि म न गिणसि, गग-तीरि खिल्लंत जिणि दिणि
चल्लंतइ दल भारि जसु, सेस सीस सलसलइ फणि मणि
ईमई याण स मानि रणि, भरहेसर छइ दूरि
आपापू वेढिउ गणे, कीलि उगतइ सूरि ॥११८॥
दूत चल्लिउ, दूत चल्लिउ, कहीय इम जाम
मतिसरि चिंतविउ, तु पसाउ, दूतह दिवारइ
अवर अठाणू कुमर वर, वाइ सोइ पहतु पचारइ
तेह न मनिउ आविउ, वलि भरहेसरि पासि
अखई य सामिय सधिबल वंधवसिउ म विमासि ॥११९॥

ठवणि १०

तउ कोपिहि कलकलिउ काल के य कालो नल
ककोरइ कोरवीयउ करमाल महावल
कालह कलयलि कलगलत, मउडाधा मिलीया
कलह, तणइ कारणि, कराल, कोपिहि परजलीया ॥१२०॥
हऊय कोलाहल गहगहाटि गयणगणि गज्जिय
सचरिया सामत सुहड सामहणीय सज्जीय
गडयडत गय गडीय, गेलि गिरिवर सिर ढालई
गूगलीया गुलणइ चलत करिय ऊलालइ ॥१२१॥
जुडइ भिडइ भडहडइ खेदि खडखडई खडाखडि
धाणीय धूणीय घोसवइ दतूसलि दोत [तडा] डि
खुरतलि खोणि खणंति खेदि तेजीय तखरिया
समंड धसइ धसमसइ सादि पयसइ पाषरिया ॥१२२॥
कधग्गल केकाण कवी करडइ कडीयाली
रणणइ रवि रण वखर सरवर घण घाघरीयाली
सीचाणा वरि सरइ फिरइ सेलई फोकारइ
उडइ आडइ अंगि रगि असवार विचारइ ॥१२३॥

धसि धामइ धडहडइ धरणि रथि सारथि , गाढा
जडोय जोध जडज्रोड जरद सन्नाहि , मन्नाडा
पसरिय पायल पूर कि पुण रलीया रयणार ,
लोह लहर वर वीर वयर वहवटिइ अवायर ॥१२४॥
रयणीय रवि रण तूर तार त्रबक त्रैह त्रहीया
ढाक ढूक ढम ढमीय ढोल राउत रहरहीया ।
नेच नीसाण निनादि नीभरंण निरमीय
रण भेरी भुकारि भारि भूयबलिहिं वियभीय ॥१२५॥
चल चमाल करिमाल कुत कडतल कोदड
भनकइ सावल सवल सेल हल मसल पयड
सीगिणि गुण टकार सहित बाणावलि तणइ
परशु उलालइ करि धरइ भाला उलालइ ॥१२६॥
तीरीय तोमर भिडमाल डवतार कसवध
सागि मकित तरूआरि छुरीय अनु नागतिवध
हय खर रवि उछलीय खेह छाईय रविमडल
धर धूजइ कलकलीय कोल कोपिउ काहगल ॥१२७॥
टलटलीया गिरिटेक टोल खेचर खलभलीया
कडडीय कूरम कधसधि सायर भलहलीया
चल्लीय समहरि सेस सिसु सलसलीय न सक्कइ
कचण गिरि कधार भरि कमकमीय कसक्कइ ॥१२८॥
कपीय किंनर कोडि पडीय हरगण हडहडीया
सकिय सुरवर सगि सयल दाणव दडवडीया
अति प्रलव लहकइ प्रलव वल विंव चिहु दिसि
सचरिया सामत सीस सीकिरिहिं कसाकसि ॥१२९॥
जोईय भरह नरिंद कटक मूछह वल घल्लइ
कुण वाहूवलि जे उ वरव मइ सिउ वल वुल्लइ
जइ गिरि कदरि विचरि वीर पइसतु न छूटइ
जइ थली जगलि जाइ किम्हइ तु मरइ अखूटइ ॥१३०॥
गज साहणि सचरीय महुणर वेढीय पोयणपुर
वाजीय वूव न वहकीयउ वाहूवलि नरवर

तसु मतिसरि भरह राउ सभालीउ साचु
ए अविमामिउ किउ काइं आजजि तइ काचु ॥१३१॥
बधव सिउ नरवीर काइ इम अतर दोषइ
लहु बधव नीय जीव जेम कहि काइ न लेखइ
तउ मनि चिंतइ राय किसिउ एय कोइ पराठीउ
ओसरी उवनि वीर राउ रहीउ अवाठीउ ॥१३२॥
गय आगलीया गल—गलत दीजइ हय लास
हुइ हसमस 'भरहराय केरा आवास
एकि निरन्तर वहइं नीर एकि ईधण आणई
एक आलसिइ परतगु पागु आणिउ तृण ताणइ ॥१३३॥
एकि ऊतारा करीय तुरीय तलसारे बाधइ
इकि भरडइ केकाण खाण इकि चारे राधइ
इकि भीलीय नय नीरि तीरि तेतीय वोलावइ
एकि वारू असवार सार साहण वेलावइ ॥१३४॥
एकि आकुलीया तापि तरल तडि चडोय झपावइ
एकि गूडर सावाण सुहड चउरा दिवरावइ
सारीय सामि न सामि आदिजिण पूज पयासइ
कसतुरीय कुकुम कपूरि चन्दनि वनवासइ ॥१३५॥
पूज करीउ चक्ररयण राउ, वइठइ भू जाई
बाजीय सख असख राउ, आव्या सवि धाई
मडलवइ मउडुध मु (सु ?) हड जीमइ सामतह
सइ हत्थि दियइ तबोल कणय ककण झलकतह ॥१३६॥

वस्तु

दूत—चलीउ, दूत चलीउ, बाहुबलि पासि
भणइ भूर नरवर नि सुणि, भरह राउ पयसेव कीजइ
भारिहिं भीम न कवणि रणि, एउ भिडत भूय भारि भज्जइ
जइ नवि मूरष एह तणी, सिरवरि आण वहेसि
सिउ परिकरिइ समर भरि, सहूइ सयरि सहेसि ॥१३७॥
राउ बुल्लइ, राउ बुल्लइ, सुणि न सुणि दूत
ताय पाय पणमतय, मुझ बधव अति खरउ लज्जइ
तु भरहेसर तसतणीय, कहि न कीम अम्हि सेव किज्जइ

भारिइ भूयवलि जुन भिडउ, भुज भुंज भडिवाउ
तउ लज्जइ तिहूयण धणी, सिरि रिसहेसर ताउ ॥१३८॥

ठवणि ११

चलीय दूत भरहेसरह तेय वात जणावइ
कोपानलि परजलीय वीर साहण पलणावइ
लागी य लागि निनादि वादि आरति असवार
वाहूवलि रणि रहिउ रोसि मांडिउ तिणिवार ॥१३९॥
ऊड कडोरण रणत सर वेसर फूटइं
अतरालि आवइ ई याण तीह अत अखूटइ
राउत राउति योध-थोधि पायक पायक्किहि
रहवर रहवरि वीर वारि नायक नायक्किइ ॥१४०॥
वेढिक विढइ विरामि सामि नामिहिं नरनरीया
मारइ मुरडीय मूछ-मेच्छ मनि मच्छर भरीया
ससइ मसइ धसमसइ, वीर धड वड नरि नाचइ
राषस रीरा रव करति रूहिरे सवि राचइ ॥१४१॥
चापीय चुरइ नरकरोडि भुयवलि भय भिरडइ
विण हथीयार कि वार एक दातिहिं दल करडइं
चालइं चालि चम्माल चाल करमाल ति ताकइ
पडइ चिंध झूझइ कवन्ध सिरि समहरि हाकइ ॥१४२॥
रूहिर रल्लितहिं तरइ तुरंग गय गुडीय अमूझइ
राउत रण रसि रहित बुद्धि समरगणि सूझइं
पहिलइ दिणि इम झूझ हवुं सेनह मुख मडण
सध्या समइ ति वारणु ए करइ भट विहु रण ॥१४३॥

ठवणि १२

हिव सरस्वती धउल

तउ तहिं वीजए दिणि सुविहाणि, उठीउ एक जी अनलवेगो
सडवड समहरे वरस ए बाणि, छयल सुत छलियए छावडु ए
अरीयण अंगमइ अगोअगि, राउ तो रामति रणि रमइ ए
लडसड लाडउ चडीय चउरंगि, आरेयणि सयवर वरइं ए ॥१४४॥

त्रूटक

वरवरइं सयवर वीर, आरेणि साहस धीर
मडलीय मिलिया जान, हय हीस मगल गान

हय हीस-मगल गाजि गाजीय, गयण गिरि गुह गुमगुमइ
धमधमीय धरयल ससीय न सवइ, सेस कुलगिरि कमकमइ
धस धसीय धायइ धारधा वलि, धीर वीर विहडए
सामत समहरि, समु न लहइ मडलीक न मडए ॥१४५॥

धउल

मडए माथए महियलि राउ, गाडिम गय घड टोलव ए
पिडिपर परवत प्राय, भड घड नरवए नाचवइ ए
काल कवोल ए करि करमाल, झाझए झूझिहि झलहलइ ए
भाजए भड घड जिम जम जाल, पचायण गिरि गडयड ए ॥१४६॥

त्रूटक

गडयडइ गजदलि सीहु, आरेणि अकल अवीह
धसमसीय हयदल धाइ, भडहडइ भय भडिवाइ
भड-हडइ भय भडवाइ भुयबलि, भरीय हुइ जिम भीभरी
तहि चन्द्र चूडह पुत्र परवलि, अपिउ नरवइ नर नरतरी
वसमलीय नदण वीर वीसमू, सेल सर दिखाड ए
रहु रहु रे हणि हणि भणतू अपड पायक पाडए ॥१४७॥

धउल

पाडीय सुखेय सेणावए दन्त, पूठिहि निहणीय रणरणीय
सूर कुमारह राउ पेखत, भिरडए भूयदड वेउ
नयणिहि निरसीय कुपीयउ राउ, चक्करयण तउ सभरइ ए
मेल्हइए तेह प्रति अति सकसाउ, अनलवेगो तहि चितवइ ए ॥१४८॥

त्रूटक

चितवईय सुहडह राउ, जो अई उषूटऊ आउ
हिव मरण एह जि सीम, रजइअ चक्रवृति जीम
रजवईय चक्रवृति जीम इम, भणि चकु मुट्ठिहि पडषली
सचरिउ सूरउ सूर मडलि, चकु पुहचइ तहि वली
षडषडीय नदण चन्द्र चूडह, चन्द्रमडल मोह ए
झलहलीय झालि झमालि तुट्ठिहि, चक्क तहि तहि रोह ए ॥१४९॥

धउल

रोहीउ राउत जाइ पातालि, विज्जाहर विज्जा बलिहि
चक्क पहूचए पूठि तीणि तालि, वोलए बलवीय सहस जसो

रे रे रहि रहि कुपीउ राउ, जित्थु जाइसि जित्थु मारिवु ए
तिहूयणि कोइ न अछइ उपाय, जय जोषिम जीणइ जीवीइ ए ॥१५०॥

त्रूटक

जीविवा छडीय मोह, मनि मरणि मेल्हीय थोह
समरीय तु तीणि ठामि, इकु आदि जिणवर सामि
[इकु आदि जिणवर सामि] समरीय, वज्जपजर अणसरइ
नरनरीउ पाषलि फिरीउ तस मिरू, चक्क लेइ सचरइ
पयकमल पुज्जइ भरह भूपति, वाहुवलि वल खलभलइ
चक्रपाणि चमकीय चीति कलयलि, कलह कारिणि किलगिलइ ॥१५१॥

धउल

कल गिलइ चक्रधर सेन सग्रामि, वोलए कवण सु बाहुबले
तउ पोयण पुर केरउ सामि, बरवह दिसए दस गुण ए
कवण सो चक्क रे कवण सो जाख, कवणसु कहीइए भरह राउ
सेन सहारीय सोधउ साष, आज मल्हाउ रिसह वसो

ठवणि १३ हिव चउपइ

चन्द्र चूड विज्जाहर राउ, तिणि वातइ मनि विहीय विसाउ
हा कुल मडण हा कुलवीर, हा समरगणि साहस धीर
कहिइ कहि नइं किसिउ घणु, कुल न लजाविउ तइ आपाणउ
तइ पुण भरह भलाविउ आप, भलु भणाविउ तिहूयणि बापु
सुजि बोलइ वाहूवलि पासि, देव म दोहिलुंइं हीइ विमासि
कहि किण ऊपरि कीजइ रोसु, एहिजि देवह दीजइ-दोसु
सामीय विसमु करम विपाउ, कोइ न छूटइ रक न राउ
कोई न भाजइ लिहिया लीह, पामइ अधिक न ओछा दीह
भजउं भूयवलि भरह नरिंद, मइ सिउ रणि न रहइ सुरिंद
इम भणि वर वीय बावन वीर, सेलइ समहरि साहस धीर
घसमस धीर घसइ धडहडइ, गाजइ गजदलि गिरि गडयडइ
जसु भुइ भड हड हडइ भडक्क,, दल दड वडइ जि चड चडक्क
मारइ दारइ खल दल खणइ, हेड हयोहणि हयदल हणइ
अनल वेग कुण कूखइ अछइं, इम पचारीय पाडइ पछइ
नरू निरूवइ नरनरइ निनादि, वीर विणासइ वादि विवादि

तिन्नि मास एकल्लउ भिडइ, तउ पुण पुरउ चक्कहं चडइ
चऊद कोडि विद्याधर सामि, तउ झूरह रतनारी नामि
दल ददोलिउ दउढ वरीस, तउ चक्किइ तसु छेदीय सीस
रतन चूड विद्याधर धसइ, गजइ गयघड हियडइ हसइ
पवन जय भड भरहु नरिंद, सु जि सहारीय हसइ सुरिंद
बाहुलीक भरहेसर तणु, भड भाजणीय भीडीउ घणु
सुरसारी वाहूवलि जाउ, भडिउ तेण तहिं फेडीय ठाउ
अमित केत विद्याधर सार, जस पामीय न पौरुष पार
चल्लिउ चक्रधर वाजइ अगि, चूरिउ चक्रिहिं चडिउ चउरगि
समर बध अनइ वीरह बध, मिलीउ समहरि विहु सिउ बध
सात मास रहीया रणि वेउ, गई गहगहीया अपछरा लेउ
सिर ताली दुरी ताली नामि, भिडइ महाभड वेउ सग्रामि
आव्या बरवह बाथोबाथि, परभवि पुहता सरसा साथि
महेन्द्र चूड रथचूड नरिंद, झूझइ हडहड हसइ सुरिंद
हाकइ तकइ तुलपइ तुलपइ आठि मासि जई जिमपुरि मिलइ
दड लेई धसीउ युरदादि, भरतपूत नरनरइ निनादि
गजीउ वलि बाहूबलि तणउ, वस मल्हाविउ तीणि आपणु
सिंहरथ उठीउ हाकत, अमित गति झपिउ आवत
तिन्निमास धड धूजिउ जात, भरह राउ मनि वसिउ वासु
अमित तेज प्रतपइ तहि तेजि, सिउ सारगिइ मिलिउ हेजि
धाइ धीर हणइ वे बाणि, एक मास निवड्या नीयाणि
कुडरीक भरहेसर जाउ, लस भडत न पाछउ पाउ
द्रठदीय दलि बाहूबलि राय, तउ पय पकइ प्रणमीय ताउ
सूरिजसोम समर हाकंत, मिलिया तालि तोमर ताकत
पाच वरिस भरभोलीय घाइ, नीय नीय ठामि लिवारिआ राइ ॥१७२॥

इकि चुरइं इकि चपइ पाय, एकि डारइ एकि मारइ घाइ
झल झलन्त झूझइ सेयस, धनु धनु रिसहेसरनु वस
सकमारी भरहेसर जाउ, रण रसि रोपइ पहिलउ पाउ
गिणइ न गाठइ गजदल हणइ, धणरसि धीर धणावइ धणइ
बीस कोडि विद्याधर मिली, ऊठिउ सुगति नाम किलगिली
शिव नदनी सिउ मिलोउ तालि, बासठि दिवस विहु जमजालि

कोपि चडिउ चल्लिउ चक्रपाणि, मारउ वयरी वाण विनाणि
मडी रहिउ बाहूबलि राउ, भजउ भणइ भरह भडिवाउ ॥१७६॥
बिहु दलि वाजि रणि काहली, खलदल खोणि खे खल भली ॥१७७॥
उडीय खेह न सूझइ सूर, नवि जाणि सवार असूर
पडइ सुहड घड घायइ घसी, हणइ हणोहणि हाकइ हसी ॥१७८॥
गडयड गघघड ढीचा ढलइ, सूना समा तुरग मग तुलइ
वाजइ धणुही तणा धोकार, भाजइ भिडत न भेडिगार ॥१७९॥
वहइं रूहिर नइ सिखर तरइ, री री या रट राषस करइ
हयदल हाकइ भरह नरिंद, तु सोहसु लहइ सग्गि सुरिंद ॥१८०॥
भरह जाउ सरभु सग्रामि, गाजइ गजदल आगलि सामि
तेर दिवस भड पडिउ धाइ, घूणि सीस बाहूबलि राइ ॥१८१॥
तीह प्रति जपइ सुरवर सार, देखि एवडु भड सहार
काइ मरावउ तम्हि इम जीव, पडसिउ नरकि करता रीव ॥१८२॥
गज ऊतारीय वधव वेउ, मानिउ वयण सुरिंदह तेउ
पइसइ मालाखाडइ वीर, गिरिवर पाहिइ सवल शरीर
वचन झूझि भड भरहु न जिणइ, दृष्टि झूझि हारिउ कुण अणइ
दडि झूझि झड झपीय पडइ, बाहुपासि पडिउ तडफडइ ॥१८४॥
गूडा समु धरणि मझारि, गिउ बाहूवलि मुष्टि प्रहारि
भरह सवल तइ तीणइ घाइ, कठ सगाणउ भूमिहिं जाइ ॥१८५॥
कुपीउ भरह छ खण्डह धणी, चक्र पठावइ भाइ भणी
पाखलि फिरी सु वलीउ जाम, करि बाहूबलि धरिउ ताम ॥१८६॥
बोलइ बाहूबलि वलवत, लोह खडि तउ गरवीउ हत
चक्र सरीसउ चूनउ करउ, सयलह गोत्रह कुल सहरउ ॥१८७॥
तु भरहेसर चितइ चीति, मइ पुण लोपीय भाईय भीत्ति
जाणउ चक्र न गोत्री हणइ, माम महारी हिव कुण गिणइ ॥१८८॥
तु वोलइ बाहूबलि राय (उ), भाईय मनि'म म धरसि विसाउ
तइ जीतउ मइ हारिउ भाइ, अम्ह शरण रिसहेसर पाय ॥१८९॥

ठवणि १४

तउ तिहिं च चितइ राउ, चडिउ सवेगइ वाहुबले
दूहविउ ए मइ वडु भाय, अविमासिइ अविवेक वति ॥१९०॥
धिग धिग ए एय ससार, धिग धिग राणिम राजसिद्धि
एवड ए जीव सहार, कीधउ कुण विरोधवसि

कीजइ ए कहि कुण काजि, जउ पुण बधव आवर ए
काज न ए ईणइ राजि, धरि पुरि नयरि न मन्दरिहि ॥१९२॥
मिरवर ए लोच करेइ, कासगि रहीउ बाहुवले
असूउ ए अखि भरेउ, तस पय पणमए भरह भडो ॥१९३॥
बधव ए बाइ न बोल, ए अविमासिउ मइ किउ ए
मेल्हिम ए भाई निटोल, ईंणि भवि हु हिव एकलु ए ॥१९४॥
कीजई ए आज पसाउ, छडि न छडि न छयल छलो
हियडइ ए म धरि विमाउ भाई य अम्हे विरासीया ए ॥१९५॥
मानई ए नवि मुनिराउ, मौन न मेल्हइ मन्नवीय
मुक्कइ ए नहु नीय माण, वरस दिवस निरसण रहीय ॥१९६॥
बभिउ ए सुंदरि वेउ, आवीय बधव बूझवइ ए
ऊतरी ए माण—गयद, तु केसवलिसिरि अणसरइ ए ॥१९७॥
ऊपनूं ए केवलनाण, तु विहरइ रिसहेस सिउ
आवीउ ए भरह नरिंद, सिउं परगहि अवझपुरी ए ॥१९८॥
हरिषीया ए हीइ सुरिंद, आपण पइ उच्छव करइ ए
वाजई ए ताल कसाल, पडह पखाउज गमगमइ ए
आवई ए आयुध साल, चक्क रयण तउ रग भरे
सख न ए जस केकाण, गयघड रहवर राणिमह ॥२००॥
दस दिसि ए वरतइ आण, भड भरहेसर गहगहइ ए
रायह ए गच्छ सिणगार, वयरसेण सूरि पाटधरो ॥२०१॥
गुणगणह ए तणु भडार, सालिभद्र सूरि जाणीइ ए
कीधउ ए तीणि चरितु, भरह नरेसर राउ छदि ए ॥२०२॥
जो पढइ ए वसह वदीत सो नरो नितु नव निहि लहइ ए
सवत ए बार(१२) एकतालि(४१) फागुण पचमिइ एउ कीउए ॥२०३॥

✲

जीव दया रास

रचयिता .

कवि आसिग

रचना-काल

वि स १२५७ (१२०० ई.) लगभग

'जीवदया रास

उरि सरसति आसिगु भणइ, नवउ रासु जीवदया - सारु ।
कनु धरिवि निसुणेहु जण, दुत्तरू जेम तरहु ससारु ।। १ ।।
जय जय जय पणमउ सरसत्ती । जय जय जय खिवि पुत्थाहत्थी ।
कसमीरह मुखमडणिय, तइ तुट्टी हउ रयउ कहाणउ ।
जालउरउ कवि वज्जरइ, देहा सरवरि हंसु वखाणउ ।। २ ।।
पहिलउ अक्खउ जिणवरधम्मु । जिम सफलउ हुई माणुसजमु ।
जीवदया परिपालिजए, माय वप्पु गुरु आराहिजए ।
सव्वह तित्थह तरुवर ठविजइ, (जिम ?) छाही फलु पावीजइ ।। ३ ।।
देवभत्ति गुरुभत्ति अराहहु । हियडइ अखि धरे विणु चाहहु ।
धणु वेचहु जिणवर भवणि, खाहु पियहु नर वधहु आसा ।
कायागढ तारुण भरि, ज न पडहिं जमदेवह पासा ।। ४ ।।
सारय सजल सरिसु परघधउ । नालिउ लोउ न पेखइ अधउ ।
डुंगरि लग्गइ दव हरणि, तिम माणुसु वहु दुक्खह आलउ ।
डज्जइ अवगुण दोसडइ, जिम हिम वणि वणगहणु विसालउ ।। ५ ।।
नालिउ अप्पउ अप्पइ दक्खइ । पायह दिट्ठि बलतु न पिक्खइ ।
गणिया लब्भहिं दिवसडइ, जजि मरेवउ त वीसरियउ ।
दाणु न, दिनउ तपु न किउ, जाणतो वि जीउ छेतरियउ ।। ६ ।।
अरि जिय यउ चिंतिवि किरि धमु । वलि वलि दुलहु माणुसजमु ।
नत्थि कोइ कासु वि तणउ, माय ताय सुय सज्जण भाय ।
पुत कलत्त कुमित्त जिम, खाइ पियइ सवु पच्छइ थाइ ।। ७ ।।
धणि मिलियइ वहु मग्ग जणहार । किं तसु जणणिहिं किं महतार ।
किं केतउ मागइ धरणि पुत्तु, होइ प्राणी णेइ लेसइ ।
विहव ण वारह पत्तगह, वोलाविउ को सावु, न देसइ ।। ८ ।।

जणणि भणइ मइ उयरह धरियउ । वप्पु भणइ महु घरि अवतरियउ ।
अणखाइय महिलिय भणइ, पातग तणइ न मारगि जाउ ।
जरथु धरमु विहचिवि लियउ वि, दिनत्थी पतु चडसइ न्हाउ॥ ९ ॥
यउ चिंतिवि निय मणिहिं धरिज्जइ, कुडी साखि न कामु वि दिज्जइ ।
आलि दि नइ आलसउ जउ, अजु हूवउ कालु न होसइ ।
अनु चिंततहे अनु हुइ, धवइ पडियउ. जीउ मरेसइ ।
पुडइ निपन जेम जलबिंदु । तिम ससारु असा समुंदु ॥ १० ॥
इदियालु नडपिखणउ जिम, अवरि जलु वरिसइ मेहु ।
पच दिवस मणि छोहलउ, तिम थहु प्रियतम सरिसउ नेहु ॥
अरिजिय परतह पालि बधिजइ । जीविय जोवण लाहउ लीजइ ॥ ११ ॥
अलियउ कह वि न वोलिजइ, सुद्धइ भाविहि दिज्जइ दाणु ।
धम्म सरोवर विमल जलु, कुंडपाउ नियमणि यउ जाणु ॥
पच दिवस होसइ तारुन्नु । ऊडइ देह जिम मन्दिर सुन्नु ॥ १२ ॥
जाणतो विय जाणइ, दिक्खाता हइ होई पयाणउ ।
वट्टह सवलु नहु लयउ, आगइ जीव किसउ परिमाणु ॥
दिवसे मासे पूजइ कालु । जीउ न छूटइ विरधु न वालु ॥ १३ ॥
छडउ पयाणउ जीव तुहु, साजणु मितु वोलावि वलेसइ ।
धम्मु परतह सवलओ, जता सरिसउ त जि वलेसइ ॥
अरि जिय जइ बूक्कहि ता बूक्कु । वलि वलि सीख कु दीसइ तूक्कू ॥ १४ ॥
वारि मसाणिहि चिय वलइ, कुडि दाउ ती गधि न आवइ ।
पावकूव भितरि पडिउ तिणि, जिणधम्मु कियउ नवि भावइ ॥ १५ ॥
जिम कुभारि घडियउ भडू । तिम माणुसु कारिमउ करडु ।
करतारह निप्पाइयउ, अट्ठुत्तरसउ वाहिसयाइं ।
जिम पसुपालह खीरहरु, पुट्टिहिं लग्गउ हिंडइ ताइं ॥ १६ ॥
देहा सरवर मज्झिहिं कमलु । तहि वइसउ हसा धुरि धवलो ।
कालु भमरु उपरि भमइ, आउखए रस गधु वि लेसई ।
अणखूटइ नहु जिउ मरइ, खूटा उपर घरी न दीसइ ॥ १७ ॥
नयर पुक्क आया वणिजारा । जणणि समाणु अरिहिं परिवारा ।
धम्म फयाणउ ववहरहु, पावतणी भडसाल निवारहु ।
जीवह लोहु समग्गलउ कुमारगि जणु अतउ वारहु ॥ १८ ॥

एगिंदिय रे जीव मुणिज्जइ। वेइ दिय नवि आसा किज्जइ।
तेई दिय नवि सभलइ, चउरिंदिय महिमडलि वासु।
पचिंदिय तुहु करहि दय, जिणधम्मिहि कज्जइ अहिलासु॥ १९॥
धम्मिहि गय घडतुरियह घटट। मयभिभल कचण कसवट्ट।
धम्मिहि सज्जण गुणपवर, धम्मिहि रज्ज रयण भडार।
धम्मफलिण सुकलत्त घरि, त्रे पक्खमुद्ध सीलसिंगार॥ २०॥
धम्मिहि मुक्खसुक्ख पाविज्जइ। धम्मिहि भवससारु तरीजइ।
धम्मिहि धणु कणु सपडइ, धम्मिहि कचण आभरणाइ।
नालिय जीउ न जाणइ य, एहि धम्मह तण फलाइ॥ २१॥
धम्मिहि मपज्जइ सिणगारो। करि ककण एकावलि हारु।
धम्मि पटोला पहिरिजहि, धम्मिहि सालि दालि घिउ घोलु।
धम्मि फलिण वितसा (रु?) लियइ, धम्मिहि पानवीड तबोलु॥ २२॥
अरि जिय धम्मु इक्कुपरिपालहु। नरयवारि किवाडइ तालहु।
मणु चचलु अविचलु करहु, कोहु लोहु मय मोहु निवारहु।
पचवाण कामहि जिणहु जिम, सुह सिद्धिमग्गु तुम्हि पावहु॥ २३॥
सिद्धिनामि सिद्धि वरसारु। एकाएकि कहहु विचारु।
चउरासी लक्ख जोणि, जीवह जो घल्लेसइ घाउ।
अतकालि समरइ अगि, कोइ तसु होइ हु दाहु॥ २४॥
अरु जीवइ अस्साखइ मारइ। मारोमारि करइ मारावइ।
मुच्छाविय धरणिहि पडइ, जीउ विणासिवि जीतउ मानइ।
मच्छगिलिगिगलि पुणु वि पुणु, दुख सहई ऊथलियइ पनइ॥ २५॥
पन्नउ जउ जगु छन्नउ मनउ। कूवह ससारिहि उप्पनउ।
पुन म सारिहि कलिजुगिहि, ढोलइ ज लाजइ ववहारु।
एकह जीवह कारणिण, सहसलक्ख जीवह सहारु॥ २६॥
वरिमा सउ आउपउ लोए। असी वरिस नहु जीवइ कोइ।
कूडी कलि आसिगु भणइ, दयारीजि नय नय अवतारु।
धमु चलिउ पाडलिय पुरे, एका कालु कलिहि सचारु॥ २७॥
मायभणेविणु विणउ न कीजइ। वहिणि भणिवि पावडणु न कीजइ
लहुड वडाई हा तिय मुक्की, लाज स समुद मरजाद।
घरघरिणिहि वीया पियइ, पिय हत्थि धोवावइ पाय॥ २८॥

सासुव बहूव न चलणे लग्गई । इह छाहइ पाडऊणइ मागइ ।
ससुरा जिट्ठह नवि टलइ, राजि करंती लाज न भावइ ।
मेलावइ साजण तणइ, सिरि उग्घाडइ वाहिरि धावइ ॥ २९ ॥

मित्तिहि मुक्का मित्ताचारि । एकहि घरणिहि हुई रखवाला ।
जे साजण ते खेलत गिइ, गोती कूका गोताचारा ।
हाणि विधि वट्टाधणइ, विहुरहि बार करहिं नहु सारा ॥ ३० ॥

कवि आसिग कलिअतरु जाइ । एक समाण न दीसई कोइ ।
के नरि पाला परिभमहि, के गय तुरि चडति सुखासणि ।
केई नर कठा बहहि, के नर वइसहि रायसिंहासणि ॥ ३१ ॥

के नर सालि दालि भुंजता । घिय घलहलु मज्झे विलहता ।
के नर भूषा (खा) दूषि (खि) यइ दीसहिं परघरि कमु करता ।
जीवता वि मुया गणिय, अच्छहि बाहिरि भूमि रूलता ॥ ३२ ॥

के नर तबोलु वि सभाणहिं । विविह भोय रमणिहिं सउ माणहि ।
के वि अपुनइ वप्पुडइ, अणु हुतइ दोहला करता ।
दाणु न दिनउं अनं भवि, ते नर परघर कमु करता ॥ ३३ ॥

आसेवंता जीव न जाणहिं । अप्पहि अप्पाउ नहुँ परियाणहि ।
चंचलु जीविउ धूय मरण, विहि विद्धाता वस इउ सीसइ ।
मूढ धम्मु परजालियइ, अजरु अमरु कलि कोइ ना दीसइ ॥ ३४ ॥

नव निधान जसु हुता वारि । सो बलिराय गयउ ससारि ।
बाहूबलि बलबंत गउ, धण कण जोयण करहु म गारहु ।
डुबंह घर पाणिउ भरिउ, पुहविहि गयउ सु हरिचंदु राउ ॥ ३५ ॥

गउ दसरथु गउ लक्खणु रामु। हिडइ घरउ म कोइ संविसाउ ।
बार बरसि वणु सेवियउ, लंका राहवि किय संहारु ।
गइय स सीय महासइय, पिक्खाहु इंदियालु ससारु ॥ ३६ ॥

जसु घरि जमु पाणिउ आणेई । फुल्लतरु जसु वणसइ देई ।
पवणु बुहारइ जसु ज्वहि, करइ तलारउ चामुड माया ।
खूटइ सो रावणु गयउ, जिणि गह बद्धा खाटहं पाए ॥ ३७ ॥

गउ भरथेसरु चवकधरंधरु । जिणि अट्ठावइ ठविय जिणेसरु ।
मंधाता नलु सगरु गओ, गउ कयरव-पंडव परिवारो ।
सेतुजा सिहरिहि चडेवि जिणि, जिणभवण कियउ उद्धारु ॥ ३८ ॥

जिणि रणि जरासिंधु विद्दारिउ। आहि दाणवु वलवंतउ मारिउ।
कंस केसि चाणरु, जिणि ठवियउ नेमिकुमारु।
वारवई नयरिय घणिउ कहहि सु हरि गोविहि मत्तारु॥ ३९॥

जिणु चउवीसमु वदिउ वीरु। कहहि सु सेणिउ साहस धीरु।
जिणसासण समुद्धरणु, विहलिय जण वंदिय सद्धारु।
रायग्गिह नयरियहं, बुद्धिमंतु गउ अभयकुमारु॥ ४०॥

पाउ पणासइ मुणिवर नामि। वयरसामि तह गोयमसामि।
सालिभद्द ससारि गउ, मंगलकलस सुदरिसण सारो।
थूलभद्द सतवंतु गवो धिगु, धिगु यह संसारु असारु॥ ४१॥

गउ हलधरु संजमसणगारु। गयसुकुमालु वि मेहकुमारु।
जंबुसामि गणहरु गयउ, गउ धन्नह ढंढणह कुमारु।
जउ चिंतिवि रे जीव तुहुँ, करि जिणाधंमु इक्कु परिवारो॥ ४२॥

जिणि सवच्चरु महि अंबाविउ। अवरि चंदिहिं नामु लिहाविउ।
ऊरिणि की परिथिमि सयल, अणु पालिउ जिणु धम्मु पवितु।
उज्जेणीनयरी घणिउ कह, अजरमकर विबकमदीतु॥ ४३॥

गउ अणहिलपुर जेसलु राउ। जिणि उद्धरियलि पुहवि सयाउ।
कलिजुग कुमरनरिंदु गउ, जिणि सब जीवह अभउ दियाविउ।
उवएसिहिं हेमसूरि गुरु, अहिणव 'कुमरविहारु' कराविउ॥ ४४॥

इत्थंतरि जण निसुणहु भावि। करहु धम्मु जिम मुच्चहु पावि।
इहिं ससारि समुद्दजलि, तरण तरंड सयल तित्थाइ।
वंदहु पूयहु भविय जण, जे तियलोह जिणभवणाइं॥ ४५॥

अट्ठावइ रिसहेसरु वदहु। कोडि दिवालिय जिम चिरु नदहु।
सितुज्जह सिहरिहिं चडिवि, अच्चउं साभिउ आदिजिणिदु।
आवुइ पणमउ पढमजिणु, उम्मुलइ भवतरुवरकंदु॥ ४६॥

उज्जिलि वदहु नेमिकुमारु। नव भव तिहुयणि तरहि संसारु।
अंवाइय पणमेहु जण, अवलोयण सिहरि पिक्खेहू।
विसम तुग अबर रयणा, वदहु संवु पजुनइ वेउ॥ ४७॥

थुणउ वीरु सच्चउरहं मंडणु। पावतिमिर दुहकंम विहडणु।
वंदउ मोढेरानयरि, चडावल्लि पुरि वंदउ देउ।
जे दिट्टउ ते वदियउ विमलभावि दुइ करजोडि॥ ४८॥

वाणारसि महुरह जिणचंदु। थंभणि जाइवि नमहु जिणिंदु।
संखेसरि चारोप पुरि, नागद्दहि फलवद्धि दुवारि।
वंदहु सामिउ पासजिणु, जालउरा गिरि 'कुमरविहारु'॥ ४९ ॥

कास बि देह हडइ दालिहु। कासु वि तोडइ पावह कहु।
कासु वि दे निम्मल नयण, खासु सासु खेयणु फेडेई।
जसु तूसइ पहु पासजिणु। तासु घरि नव निधान दरिसेइ॥ ५० ॥

वाला मंत्रि तणइ पाछोपइ। बेहल महिनदन महिरोपइ।
तसु सखहं कुलचंद फलु, तसु कुलि आसाइतु अच्छंतु।
तसु वलहिय पल्लीपवर, कवि आसिगु बहुगुण संजुत्तु॥ ५१ ॥

सा तउपरिया कवि जालउरउ। भाउसालि सुमइ सीयलरउ।
आसीद वदोही वयण, कवि आसिगु जाल उरह आयउ।
सहजिगपुरि पासह भवणि, नवउ रासु इहु तिणि निप्पाइउ॥ ५२ ॥

संवतु बारह सय सत्तावन्नइ। बिक्कमकालि गयइ पडिपुंनइ।
आसोयहं सिय सत्तमिहिं, हत्थो हत्थि जिण निप्पायउ।
संतिसूरि पयभत्तयरियं, रयउ रासु भवियहं मणमोहणु॥ ५३ ॥

बुद्धि रास

रचयिता

शालिभद्र सूरि

रचना-काल

अनुमानत १२५० वि. (१२०० ई.)

बुद्धि रास

पणमवि देवि अबाई, पचाइण गामिणी ।
समरवि देवि सीधाई, जिण सासण सामिणि ।।
पणमिउ गणहरु गोयम स्वामि, दुरिउ पणासइ जेहनइ नामिइ ।
सुहगुरु वयणे सग्रह कीजई, भोला लोक सीषामण दीजइ ।।
केई वोल जि लोक प्रसिद्धा, गुरु उवएसिइ केई लीद्धा ।
ते उपदेश सुणउ सवि रूडा, कुणहइ आल म देयो कूडा ।।
जाणीउ धरमु म जीव विणासु, अणजाणिइ घरि म करिसि वासु ।
चोरीकारु चडइ अणलीधी, वस्तु सु किमइ म लेसि अदीधी ।।
परि घरि गोठि किमइ म जाइसि, कूडउ आलु तूं मुहिया पामिस ।
जे घरि हुइ एकली नारि, किमइं म जाइसि तेह घरबारि ।।
घरपच्छोकडि रापे छीडी, वरजे नारि जि बाहिरि हीडी ।
परस्त्री वहिनि भणीनइ माने, परस्त्री वयण म धरजे काने ।।
मइ एकलउ मारगि जाए, अणजाणिउ फल किमइ म षाए ।
जिमता माणस द्रेठी म देजे, अकहि परि घरि किंपि म लेजे ।।
वडा ऊतर किमइ न दीजइं, सीष देयता रोस न कीजइ ।
ओछइ वासि म बसिजे कीमइ, धरमहीणु भव जासिइ ईमइ ।।
छोरू वींटी ज हुइ नारि, तउ सीषामण देजे सारी ।
अति अधारइ नइ आगासइ, डाहउ कोइ न जिमवा बइसइं ।।
सीषि म पिसुनपणु अनु चाडी, वचनि म दूमिसि तू निय माडी ।
मरम पीयारु प्रगट न कीजइ, अधिक लेइ नवि ऊछुं दीजइ ।।
विसहरु जातु पाय म चापे, आविइ मरणि म हीयडइ कापे ।
ग्रहणारु पाषइं व्याजि म देजे, अणपूछिइ घरि नीर म पीजे ।।
क्रहिसि म कुणहनीय घरि गूझो, मोटा सिउ म माडिसि झूजो ।
अणविमास्या म करिसि काज, तं न करेवं जिणि हुइ लाज ।।

जणि वारितउ गामि म जाए तं बोले जं पुण निरवाहे।
षातु काइ हीडि म मागे, पाछिम राति वहिलु जागे॥
हियडइ समरि न कुल आचारो, गणि न असार एह ससारो।
पाचे आगुलि ज धन दीजइ, परभवि तेहतणुं फलु लीजइ॥

ठवणि १

मरम म बोलिसि वीरु, कुणहइ केरउ कुतिगिहिं।
जलनिहि जिम गंभीरु, पुहविइ पुरुष प्रससीइ ए॥
उछिनु धनु लेउ, त्यागि भोगि जे वीद्रवइ ए।
पवहणि तडि पगु देउ, जाणे सो साइरि पडइ ए॥
एक कन्हइ लिइ व्याजि, बीजाह्लइ व्याजि दीयए।
सो नर जीविय काजि, विस वह्नि वन सचरइ ए॥
ऊडइ जलि म नपइसि, अधिक म बोलिसि सयणुस्युं।
सुनइ घरि म न पइसि, चउहटइ म विढिसि नारिस्यु॥
बोल विच्यारिय बोलि, अविचारीय घाघल पडइ ए।
मूरष मरइ निटोल, जे घण जौवण वाउला ए॥
बल ऊपहरऊ कोपु, बल ऊपहरी वेढि पुण।
म करिसि थापणि लोप, कूडओ किमइ म विवहरसे॥
म करिस जूयारी मित्र, म करिसि कलि धन सापडए।
घणुं लडावि म पुत्र, कलह म करिजे सुयण सिंउ तु॥
धनु ऊपजतउं देषि, बाप तणी निंदा म करे।
म गमु जन्मु अलेषि, धरम विहूणा धामीयहं॥
कंठ बिहूणूं गानु, गुरु निवहूणउ पाढ पुण।
गरथ बिहूणुं अभिमान, ए त्रिहूइ असुहामणा ए॥

ठवणि २

हासउं म करिसि कंठइं कूया, गरथि मूढ म खेलि जूया।
म भरिसि कूडी साषि किहइं॥
गाठि सारि विणज चलावे, तं आरंभी ज निरवाहे।
निय नारी संतोष करे॥
मोटइ सरिसुं वयर न कीजिइं, वडा माणस वितउ न दीजइ।
बइसि म गोठि फलहणीया॥

गुरुया उपरि रीस न कीजइ, सीष पूछंता कुसीष म देजे ।
विणउ करंता दोष नवि ॥
म करिसि सगति वेशासरसी, धण कण कूड करी साहरसी ।
मित्री नीचिइ सिं म करे ॥
थोडामाहि थोडेरु देजे, वेला लाधी कृपणु म होजे ।
गरव म करीजे गरथतणुं ॥
व्याधि शत्रु ऊठता वारउ, पाय ऊपरि कोइ म पचारु ।
सतु क छडिसि देहि पडीउ ॥
अजाण्यारहि पढू म थाए, साजुण पीढ्या वाहर धाए ।
मत्र म पूछिसि स्त्री कन्हए ॥
अजाणि कुलि म करि विवाहो, पाछइ होसिइ हीयडइ दाहो ।
कन्या गरथिइ म वीकणसे ॥
देव म भेटिसि ठालइ हाथि, अणउलषीता म जाइसि साथिइं ।
गूझ म कहिजे महिलीयह ॥
परहुणइ आव्यइ आदर कीजइ, जूनु ढोर न कापड लीजइ ।
हूतइ हाथ न खाचीइए ॥
गाढइं घाड ढोर म मारउ, मातइ कलहि म पइसि निवारु ।
पर घरि मा जिमसि जा सकूया ॥
भगति म चूकीसि बापह मायी, जूठउ चपल म छडिसि भाई ।
गुरवु म करि गुरु सुहासिणी य ॥
नीपनइं धानि म जाइसि मूषिउ, गाठि गरथि म जीविसि लूषउं ।
मोटा पातक परहरउ ए ॥
गिउ देशातरि सूयसि म रातिइ, तिम न करेवूं जिम टलपातिइं ।
तृष्णा ताणिउ म न वहसे ॥
धणि फीटइ विवसाइ लागे, आचल उडी म साजण मागे ।
कुणहइ कोइ नइ ऊधरीउ ॥
[जीवतणुं जीवि राषीजइ, सविहु नइ उपगार करीजइ ।
सार संसारह एतलु ॥]
माणसि करिवा सवि व्यवहारु, पापी घरि म न लेजे आहार ।
म करिस पूत्र पडीगणुं ए ॥
जइ करिवुं तो आगइ म मागि, गाधीसिउ न करेवउ भागि ।
मरता अरथु म लेसि पुण ॥

उसंड म करिसि रोग अजाणिइं, कृणह्रं गुरयु म लेमि पराणि ।
मिरज्या पाषइ अरथ नवि ॥
धरमि पडीगे दुत्थित श्रवण, अनि आवतु जाणे मरण ।
माणम धरम करावीइ ए ।।
इसि परि वडदह पाप न लागइ, अनइ जसवाउ भलेरउ जागइ ।
रापे लोभिइ अतरीउ ॥

ठवणि—३

हिव श्रावकना नदनह, वोलमु केई वोल ।
अवघड मारगि हीडता ए, विणसई धरम नीटोल ॥
तिण पुरि निवमे जिण हवए, देवालउ पोमाल ।
मूण्या त्रिस्या गोरूयह, छोरू करि न सभाल ॥
तिण्हिवार जिण पूज करे, सामायक वे वार ।
माय वाप गुरु भक्ति करे, जाणी धरम विचारु ॥
कमरबध हुइ जिगि वयणि, ते तउ वोलि म वोलि ।
अविके ऊणे मापुले, कुडउ किमइ म तोलि ॥
अधिक म लेमि मापुलइ, उच्छ किमइ म देसि ।
एकह जीहव कारणिहि, केता पाप करेसि ॥
जिणवर पूठिइ म न वससे, मराखे सिवनी द्रेठि ।
राउलि आगलि म न वससे, बहूअ पाडेसिइं वेठि ॥
रापे धरि वि वारणा ए, ऊधत रापे नारि ।
ई धणि कातणि जलबहणि, हुइ सछदाचारि ॥
पटकसाल पाचइ तणीय, जयणा भली करावि ।
आठमि चउदसि पूनीमिहि, धोयणि गारि वरावि ॥
[अणगल जल म न वावरू ए, जोउ तेहनउ व्याप ।
आहेडी माछी तणू ए, एक चलुं ते पाप ॥
लोह मीण लप धाहडी य, गली य चरम विचारि ।
एह सवितूं विवहरण, निश्चउ करीय निवारि ॥
सुइमुहि जेतुं चापीइ ए, जीव अनता जाणि ।
कद्र मूल सवि परहरु ए, धरम म न करइ हाणि ॥

रयणी भोजन म न करिसि, बहुय जीव सिंहार।
सो नर निश्चइ नरयफल, होसिइ पाप प्रमाणि ।।]
जात्र जोत्र ऊषल मुशल, अपि म हल हथीयार।
सइं हथि आगि न आपीइ ए, नाच गीत घरवारि ।।
पाटा पेढी म न करसे, करसण नइ अधिकारि।
न्याइं रीतिइ विवहरु ए, श्रावक एह आचार ।।
वाच म घालिसि कुपुरसह, फूटइ मुहि महमेसि।
बहुरि म आस पिराइंह, बहु ऊधारि म देसि ।।
बइद विलासणि दुइडीय, सुइआणीसु संगु।
राषे बहिनर वेटडी य, जिम हुइ शील न भंगु ।।
गुरु उपदेसिइ अति घणा ए, कहू तु लहु न पार।
एह बोल हीयडइ धरीउ, सकल करे ससार ।।
'सालिभद्रगुरु' सकुलीय, सिविहू गुर उपदेसि।
पढइ गुणइ जे संभलहिं, ताहइ विघ्न टलेसि ।।

।। इति बुद्धिरास समाप्त मिति ।।

रेवंत गिरि रासु

रचयिता

विजयसेन सूरि

रचना-काल

वि. सं. १२८७ (१२३० ई.)

रेवत गिरि रासु

प्रथमं कडवम्

परमेसर - तित्थेसरह, पय - पकय पणमेवि ।
भणिसु रासु - रेंवतिगिरे, अविक - दिवि सुमरेवि ॥ १ ॥
गामागर - पुर - वण - गहण—, सरिवरि सु-पएमु ।
देविं - भूमि दिसि - पच्छिम्मह, मणहरु सोरठ - देसु ॥ २ ॥
जिणु तहि मडल - मंडराऊ, मरगय - मउड - महतु ।
निम्मल - सामल - सिहिर - भरे, रेहइ गिरि रेवतु ॥ ३ ॥
तसु - सिरि मामिउ सामलउ, सोहग - सुंदर - सारु ।
जाइव निम्मल - कुल - तिलउ, निवसइ नेमि-कुमारु ॥ ४ ॥
तमु मुह - दमगु दस-दिसि वि, देस-देससतरु संघ ।
आवइ भाव - रसाल - भण, उत्ति रग - तरग ॥ ५ ॥
पोरुयाड - कुल - मडणउ, नदणु आसाराय ।
वस्तुपाल वर - मति तहि, तेजपालु दुइ भाय ॥ ६ ॥
गुर्जर - धर धुरि धवलकि, वीरधवलदेव - राजि ।
विहु वधवि अवयारिउ, सू मु दूसम-माझि ॥ ७ ॥
नायल - गच्छह मंडणउ, विजयसेण - सूरिराउ ।
उवएसिहि बिहु नर-पवरे, धम्मि धरिउ दिढु भाउ ॥ ८ ॥
तेजपालि गिरनार - तले, तेजलपुरु निय - नामि ।
कारिउ गढ-मढ-पव - पवरु, मणहरु धरि आरामि ॥ ९ ॥
तहि पु - रि सोहिउ पास-जिणु आसाराय - विहारु ।
निम्मिउ नामिहि निज-जणणि, कुमर सरोवरू फारु ॥ १० ॥
तहि नयरह पूरव - दिसिहि, उग्रसेण - गढ - दुग्गु ।
आदिजिणेसर-पमुह-जिण—, मदिरि भरिउ समग्गु ॥ ११ ॥

वाहिरि-गढ दाहिण - दिसिहि, चउरिउ–वेहि विमालु।
लाडुकलह हिय - ओरडीय, तडि पमु - ठाइ करालु ॥ १२ ॥
तहि नयरह उत्तर - दिसिहि, साल - थभ - सभार।
मडण - महि - मंडल - सयल, मडप दसह उसार ॥ १३ ॥
जोइउ जोइउ भविय ण, पेमि गिरिहि दुयारि।
दामोदरु हरि पचमउ, सुवन्नरेह - नइ - पारि ॥ १४ ॥
अगुण अजण अविलीय, अवाडय अकुल्लु।
उवरु अवरु आमलीय, अगरु असोय अहल्लु ॥ १५ ॥
करवर करपट करुणतर, करवदी करवीर।
कुडा कडाह कयव कड करव कदलि कपीर ॥ १६ ॥
वेयलु वजलु वउल वडो, वेडस वरण विडग।
वासती वीरिणि विरह, वसियालि वण वग ॥ १७ ॥
सीसमि सिवलि सिर सभि, सिंधुवारि सिरखड।
सरल सार साहार सय, सागु सिगु सिण दड ॥ १८ ॥
पल्लव - फुल्ल - फलुल्लसिय, रेहइ ताहि वणराइ।
तहि उज्जिल-तलि धम्मियह, उल्लट्ठु अगि न माइ ॥ १९ ॥
बोलावी सघह तणीय कालमेघन्तर - पथि।
मेल्हविय तहि दिढ धणीय, वस्तपाल वर - मंति ॥ २० ॥

—

द्वितीयं कडवम्

दु विहि गुज्जर - देसे रिउ - राय - विहंडणु,
कुमरपालु भूपालु जिण - सामण - मडणु ॥
तेण संठाविओ सुरठ-दडाहिवो, अवओ सिरे - सिरिमाल - कुल - संभवो ॥
पाज सुविसाल तिणि नठिय अतरे धवल पुणु परव मराविय ॥
धनु सु धवलह भाउ जिणि पाग पयासिय,
वार - विसोतर-वरसे जसु जसि दिस वासिय ॥ १ ॥
जिम जिम चडइ तडि कडणि गिरनारह,
तिम तिम ऊडइं जण भवणसमारह ॥
जिम जिम सेउ - जलु अग्गि पालाट ए,
तिम तिम कलिमलु सयलु ओहट्ट ए ॥

जिम जिम वायइ वाउ तहि निज्झर - सीयलु ,
तिम तिम भव दुह दाहो तरकणि तुट्टइ निच्चलु ॥ २ ॥

कोइल - कलयलो मोर - केकारवो, सुमए महुयरमहुरु गुजारवो ॥
पाज चडतह सावयालोयणी, लाखारामु दिसि दीसए दाहिणी ॥
जलद - जाल - वबाले नीझरणि रमाउलु ,
रेहइ उज्जिल सिहरु अलि - कज्जल - सामलु ॥ ३ ॥

वहल - वुट्ठ धातु - रस - भेउणी, जत्थ उलदलइ सोवन्नमइ मेउणी ॥
जत्थ दिप्पंति दिवोसही सुंदरा, गुहिर वर गरुय गंभीर गिरि - कंदरा ॥
जाइ - कुंदुं - विहसन्तो ज कुसुमिहि सकुलु ,
दीसइ-दस-दिसि दिवसो किरि तारा-मडलु ॥ ४ ॥

मिलिय - नवलवलि-दल कुसुम - झलहालिया ,
ललिय - सुरमहिवलय - चलण - तल-तालिया ॥
गलिय - थलकमल - मयरद - जल - कोमला ,
विउल सिल - वट्ट सोहति तहि समला ॥
मणहर-घण घण-गहणे रसिर - हसिय-किनरा ,
गेउ मुहुरु गायतो सिरि - नेमि - जिणेसरा ॥ ५ ॥

जत्थ सिरि - नेमि - जिणु अच्छप अच्छरा ,
अमुर - सुर - उरग किंनरय - विज्जाहरा ॥
मउड - मणि -किंनरय पिंजरिय - गिरि-सेहरा ,
हरसि आवति बहु - भत्ति - भर - निब्भरा ॥
सामिय - नेमि - कुमार - पय पकय - लविउ ,
धर - धूल विजिण धन्न मन पूरइ वंछउ ॥ ६ ॥

जो भव कोडाकोड्डि अनु सोवन्नु धणु दाणु जउ दिज्जए ॥
सेवउ जड - कम्मघण - गंठि जउ तिज्जए ,
तउ उज्जितमिहरु पाविज्जए ॥ ७ ॥

जम्मणु जोव जाविय तसु तहि कयत्थू
जे नर उज्जित - सिहरु पेरकइ वरतित्थू
आसि गुरजर - धरय जेण अमरेसरु ,
सिरि जयसिंध - देउ पवर - पुहवीसरु ॥
हणवि सोरठु तिणि राउ खगारउ, ठविउ साजण दडहिवं सारउ ॥

अहिणवुनेमि - जिणिंद तिणिभवणु कराविउ ,
निम्मलु चदरु बिंवे निय - नाउं लिहावउ ॥ ८ ॥
थोर - विरकंभ वाय भ - रमाउलं, ललिय पुत्तलिय कलस-कुल - सकुल ॥
मंडपु दड घणु तुंगतर तोरणं ,
धवलिय वज्झि रुणझणिरि किंकणि - घणं ॥
इक्कारसय सहीउ पंचासीय वच्छरि ,
नेमि भुयणु उद्धरिउ साजणि नर-सेहरि ॥ ९ ॥
मालव-मडल-गुह-मुह-मडणु-भावड-साहु दांलिघु खंडणु ॥
आमलसार सोवन्नु तिणि कारिउ ,
किरि गयणगण - सूरु अवयारिउ ॥
अवर - सिहर - वर कलस झलहलइ मणोहर ,
नेमि-भुयणि तिणि दिट्ठइ दुह गलइ निरंतर, ॥ १० ॥

तृतीय कडवम्

दिसि उत्तर कसमीर-देसु नेमिहि उम्माहिय ,
अजिउ रतन दुइ बध गरुय सघाहिव आविय ।
सरसवसिण घण-कलसभरिवि तिन्हवणु करतह ,
गलि लेवमु नेमि- बिंवु जलधार पडतह
सघाहिवु सघेण सहिउ निय मणि सतविउ ,
हा हा धिगु धिगु मह विमलकुलगजणु आविउ
सामिय-सामल-धीर-चरण मह सरणि भवतरि ,
इम परिहरि आहार नियमु लइउ सघ-धुरधरि
एकवीसि उपवासि तासु अविक-दिवि आविय ,
पभणइ सपसन्न दवि जयजय महाविय
उट्टेविणु गिरि - नेमि - विबुतुलिउ तुरतउ ,
पच्छलु मन जोएसि वच्छ तु भवणि वलतउ ॥
णइवि अवि कचण — वमाणइ ,
सिरि नेमि बिंवु मणिमउ तहिं आणइ ॥
पढमि-भवणि देहलिहि देउ छुडिपुडि आरोविउ ,
सघाविहि हरिसेण तम दिसि पच्छलु जोइउ ॥ ४ ॥

ठिउ निच्चलु देहलिहि देवु सिरि-नेमि-कुमारो ,
कुसुम - वुट्ठिमिल्हेव देवि किउ जइजकारो
वइसाही - पुंनिमह पुंनवतिण जिणु थप्पिउ ,
पच्छिम दिसि निम्मविउ भवणु भव दुह तरु कप्पिउ ॥ ५ ॥

न्हवण-विलेवण-तणीय वछ भवियण-जण पूरिय ,
सघाहिव सिरि-अजितु रतनु निय-देसिपराइय ॥
सयल विपत्ति कलि-कालि-काल-कलुसे जाणवि छाहिउ ,
झलहलति मणि बिब-कत अवि कुरु आइय ॥ ६ ॥

समुद्दविजय-सिवदेवि-पुत्तु जायव कुल-मडणु जरासिंध-दल
मलणु मयणु मयण - भड - माण - विहडणु ।
राइमइ-मण हरणु रमणुसिव-रमणि मणोहरु ,
पुनवत पणमति नेमि-जिणु सनोहग - सु दरु ।
वस्तपालि वरमति भूयणु कारिउ रिसहेसरु ,
अट्ठावय — समेयसिहर — वरमडपु मणहरु ॥ ७ ॥

कउडि - जक्खु मरुदेवि दुह वितुंगु पासाइउ ,
धम्मिय सिरु धूणति देव वलिवि पलोइउ ।
तेजपालि निम्मवउ तत्थ तिहुयण-जण रजणु
कल्याणउ-तउ-तु गु-भुयणु लघिउ-गयणगणु ।
दीसइ दिसि दिसि कुंडि कु डि नीझरण उमाला ,
इद्रमडपु देपालि मन्त्रि उद्धरिउ विसालो ॥ ८ ॥

अइरावण - गयराय - पाय - मुद्दा - समटकिउ ,
दिठ्ठु गयदमु कु ड विमलु निज्झर समलकिउ ।
गउणगग ज सयल-तित्थ-अवयारु भणिज्जइ ,
पक्वा लिवितहि अगु दुक्ख जल-अजलि दिज्जइ ।
सिंदुवार-मदार-कुरवक कुदिहि सु दरु ,
जाइ - जूह - सयवत्ति विन्निफलेहि निरतरु ॥ ९ ॥

दिट्ठ य छत्रसिल - कडणि अववण सहसारामु ,
नेमि- जिणेसर - दिक्ख - नाण - निव्वाणहठामु ॥ १० ॥

✲

चतुर्थ कडवम्

गिरि गरुया ए सिहरि चडेवि, अब-जबाहि ववालिउं ए।
संमिणि णि ए अबिकदेवि, देउलु दीठु रम्माउलं ए॥ १ ॥
वज्जइ एताल कसाल, वज्जइ मदल गुहिर-सर।
रंगिहि नच्चइ बाल, पेखिवि अबिक-मुह कमलु॥
सुभ-करु एक ठबिउ उच्छंगि, विभकरो नंदगु पासिक (?) ए।
सोहइ एउजिलि-सिग, सामिणि सीह सिघासणी ए॥ ३ ॥
दावइ ए दुक्खहं भंगु, पुरइ ए वछिउ भवियजण।
रक्खइ ए उविहु संघु पुरइ ए वछिउ भवियजण॥
रक्खइ ए उविहु संघु सामिणि सीह-सिघासणी ए॥ ४ ॥
दस दिसि ए नेमि-कुमारि, आरोही अवलोइ उ ए।
दीजइ ए तहि गिरनारि, गयणागगु अवलोण-सिहरो॥ ५ ॥
पहिलइ ए साव-कुमारु, बीजइ सिहरि पज्जून पुण।
पणमइ ए पामइं पारु, भवियण भीसण-भव-भमण॥ ६ ॥
ठामि हि ए ठामि रयण सोवन्न बिबं जिणेसर तहि ठविय।
पणमइ ए ते नर धन्न, जे न कलि-कालि मल-मयलिय ए॥ ७ ॥
जं फलु ए सिहर - समेय, अठ्ठावय - नंदीसरिहिं।
तं फलु ए भवि पामेइ, पेखेविगु रेवंत - सिहरो॥ ८ ॥
गह-गण-ए माहि जिम भागु - पव्वय-माहि जिम मेरुगिरि।
त्रिहु भुयणे तेम पहाणु तित्थं-माहि रेवंतगिरि॥ ९ ॥
धवल धय चमर भिगार, आरत्ति मंगल पईव।
तिलय मउड कुडल हार, मेघाडंबर जाविय (?) ए॥ १० ॥
दियहि नर जो (पवर) चद्रोय, नेमि-जिणेसर-वरभूयणि।
इह-भवि ए भुंजवि भोय, सो तित्थेमर-सिरि लहइ ए॥ ११ ॥
चउ - विहु ए संघु करेइ, जो आवइ उज्जित-गिरि।
दिविस वहू रागु करेइ, सो मुंचइ चउगइ-गमणि॥ १२ ॥
अठ-विह ए ज्जय करंति, अट्ठाई जो तहि करइ ए।
अठ-विह एकरम हरणति सो, अट्ठ-भावि सिज्झाइ॥ १३ ॥
अविल ए जो उपवास, एगासण नीवी करइं ए।
तसु मणि ए अच्छइं आस, इह-भव पर भव विहव-परे॥ १४ ॥

पेमिहि मुणि-जण अन्न (ह), दाणु धम्मियवच्छलु करइ ए ।
तसु कही नही उपमाणु, परभाति सरण तिणउ (?) ॥१५॥
आवइ ए जे न उज्जिति, घर-धरइ धधोलिया ए ।
आविही ए हीयह न ज ति, निप्फलु जीविउ सास तणउ ।।१६॥
जीविउ ए सो जि परि धन्नु, तासु समच्छर निच्छणु ए ।
सो परि ए मासु परि धन्नु, वलि हीजइ नहि वासर ए ॥१७॥
ज (जि) ही जिणु ए उज्जिल-ठामि, सोहग-सुदर सामलु (ए) ।
दीसइ ए तिहूण-सामि, नयण-सलूणउ नेमि-जिणु ॥१८॥
नीझर (ण) ए चमर ढलति, मेघाडबर सिरि धरीइ ।
तित्थह ए सउ रेवदि, सिहासणि जयइ नेमि-जिण ॥१९॥
रंगिहि ए रमइ जो रासु, (सिरि) विजयसेण-सूरि निंमविउ ए ।
नेमि-जिणु तूसइ तासु, अबिक पूरइ मणि रली ए ॥२०॥
॥ समत्तु रेवंतगिरि-रासु ॥

श्री नेमिनाथ रास

रचयिता .

श्री सुमति गणि

रचना-काल

वि० स० १२९५ (१२३८ ई०)

श्री नेमिनाथ रास

पणमवि सरसइ देवी सुय रयण विभूसिय ।
पभणिसु नेमि सुरासो जण निसुणउ तूसिय ॥१॥

वूयउ

अत्थि पसिद्धु नयरि सोरियपुरु, जवन्नेवि न सक्कइ सुरगुरु ।
जहिं पडुर रेहहिं जिण मदिर, नावइ हिमगिरि कूड समुद्धर ॥२॥

हउ सवखा जिण जम्मण भूमी, तुहु पुगु जिनवर चवणण दूमी ।
इया हसइव ज पवगुद्धय मिसि सुरपुरि निब्भय उब्भिय भूय ॥३॥

तहिं नरवइ वइरिहिं अवराउ, नामि समुद्द विजउ विक्खाउ ।
दस दसार जो पढम दसारू, जायव कुल सयलह विजु सारू ॥४॥

तस्सय नवरूवा नव जुव्वण, नव गुण पुन्निविणिय गयव्वण ।
राणी इयणि यर सम वयणी सिवदेवित्ति हरिण बहु नयणी ॥५॥

रायह तीइ पियाए विसयइं सेवतह ।
अइगउ कित्तिउ कालो जिम्व सग्गि सुरिंदह ॥६॥

संखजीव अहदेउ चवित्तु अवराइय कप्पाउ पवित्तु ।
कत्तिय किण्ह दुवालसि कुच्छिहिं, उप्पन्नउ सिवदेविमयच्छिहिं ॥७॥

ते सापिच्छिवि चउदस सुमिणइ, हट्ठ तुट्ठ उट्ठिवि पिउ पभणइ ।
सामिय सुणिमइ सुमिणा दिट्ठ, चउदस सुन्दर गुणिहि विसिट्ठ ॥८॥

राउ भणइ तुह सुन्दरि नदणु, होसइ जणमण नयणा णंदणु ।
इय भणिया सा पभणइ राइणी, इय महु होस्यउ तुज्झ पसाइण ॥९॥

अह सावणसिय पचमि रत्तिहि, सुहतिहि सुह नक्खत्त मुहुत्तिहिं ।
दस दिसि उज्जोअतउ कतिहि, रवि जिव तमहरु भुवण भरतिहिं ॥१०॥

तिहि नाणिहि संजुत्तो जं जिणवरु जायउ ।
मायर पियरह ताम्व मणि हरिसु न मायउ ॥११॥

तविखणि दिसि कुमारिय छपन्ना, सई कम्मु निम्मवहिं सुपन्ना ।
ताम्वहि जाणिवि हरि चउसट्ठि, करि समुदउ निम्मल तरदिट्ठि ॥१२॥

ते गयमण सम वेगिं सुगिरि मिहरुप्परि ।
जाइ नमिवि जिण माया सहरिसु जपइ हरि ॥१३॥

धन्न पुन्न सुकयत्थिय सामिणि, तुह जीविउ सहलउ सिव गामिणि ।
जीइ उअरि धरियउ गुण गामिणि, तित्थु नाहु तिहुयण चूडामणि ॥१४॥

देवि नमुत्थु महिए तुह तिहुयण लच्छिहिं ।
जग्गभूषण उप्पन्नो जिणथक जसु कुच्छिहि ॥१५॥

घूवउ

जिम्ब निसि सोहइ पूनमिय का, जिम्ब सरसि रेहइ कमलका ।
रयणायर घर रयणिहि जेम्व, तुहु जिणवरि करि सोहसि तेम्व ॥१६॥

अह अवसोयणि देवी देविहि देविंदु ।
मेरु गिरम्मि रम्मी गउ गहिय जिणंदु ॥१७॥

घूवउ

तहिं अइ पंडुकं बल सिल उप्परि, चउसट्ठिवि हरिगिरि जिणवरु धरि ।
भूरि भत्ति भर निब्भर भाविण, पक्खालहिं पहु सहुनिय पाविण ॥१८॥

मुवसम कुसुम माल समलंकिउ, वर विलेव कलियउ अकलंकिउ ।
कप्पदुम्भु विहिक संकप्पिउ, देवि दिणजिणु जणणि समप्पिउ ॥१९॥

गब्भत्थह जणणीए मणि रिट्ठह नेमि ।
दिट्ठउ त किउ नामु जिणवरु रिट्ठनेमि ॥ २० ॥

सो सोहाग निहाणु जिणेसरु रुवरेह जिय मयण मुणीसरु ।
सुरगिरि कंदरि चयउ जेम्व वद्धह नेमि सुहसुही तेम्व ॥२१॥

तहिं जिकालि राया जरसिधु, तसु भय जायव गय सवि सिन्धु ।
वारवई धण कणिहिं समिद्धि, कण्ह पुन्नि देविहिं करि रिद्धि ॥२२॥

तहि वसंति जायव कुल कोडिहिं हसहिं रमहिं कीलहिं चडि घोडिहिं ।
मग्गपुरी इन्दुव सव कालु, गयउ न जाणइ कितिउ कालु ॥२३॥

नेमिकुमरु अन दियहि रमतउ, गउहरि आउह साल भमंतउ।
संखु लेवि लीलइ वाएई, संख सद्दि तिहुयण खोमेई ॥२४॥

तंसुणि पभणइ कण्हो किण वायउ सखु।
भणिउ जणेण नरिंदो जिण बलुज असंखु ॥२५॥

धूवउ

तो भयभीउ भणइ हरि रामह भाउ नहिय वासु 'इह ठावह।
लेसइ नेमिकुमरू तह रज्जू, हाहा हियइ धसक्कइ अज्जु ॥२६॥

जसु वालस्सवि जसउ महावलु, कित्तिय मित्त तासु इहु महवलु।
राम भणइ मन करइ विसाऊ, रज्जु न लेसइ तुह कवि भाउ ॥२७॥

इहु ससारु विरत्तु जिणेसरू, मुक्ख सुक्ख कंखिउ परमेसरु।
रज्जु मुक्ख करि मुद्धु जु वच्छइ, घोर नरइ सो निवडइ निच्छइ ॥२८॥

पुणवि भणइ हरि रामह अग्गइ, वधव गय इह पुहवि समग्गइ।
अतुल परिक्कमु नेमिकुमारू, लेसइ रज्जु न किणइ सहारू ॥२९॥

रामु जणद्दणु पडिवोहेई कुग्गइ कारण रज्जु कु लेई।
मुद्ध जु वुद्धिवंतु कुवि होइ, अमिउ सुलहि किम्ब विसु भक्खेइ ॥३०॥

तो निस्सकु हुअउ गोविंदू, भुजइ भोग ,मुहइं सच्छंदू।
नेमिकुमारू विनमिउ सुरिंदहि, रमइ जहिच्छइ हलि गोविंदिहि ॥३१॥

अन्न दियहि जायविहि मिलेवि, भणिउ कुमरु पडिवधु कदेवि।
परिणिकुमार मणोरवह पूरि पियरह जिम हुइ सुक्खु सरीरि ॥३२॥

बुल्लइ नेमिकुमारो मिल्लहि असगाहू।
कण्ह माय पिय तुम्हि इउ भणिउ न साहू ॥३३॥

धूवउ

विसय सुक्खु कहि नरय दुवारू, कहि अनत सुहु सजम मारु।
भलउ वुरउ जाणतु विचारइ, कागिणि कारणि फोडि कु हारइ ॥३४॥

पुरण भणइ हरिगाह करेवी, नेमिकुमारह पय लग्गेवी।
सामिय इक्कु पसाउ करिज्जउ, वालिय काविसरूव परणिज्जउ ॥३५॥

जिणु वोज्झु जणीयन जंपइ, हरि जाणिउ हउं मन्निउ सपइ।
कवण स होसइ धन्निय नारी, जा अणुहरिसइ नेमिकुमारि ॥३६॥

हू जाणउ मइं अच्छइ बाली, राममई बहु गुणिहि विसाली।
उग्गसेण रायं गहि जाइय, रूब सुहाग खाणि विक्खाइय ॥३७॥

जसु धगुकेस कलावु लुलंतउ, नीलु किरण जालुब्व फुरतउ।
दीसइ दीहर नयण सहती, नं निलुप्पल लील हसति ॥३८॥

वयगु कमलु न छण ससि मंडगु, दिक्खवि भुल्लइ धूआ खडलु।
भणहरु धणहरु मगु मोहेइ, कचन कलसह लीह न देई ॥३९॥

सरल बाहु लय कति विगिज्जिय, न चपय लयगयवणि लज्जिय।
जसु सरूवु पत्तिण उत्तासिय नरइ गइयस कत्थ विनासिय ॥४ ॥

इय चिणवगु कण्हि सा बाल वराविय।
नेमिकुमारह देसि(जुपत्थिय)जायब मेलाविय ॥४१॥

धूवउ

तुट्ठ रायमई कहवि न माई हलप्फल घरि हिंडई धाई।
हउं पर धन्न इक्क सुकयत्थिय नेमि कुमारह रेसि जु पत्थिय ॥४२॥

ए सुमिणेवि मणोरह नासी, ज महु नेमि कुमरु वरु होसी।
नेमि कुमरु पुगु जाणिवि समऊ, लोगतिय पडि बोहिउ अमऊ ॥४३॥

तिन्नि वरिस सय रहि कुमरत्तिहिं, संवच्छरु जउं देविगु दत्तिहि।
राय सहस परिवुडु गुण गुढउ, उत्तर कुरु सिवयहि आरूढउ ॥४४॥

उज्जल सिहरि चडेवि वज्जिवि सावज्जइ।
सावण सिय छट्ठी ए पवज्ज पवज्जइ ॥४५॥

त निमुगे विगु रायमई चितइ, धिगु धिगु एहु ससारु।
निच्छय जाणिउ हेव मइं न परणइ नेमि कुमारु ॥४६॥

जो विहुयण रूपिण करि घडियउ, ज वन्नतु कुगवि लडखडिउ।
सुर रमणी हवि जो करि दुल्लुहु, सो किम्व हुइ महु मुद्धिय वल्लहु ॥४७॥

पुणरवि चितइ रायमई जइ हउं नेमिकुमारिण मुक्कि।
तुवि तमु अज्जवि पयसरगु इहु मणि निच्छउ लोयगु थक्कि ॥४८॥

अह जिणवर वारवड भमंणह परमन्निण पाराविय सतह।
दिण चउपन्नह अति अमोअह मावस केवलु हुयउ अगोयह ॥४९॥

तो मुण साहुणि सावय साविय, गुणगणि रोहण जिणमय भाविय।
इहु पहुचउ विहु तित्थु पवित्तउ, नाग चरण दंसिणिहि पवित्तउ ॥५०॥

रायमई पहु पाय नमेविणु नेमि पासि पवज्ज लहेविणु।
परम महासई सील समिद्धिय नेमिकुमारह पहिलउ सिद्धिय ॥५१॥

नेमि जिणुवि भवियणु पडिबोहिवि, सूरु जेम्व महि मडलु सोहिवि।
आसाढाट्ठमि सुद्धि मुणिसह, संपत्तउ सिद्धिहि परमेसरू ॥५२॥

सिरि जिणवइ गुरू सीसिइ इहु मण हर मासु।
नेमि कुमारह रहउ गणि सुमइण रासु ॥५३॥

सासण देवी अबाई इहु रासु दियंतह।
विग्धु हरउ सिग्घू सधह गुणवतह ॥५४॥

इति श्री नेमिकुमार रासक। पडित सुमति गणि विरचित ॥

गयसुकुमाल रास

रचयिता :

देवेन्द्र सूरि

रचना-काल

अनुमानतः वि. स. १३०० (१२४३ ई.)

गयसुकुमाल रास

पणमेविणु सुयदेवी सुयरयण - विभूसिय ।
पुत्थय कमल - करीए कमलासणि संठिय ।। १ ।।
पभणउं गयसुमार – चरित्त
पुव्वि भरह – खित्ति ज वित्त ।
जु उज्जिल पुन्न – पएसू ।। २ ।।
तह सायर-उवकंठे वारवइ पसिद्धिय ।
वर कंचण धण धन्नि वर रयण समिद्धिय ।। ३ ।।
वारह जोयण जसु वित्थारू
निवसइ सुन्दरु गुणिहि विसालू ।
वाहत्तरि कुल कोडि विसिट्ठो ।
अन्नवि सुहड रणगणि दिट्ठो ।। ४ ।।
नयरिहि रज्जु करेई तहि कन्हु नरिंदू ।
नरवइ मंति सणाहो जिव सुरगणि इदू ।। ५ ।।
संख चक्क गय पहरण धारा
कंस नराहिव कय संहारा ।
जिणि चाणउरि मल्लु वियारिउ
जरासिंधु वलवंतउ धाडिउ ।। ६ ।।
तासु जणउ वसुदेवो वर रूव निहाणू ।
महियलि पयड पयावो रिउ भड तम भाणू ।। ७ ।।
जणणिहि देवइ गुण संपुन्निय
नावइ सुरलोयह उत्तिन्निय ।
सा निय मंदिरि अच्छइ जाम्व
तिन्नि जुयल मुणि आइय ताम्व ।। ८ ।।

सिरिवच्छकिय वच्छे रूवि विक्खाया।
चिंतइ वन्निय नारी जसु एरिस जाया ॥ ९ ॥

मुणिवर सुंदर लक्खण सहिया
महसुय कसि कयच्छि गहिया।
बारवई मुणि विभउ इत्थू
कहि ट्लिवलि मुणि आयउ इत्थू ॥ १० ॥

पूछइ देवइता पभणहि मुनिवर।
ताम्वा (अम्ह) सम रूव सहोयर ॥ ११ ॥

सुलस सराविय कुक्खि धरिया
जुव्वण विसय पिसाइ नडिया।
सुमरिउ जिणवरु नेमिकुमारू,
तसु पय मूलि लयउ वय भारू ॥ १२ ॥

पुत्त सिणेहि ताम्वा देवइ झुल्लइ मणु।
जसु करि कंकण होई तसु कयसु सदप्पणु ॥ १३ ॥

जाइवि पुच्छइ नेमिकुमारू,
ससउ तोडइ तिहुयण सारू।
पुब्वि छच्च रयण तइ हरिया,
विणि कारणि तुह सुय अवहरिया ॥ १४ ॥

कंसु वि होइ निमित्त वर करह करेई।
सुलस सराविय ताम्वा मुरु अल्लइ नेई ॥ १५ ॥

देवइ मुणिवर वदइ जाम्व,
हरिस विसाउ धरइ मणि ताम्व।
सुलस सधन्निय जसु घारि तहिय,
हउ पुण वाल विउइहि दद्धिय ॥ १६ ॥

रहु वालाविउ ता . . ।
.... रिसिय नारी पिच्छइ काई ॥ १७ ॥

खिल्लावइ मल्हावइ जाम्व,
देवइ मण दुम्मण हुई ताम्व।
त पिक्खिय अहिय पर सूरइ,
वासुदेउ मण वंछिउ पूरइ ॥ १८ ॥

सुभरइ अमर नरिंदो महु देहि सहोयरू।
सयल गुणेहिं जुत्तो निय जणणि मणोहरु ॥ १९ ॥

वुल्लइ सुरु सुरलोयह चविसी,
देवइ कुक्खि सो मभविसी।
जायउ सुन्दरु गुणिहिं विसालू,
नामु ठविउ तस गयसुकुमालू ॥ २० ॥

साहिय सहिय कलाउ सतुट्ठउ लोयह।
जुव्वण समय पहुत्तो नवि इच्छइ धूयह ॥ २१ ॥

सोम मरूव धूव परिणाविय,
जायवि तहि जन्न तह आविय।
नच्चइ हरिसिय वज्जहिं तूरा,
देवइ ताम्व मणोरह पूरा ॥ २२ ॥

तावह गयसुकुमालो संसार-विरत्तउ।
निहणिवि मोह-गइदो जिण-पासि पहुत्तउ ॥ २३ ॥

पणमिवि तिन्नि पयाहिण देइ,
धमु सुणइ सो करु जोडेइ।
पुण पडिवोहिउ नेमि जिणिंदं,
जायवकुल नहयल जयनद ॥ २४ ॥

काम गइद मइदो सिवदेविहि नदणु।
देसण करइ जिणिंदो सिवपुर पह सदणु ॥ २५ ॥

मोह महागिरि चूरण वज्जू,
भव तरुवर उम्मूलण गज्जू।
सुमरिवि जिणवरु नेमिकुमारू,
गयसुकुमारु लेइ वय भारू ॥ २६ ॥

ठिउ काउसग्गि ताम्व जाएवि मसाणे।
वारवई नयरीए वाहिर उज्जाणे ॥ २७ ॥

तमि सु दियवरु कुवियउ पेक्खइ,
तहरिय जल पज्जालिउ दिक्खइ।
अम्ह धुय विनडिय परिणिय जेणु,
अभिनउ तसु फलु करउ खणेण ॥ २८ ॥

तावह गयसुकुमाला सिरि पालि करेई।
दारुण खयर अगारा सिरि पूरण लेई ॥ २६ ॥
डज्झइ मुणिवरु गयसुकुमालू,
अहिणउ दिक्खउ गुणिहि विसालू।
जिव खरपवण न मुरगिरि हल्लइ,
तिव खणु इक्कु न झाणह चल्लइ ॥ ३० ॥
अवराहेसु गुणेसू किर होइ निमित्तू।
सहजिय पुव्व कयाइ हुय इवि थिर चित्तू ॥ ३१ ॥
अहिया सइ मुणि गयसुकुमालू,
निहुरु डज्झइ कम्मह जालू।
अतगडिवि उप्पाडिउ नाणू,
पाविउ सासय सिव-सुह ठाणू ॥ ३२ ॥
सिरि देविंदसूरिंदह वयणे,
खमि उवसमि सहियउ।
गयसुकुमाल.... .... चरित्तू,
सिरि देल्हणि रइयउ ॥ ३३ ॥
एहु रासु सुहडेयह जाई।
रक्खउ सयलु सघु अबाई।
एहु रासु जो देसी गुणिसी,
सो सासय सिव-सुक्खइ लहिसी ॥ ३४ ॥

॥ गयसुकुमाल रास समाप्त ॥

आबू रास

रचयिता .

पल्हण

रचना-काल

लगभग १३ वी शती

आबू रास

पणमेविणु सामिणि वाएसरि
अभिनवु कवितु रय परमेसरि
नदीवर धनु जासु निवासो
पभणउ नेमि जिणदह रासो ॥ १ ॥

गूजर देसह मज्झि पहाण
चद्रवती नयरि वक्खाण
वावि सरोवर सुरहि सुणीजइ
वहु यारामिहि ऊपम दीजइ ॥ २ ॥

त्रिग चाचरि चउहट्ट वियारा
पढमदिर धवलहर पगारा
छत्तिस राजकुली निवसेई
धनु धनु धम्मिउ लोकु वसेई ॥ ३ ॥

राजु करइ तह सोम नरिंदो
निम्मल सोल कला जिम चदो
हिव वण्णउ गिरि पुहवि पसिद्धो–
वहुयह लोयह तणउ जु तीथो ॥ ४ ॥

घण वणरायह सजलु सुठाउ
तहिं गिरिवर पुणु आवू नाउ
तसु सिरि वारह गाम निवासो
राठी गूगुलिया तहि तपसी ॥ ५ ॥

तसु सिरि पहिलउ देस सुणीजइ
अचलेसरु तसु ऊपमु दीजइ

तहि छइ देवत बाल कुमारी
सिरि मा सामिणी कहउ विचारी ॥ ६ ॥
विमलहिं ठवियउ पाव निकदो
तहि छइ सामिउ रिसह जिणिंदो
सानिधु सघह करइ सखेवी
तहि छइ सामिणि अबा देवी ॥ ७ ॥
पुरूव पछिम धम्मिय तहिं आवहिं
उतर दखिण सघु जिणवरु न्हावहिं
पेखहि मदिरु रिसह रवन्ना ॥ ८ ॥
धनु धनु विमल जेणि कराविउ
ससि मडलि जिणि नाउ लिहाविउ
विहुसइ वरिसइ अतरू मुणीजइ
वीजउ नेमिहि भुवणु सुणीजइ ॥ ९ ॥

ठवणि

नमिवि चिराणउ थुणि नमिवि वीजा मदिर निवेसु
पुहविहि माहि जो सलहिजअे उत्तिम गूजरू देस ॥ १० ॥
सोलकिय कुल सभमिउ सूरउ जगि जसु वाउ
गूजरात धुर समुधरणु राणउ लूणपसाउ ॥ ११ ॥
परिवल दलु जो ओडवअे जिणि पेलिउ सुरताणु
राज करइ अन्नय तणओ जासु अगजिउ माणु ॥ १२ ॥
लुण-मा पुतु जु विरधवलो राणउ अरडकमल्लु
चोर चराडिहि आगलओ रिपुरायह उर सल्लु ॥ १३ ॥

भाषा

वस्तपालु तसु तणइ महतउ
सहु परु तेजपाल उदयतउ
अभिणवु मदिर जेण कराविय
ठावि ठावि जिण विव भराविय ॥ १४ ॥
महि मडलि किय जहि उद्धारा
नीर निवाणिहि सत्त कारा

सेत्रुंज सिहरि तलावु खिणाविउ
अणपम–सरु तसु नामु दियाविउ ॥ १५ ॥
नितु नितु सुर सघ पूजा कीजइ
छहि दरिसणि घरि दाणुव दीजइ
सघ पुरिस पुहविहि सलहीजइ
राजु वघेला वहु मनि कीजइ ॥ १६ ॥
अन दिवसि निय मणि चिंतीजइ
महतइ तेजपालि पभणीजइ
आवू भणि जइ तीथह ठाउ
जइ जिण–मदिरु तह नीपावउँ ॥ १७ ॥
ठाकुरु ऊदल ताव हकारिउ
कहिय वात कान्हइ वइसारिउ
आवू रिखभह मदिरु आछइ
महतउ तेजपालु इम पूछइ ॥ १८ ॥
वीजउ नेमिहिं भुवण करेसह
पहितउ सोम नरिंदु पूछिजइ
जइ जिणमदिर थाहर लहिमह
कटक माहि जाडवि विनवीजइ ॥ १९ ॥

ठवणि

महि तिहि जायवि भेटियउ धावल देवि मल्लारु
कड कोडेविगु वीनतओ सोम नरिंद प्रमारु ॥ २० ॥
विनती अम्ह तह तणिय सामिय तुहु अवधारि
मागउ थाहर मदिरह आवुय गिरिहि मझारि ॥ २१ ॥
तूठउ थावल देवि तणउ आगइ कहियउ अेहु
विमलह मदिर आसनउ विजउ करावहु देव ॥ २२ ॥
अम्हि घरि गोठिय आवुयह आगे उछह निवाणु
करिज मदिर तेजपाल तुह हियय म धरिजहु काणि ॥ २३ ॥

भापा

दिसइ आयसु तह सोम नरिंदो
वस्तपालु तेजपालु अणदो

जिण समिय मदिरु वेगि निपज्जअे
आयसु रोपु दिव ऊदल दीजअे ॥ २४ ॥
अइसि उदल्लु चंदावति आवअ
सयल महाजनु घरि तेडावअे
चाल्हु हिव आवुइ जाअेमह
जिण मदिर थाहर भूमि जोअेसह ॥ २५ ॥
चलिउ उदल्लु महाजनि सइतउ
आवुय देवल-वाडइ पहुतउ
ठमि ठमि मदिर भूमि जायतओ
मिलिउ मेलादओ आवुय लोयह ॥ २६ ॥
मदिर थाहर नवि आयेसह
प्राणिहिं भुवणु करण नवि देसह
आगअे विमल मदिर निपन्नओ
सिरया भूमिहिं दीनउ दानओ ॥ २७ ॥

ठवणि

ऊदल्लु तिरथु पसीय बहुपरि मनावइ
राडीवर गूगुलिया वास्तइ पहिरावइ ॥ २८ ॥

भाषा

अम्हि धुरि गोठिय दिव नेमिनाहा
जिण भूमि खापहु तेइ सुवाहा
विमल मंदिर-ऊतरदिसि जाम
लइय भूमि तेजपालु बधाविउ ॥ २९ ॥
महतइ तेजपाल पभणीजइ
सोभनदउ सुत-हार तेडीजइ
जाइज आवुइ तुह कमठाअे
वेगिहि जिणमंदिर नीपाअे ॥ ३० ॥
चालिउ पइठ करिउ सुतहारो
भूमि सुवण इक वार अहारो
सोभनदेउ वेगि आवुइ आवइ
कमठा मोहुतु आरंभु करावइ ॥ ३१ ॥

ठवणि

मूलग्ग पायार घर पूजिउ कुरू म प्रवेसु
भरिउ गडारउ तहि ज पुरे खरसिल हुयउ निवेसु ॥ ३२ ॥
आसन्नी तहि ऊघडिय पाथर केरिय खाणि
निपणि नु गडारउ मूलिगओ देवलु चडिउ प्रमाणि ॥ ३३ ॥
रूपा सरिसउ सम तुलअे दसहिदिसावर जाइ
पाहण तहि आरासणउ आणिउ तहि कमठाइ ॥ ३४ ॥
सरवरु घाटु जो नीपजअे मदिर वहु विस्तारि
अतिसइ दीसइ रूवडउ नेमि जिणिद पयारु ॥ ३५ ॥

भाषा

सोभन देउ सुतहारो कमठाउ करावइ
सइतउ मन्त्रि तेजपालो जिणु विंव भरावइ
खभायति वर नयरि विंव निप्पजअे
रयण मउ नेमि जिणु उपम दीजअे ॥ ३६ ॥
दिसति कंति रमण कति सामळ धीरा
बहु पंकति वहु सकति जाइ सरीरा
निवसअे विंबु जो सालह सठिओ
विजयसेण सूरि गुरि पढम पतीठिओ ॥ ३७ ॥
निपुनु परिखूरनु सामल-देउ
धणु तेजपालु जिणि आवुय नेओ
धवल सुत सुरहि युत ठविय तहि रहवरे
खडइ सुहडा सुमुहु आवुय गिरवरे ॥ ३८ ॥
नयर वर गामह माहिहि आवअे
सइतभविय हो जिण पहेरावअे
आवुय तळवटे रत्थ पहुत्तओ
तणियउ वरणिय पाज चडंतओ ॥ ३९ ॥
थड उ थडइ रहु पाज विसमी खरी
वेगि सपत्त अविक वर अछरि
सानिधं अंवाइय रत्थु चडतओ
देवलवाडइ दिणि छठइ पहुत्तओ ॥ ४० ॥

ठवणि

आबुय सिहरि सपत्त देउ पहु नेमि जिणेसरु
वणसइ सवि विहसणहं लग्ग आइय तित्थेसरु ॥ ४१ ॥

उच्छगिहि जुगादि जिणु जिणु पहिलउ ठविज्जइ
तुहँ गरुयउ नेमिनाथ बिंब तेजपालिहि कीजइ ॥ ४२ ॥

हक्कारहु वर जोइसिय पइठह दिणु जोयहु
तेडावहु चउवियहे सघ पुर पाटण गायह ॥ ४३ ॥

वार सवछरि छियासअे परमेसरु स ठउ
चैत्रह तीजह किसिण पक्खि नेमि भुवणहि सठिउ ॥ ४४ ॥

बहु आयरिहि पयट्ट किय बहु भाउ धरतह
रागु न बद्धइभविय जणह नेमि तित्थ नमतह ॥ ४५ ॥

श्रावेहंडावडा तणे जिणु पहिलउ न्हवियउ
पाछइ न्हवियउ सयल संघि तुम्हि पणमुह भवियहु ॥ ४६ ॥

रिसभ चित्र अट्ठमि जि नमु तासु कल्याणि कु कीजइ
दसमि तित्थु नेमि जात रेंस सघ पास मंगीजइ ॥ ४७ ॥

सघ रहिउ जिणि जात करिवि नमि भुवण विसाला
पूरि मणोरह वस्तुपाल मंती तजपाला ॥ ४८ ॥

मूर्ति वपु असराज तणी कुमरादेवि माया
काराविय नेमि भुवण माहि विहु निम्मल काया ॥ ४६ ॥

कराविउ नेमि भुवणु फलु लयउ ससारे
निसुणह चरितु न दत्त तेणि धधूय प्रमारे ॥ ५० ॥

रिखभ मदिर सार्सणि जाणुं
घधुय दिन्नउ डक्कड वाणिउ गाउ
तिणि सु मसीहि उजालिउ नाउ ॥ ५१ ॥

नेमिहि दिन्नु उवाणिउ गाउ
अनेक सघपति आबुइ आवहिं
कनक कपड नेमि जिणु पहिरावहिं
पूजहि माणिक मोतीयउ हूले
किवि पूजहि सोगाधिहि फूले ॥ ५२ ॥

केवि हु हियडय भावण भावहि
केवि हु म नीणइ आराहहि
केवि चडावळि नेमि नमीजइ
अ सु-वयणु पाल्हण पुज कीजइ ॥ ५३ ॥

वार सवछरि नवमासीअे
वसत मासु रभाउलु दीहे
अेहु राहु विसतारिहिं जाअे
राखइ सयल सघ अवाअे ॥ ५४ ॥

राखइ जाखु जु आछइ खेडइ
राखइ व्रह्म सति मूढेरइ ॥ ५५ ॥

कछूली रास

रचयिता .

प्रज्ञा तिलक

रचना-काल

वि० स० १३६३ (१३०६ ई०)

कछूली रास

गणवइ जो जिम दुरीउविहंडणु रोलनिवारणु तिहूयणमडणू पणमवि सामीउ पासजिणु ।
सिरभद्दसरसूरिहिं वंसो बीजीसाहह वनिसु रासो धमीय रोल निवारीउ ।
सग्गषडु जिम महीयलि जाणउ अठारसउ देसु वषाणउ गोउलि धन्नि रमाउलउ ॥
अनलकुडम्भम परमार राजु करइं तहिछे सविवार आबूगिरिवरु तहिं पवरो ।
विमलडवसहीआदि जिणदो अचले सरु सिरिमासिरि वदो तसु तलि नयरी य वन्नीयए ।
जणमण नयणह कम्मणमूली कछूली किरि लकविसाली सरप्रववावि मणोहरी य ॥

वस्तु—तम्हि नयरी य तम्हि नयरी य वसइं बहू लोय ।
चिंतामणि जिम दुच्छीयह दीइ दानु सविवेय हरिसि य ।
सच्चइ सीलि ववहरइं कूडकपटु नवि ते य जाणइ ।
गलीउं जलु वाडी पीइ धम्मकम्मि अणुरत्त ।
एकजीह किम वन्नीइ कछूली सु पवित्त ॥

हिमगिरिधवलउ जिसु कविलासो गुरूमडपु पुतलीयविणासो पासभूयणु रलीयामणउ ।
भवीयह गुरु मणि आणदु आणइ जसहडनदणु त परिमाणइ मतरि भेदि सजमु परिपालइ ।
विहिमगि सिरिपहसुरि गुण गाजइ एगतर उपवास करेइ बीजा दिण आबिल पारेइ ।
सासणदेवति देसण आवइ रयणिहिं ब्रह्मसति गुरु वदीइ कविलकोटि श्रीयसुरि विहरतइं ।
मालारोपण कीया तुरतइ सइ नर आवीय पंचसयाइ समिकति नदइ बहू य वयाइ ।
छाहडनदणु बहु गुणवंतउ दीख लीइ ससार विरत्तउ ।
लाषणछद परमाणपरिरकणु आगमधम्मवियार वियरकणु ।
छत्रीसी गुरुगुणि जुत्तउ जाणीउ नियपदि ठविउ निरूत्तउ ।
माणिकपहुसूरि नामू श्रीयसूरिप्र तीछीउ कछूलीपुरि पासजिणभूयणि अहिठीउ ॥
सावयलोय करइ तसु भत्ती नव नवधम्ममहूसवजुत्ती ।
श्रीयसूरि आरामणिअठाही अणसणविहि पहतउ सुरनाही ।
निवीय आविलि सोसीय नियकाया माणिक पहसूरि वदउ पाया ।

विणठदेह जस धवलह राणी पायपखालणि हुंई य पहाणी।
माणिकसूरि जे कीध जिणधम्मपभावण इकमुहि ते किम वन्नउ भवपावपणासण ॥
कालु आसन्नु जाणेवि माणिकसूरि नयरिकछु ल जाएवि गुणमणि गिरि।
सेठि बासलसुउ वादिगयकेसरी विरससंसारसरिनाह तारणतरी।
सघु मेलवि सिरिपासजिणमदिरे वेगि नियपट्टि गुरु ठविउ अइसइ परे।
उदयसिंहसूरि कीउ नामि नाचती ए नारिगण गच्छभरु सयलु समपीजए।
सूरु जिम भवियकमलाइ विहसतओ नयरि चड्डावली ताव सपत्तओ ॥
वन्न चत्तारि वरवाणि जो रजए राउलो धंधलोदेउ मणि चमकए।
कोइ कम्माली पाऊयारूढओ गयणि खापरिथीइ भणइ हउ वादीआ।
पडिते बभणे तापसे हारिय राउलोधवलोदेविहि चितिय।
वादिहि जीतउ नयरो नवि कोउ हरावइ उदयसूरि जइ होए अम्ह मागु रहावइ ॥
वस्तु—जित नयरि य जित नयरि य सयलमुणिसीह।
नीरतइ नीरु षडो गरूयदडडवरू करतइ।
धधलु राउलु विन्नवइ सामि साल पइ मझि सतइ।
बभण तपसीय पडीया ज त न बधइ वाल।
सु गुरु कम्मालिउ निजणीउ अम्ह अप्पउ वरमाल ॥
धवलजिणहरि सवि मिलिय राणालोय असेस।
उदयसूरि साधिहि सहीउ निवसइ ए निवसइ ए निवसइ वरहरिपीठि ॥
सत्थिपमाणी हरावीउ मन्त्रिहिं ए मन्त्रिहि ए मन्त्रिहिं वादुकमठो ॥
सेयवर तउ हिव रहिजे जे गुरु सिद्धिहिं चडो।
विहसरु आवतु परिषलि जे लपीउ ए लपीउ ए लपीउ दड्डु पयडो ॥
तउ गुरि मुहता मिल्हिकरि होई गरडु पणेण।
धाईउ लीधउ चचुपडे गिलीउ ए गिलीउ ए गिलीउ छालभुयगो ॥
पाउपिल्लि वि समुहीय डरडरतु थीउ वाघो।
जोवणहार सवि पलमलीय हीयडई ए हीयडई ए हीयडई पडीउ दाघा ॥
तउ गुरि मूकीउ रयहरगु कीधउ सीहु कगालो।
वाघह जं ता दूरि थीउ हरिमीउ ए हरिमीउ ए हरिमीउ नयर नवालो ॥
उत्यतरि मुणि गयणठिय तसु सिरि पाटीय ठीव।
हुउ कमालीउ कालमुहो लोकिहि ए लोकिहि ए लोकिहि वाईय बूब ॥
छडीउ मागु कवालवरो वाईउ वदइ पाय।
खमि खमि सामि पमाइ करी जीतउ ए जीतउ ए जीतउ तइं मुणि राय ॥

वस्तु—ताव सधीउ ताव सधीउ ठीव मतेण ।
गणहरि करि कम्मालीयह भिखभरीउ अप्पोउ मुहत्तिण ।
रामिहि जिम वायसह इक्क निजुत्त सु हरीउ सत्तीण ।।
धारावरसि कयंतसमि भिडीउ डिभीउ ताम ।
प्रतपउ कोडि वरीस जिनउदयसूरिरवि जाम ।।
चड्डावलिहि विहरीउ प्रभु पहुतउ मेवाडि ।
पासु नमसीउ नागद्रहे समोसरीउ आहाडि ।।
जालु कुद्दालिय नीसरणी दीवउ पारउ पेटि ।
वादीय टोडरु पइ धरए पहुत्तउ षमणउ षेटि ।।
केवलिभुकति न जिणु भणए नारिहि सिद्धि सजाणि ।
उदयसूरि षमणउ षलीउ जयत ल रायअथाणि ।।
केवलिभुकति म भ्रति करे नारि जति ध्रुव सिद्धि ।
तिसमयसिद्धा वज्जि जीय लीइ आहारु विसुद्ध ।।
षीच षीर दीठतु दीउ जित्तु नदिमुणिदेवि ।
गयकुभथलि आरुहीय पढमसिद्ध मरुदेवि ।।
विवरणु पिंडवि सुद्धि कीउ धमविहिग्रथु प्रसिद्धु ।
चीयवदणदीवीय रचीय गणहरु भूअणि प्रसिद्धु ।।
अम्हह साजणसेठे छम्मासह कालो ।
वसतिणि ऊयरि ऊपनउ पदि ठाविजि बालो ।।
तेरदुरोत्तरवरिसे अप्पउ साधेइ ।
चड्डावलि दिविहो जगि लीह लिहावी ।।
कच्छूली जाएवि परमकल सु गच्छभारुधरो ।
पचम वरिस वहति सजणनदणु दीखीउ ।।
देवाएमु लहेवि गोठीय सतमे वरिस लहो ।
चउदीमि मेलीउ सघु आराठवणउ विविहपरे ।।
गोतमसामिहि मत्रु आपात्रीजइ दिणी दीहए ।
जोगवहाणु वहेवि अग इग्यारड सो पढए ।।
त सजमि रणि जीतु सयरह चुकउ पचसरो ।
गूजरधर मेवाडि मालव ऊजेणी बहू य ।।
सावय कीय उवयार सघपभावण तहि घणी य ।
सात्रीसइ आषाढि लखमण मयवरसाहसूओ ।।

छयणीनयरमभारि आरिठवणउ भीमि किओ।
कमलसूरि नियपाटि सइं हथि प्रज्ञासुरि ठवीओ॥
षमीउ षमावीउ जीवु अणसणि अप्पा सुधु कीओ।
षणि पहुत्तउ सुरलोइ गणहरु गगाजल विमलो॥
तासु सीसु चिरकालु प्रतपउ प्रज्ञातिलकसूरे।
जिणसासणिनहचदु सुहगुरु भवीयह कलपतरो॥
ता जगे जयवत उम्हाउ जा जगि ऊगइ सहसकरो।
तेरत्रिसठइ रासु कोरिंटावडि निम्मिउ॥
जिणहरि दिंतसुणत मणवछिय सवि पूरवउ।

[कछूलीरास समाप्त ॥]

समरा रासु

रचयिता

अम्ब देव

रचना-काल

वि. स १३७१ (१३१४ ई०)

समरा रासु

पहिलउ पणमिउ देव आदीसरु सेत्तुजसिहरे।
अनु अरिहंत सव्वे वि आराहउं वहुभतिभरे ॥ १ ॥
तउ सरसति सुमरेवि सारयससहरनिम्मलीय।
जसु पयकमलपसाय मूरखु माणइ मन रलिय ॥ २ ॥
संघपतिदेसलपुत्रु भणिसु चरिउ समरातणउ ए।
धम्मिय रोलु निवारि निसुणउ श्रवणि सुहावणउ ए ॥ ३ ॥
भरह सगर दुइ भूप चक्रवति त हूअ अतुलवल।
पडव पुहविप्रचड तीरथु उधरइ अतिसवल ॥ ४ ॥
जावडतणउ सजोगु हूअउ सु दूसम तव उदए।
समइ भलेरउ सोइ मत्रि वाहडदेउ ऊपजए ॥ ५ ॥
हिव पुण नवी य ज वात जिणि दीहाडइ दोहिलए।
खत्तिय खग्गु न लिंति साहसियह साहसु गलए ॥ ६ ॥
तिणि दिणि दिनु दिरकाउ समरसीहि जिणधम्मवणि।
तसु गुण करउ उद्योउ जिम अधारइ फटिकमणि ॥ ७ ॥
सासणि अमियतणी य जिणि वहावी मरुमडलिहिं।
फिउ कृतजुगअवतारु कलिजुगि जीतउ बाहुबलें ॥ ८ ॥
ओसवालकुलि चदु उदयउ एउ समानु नही।
कलिजुगि चालइ पाति चारित्रणउ सवरानरिहि ॥ ९ ॥
पाल्हणपुरु सुप्रसीधु पुन्नवतलोयह निलउ।
सोहइ पाल्हविहारु पासभुवणु तहि पुरतिलउ ॥ १० ॥

प्रथम भाषा

हाट चऊहटा रूअडा ए मढमदिरह निवेसु त।
वाचिकूव आगमघण घरपुरसरसमपन्न त।

उवएसगच्छह मडणउ ए गुरु रयणप्पहसूरि त।
धम्मु प्रकासइ तहि नयरे पाउ पणासइ दूरि त॥ १॥
तसु पटलच्छीसिरिमउडो गणहरु जखदेवसूरि त।
हसवेसि जसु जमु रमए सुरसरीयजलपूरि त॥ २॥
तसु पयकमलमरालुलउ ए कक्कसूरि मुनिराउ त।
ध्यानधनुषि जिणि भजियउ ए मयणमल्ल भडिवाउ त॥ ३॥
सिद्धसूरि तसु सीसवरो किम वन्नउ इकजीह त।
जसु घणदेसण सलहिजए दुहियलोयबप्पीह त॥ ४॥
तसु सीहासणि सोहई ए देवगुप्तसूरि बईट्ठ त।
उदयाचलि जिम सहसकरो ऊगमतउ जिण दीठु त॥ ५॥
तिह पहुपाटअलंकरणु गच्छभारधोरेउ त।
राजु करइ सजमतणउ ए सिद्धिसुरिगुरु एहु त॥ ६॥
जोइ जसु वाणीकामधेनु सिद्धतवनि विचरेउ त।
सावइजणमणइच्छिय घण लीलइ सफल करेउ त॥ ७॥
उवएसवसि वेसटह कुलि सपुरिसतणउ अवतारु त।
वयरागरि कउतिगु किसउ ए नही य ज रतनह पारु त॥ ८॥
पुन्नपुरुषु, ऊपन्नु तहि सलषणु गुणिहि गभीरु त।
जणआणदणु नदणु तसो आजड्डु जिणधमधीरु त॥ ९॥
गोत्रउदयकरु अवयरिउ ए तसु पुत्रु गोसलुसाहु त।
तसु गेहिणि गुणमत भली य आराहइ नियनाहु त॥ १०॥
सघपति आसधरु देसलु लूणउ तिणि जन्म्या ससारि त।
रतनसिरि भोली लाच्छि भणउ तीहतणी य घरनारि त॥ ११॥
देसलघरि लच्छी य निसुणि भोली भोलिमसार त।
दानि सीलि लूणाघरणि लाच्छि भली सुविचार त॥ १२॥

द्वितीय भापा

रतनकुषि कुलि निम्मली य भोलीपुत्त जाया।
सहजउ साहणु समरसीहु बहुपुन्निहि आया॥ १॥
लहूअलगड सुविचारचतुर सुविवेक सुजाण।
रत्नपरीक्षा रजवइ राय अनु राण॥ २॥
तउ देसल नियकुलपईव ए पुत्र सधन्न।
रूपवतु अनु सीलवन्त परिणाविय कन्न॥ ३॥

गोसलसुति आवासु कियउ अणहिलपुरनयरे ।
पुन्न लहइ जिम रयणमाहि नर समुद्रह लहरे ॥ ४ ॥

चउरासी जिणि चउहटा वरवसहि विहार ।
मढ मदिर उत्तग चग अनु पोलि पगार ॥ ५ ॥

तहि अछइ भूपतिहि भुवण सतखणिहि पसत्थो ।
विश्वकर्मा विज्ञानि करिउ धोइउ नियहत्थो ॥ ६ ॥

अमियसरोवरु सहसलिगु इकु वरणिहि कुंडलु ।
कित्तिषभु किरि अवररेसि मागइ आखडलु ॥ ७ ॥

अज्ज वि दीसइ जत्थ धम्मु कलिकालि अगजिउ ।
आचारिहि इह नयरत्तणइ सचराचरु रजिउ ॥ ८ ॥

पातसाहि सुरताणभीवु तहि राजु करेई ।
अलपखानु हीदूअह लोय घणु मानु जु देई ॥ ९ ॥

साहु रायदेसलह पूतु तसु सेवइ पाय ।
कला करी रंजविउ खानु बहु देइ पसाय ॥ १० ॥

मीरि मलिकि मानियइ समरु समरथु पभणीजइ ।
परउवयारियमाहि लीह जसु पहिली य दीजइ ॥ ११ ॥

जेठसहोदरि सहजपालि निज प्रगटिउ सहजू ।
दक्षणमंडलि देवगिरिहि किउ धम्मह वणिजू ॥ १२ ॥

चउवीसजिणालय जिणु ठविउ सिरिपासजिणिदो ।
धम्मधुरधरु रोपियउ धर धरमह कदो ॥ १३ ॥

साहणु रहियउ पंभनयरि सायरगभीरे ।
पुन्नपुरिसकीरितितरङ्ग पूरइ परतीरे ॥ १४ ॥

तृतीय भाषा

निसुणऊ ए समइप्रभावि तीरथरायह गजणउ ए ।
भवियह ए करुणारावि नीठुरमनु मोहि पडिउ ए ।
समरऊ ए साहसधीरु वाहविलग्गउ वहू अ जण ।
वोलई ए असमवीरु दूसमु जीपइ राउतवट ए ॥ १ ॥

अभिग्रहू ए लियइ अविलवु जीवियजुव्वणवाहवलि ।
उघरऊ ए आदिजिणविवु नेमु न मेल्हउ आपणउ ए ।
भेटिऊ ए तउ पानपानु सिरु धूणइ गुणि रंजियउ ए ॥ २ ॥

वीनती ए लागु लउ वानु पूछए पहुता केण कज्जे ।
सामिय ए निसुणि अडदासि आमालवणु अम्हतणउ ए ।
भइली ए दुनिय निराम ह ज भागी य हीदूअतणी ए ।
सामिय ए सोमनयणेहिं देषिउ समरा देइ मानु ॥ ३ ॥

आपिऊ ए सव्ववयणेंहिं फुरमाणु तीरथमाडिवा ए ।
अहिदर ए मलिकआएसि दीन्ह ले श्रीमुखि आपण ए ।
पतमत ए षानपयेसि किउ रलियाइतु घरि सपत्तो ।
पणमई ए जिणहरि राउ समणसघो नहि वीनविउ ए ॥ ४ ॥

सघिहि ए कियउ पसाउ वुद्धि विमासिय वहूयपरे ।
सासण ए वर सिणगारु वस्तपालो तेजपालो मन्त्रे ।
दरिसण ए छह दातारु जिणधर्मनयण वे निम्मला ए ।
आइसी ए रायसुरताण तिणि आणीय फलही य पवर ॥ ५ ॥

दूसम ए तणी य पुणुआणअवसरो कोइ नंही तसुतणउ ए ।
इह जुग ए नही य वीसासु मनुमात्रे इय किम छरए ।
तउ तुहु ए पुन्नप्रकासु करि ऊधरि जिणवरधरमु ॥ ६ ॥

चतुर्थ भाषा

संघपतिदेसलु हरषियउ अति धरमि सचेतो ।
पणमइ सिधसुरिपयकमलो समरागरसहितो ।
वीनती अम्हतणी प्रभो अवधारउ एक ।
तुम्ह पसाइ सफल किया अम्हि मनोरहनेक ॥ १ ॥

सेत्तुजतीरथ ऊधरिवा ऊपन्नउ भावो ।
एकु तपोधनु आपणउ तुम्हि दियउ सहाउ ।
मदनु पंडितु आइसु लहवि आरासणि पहुचइ ।
सुगुरवयगु मनमाहि धरिउ गाढउ अति रूचइ ॥ २ ॥

राणेरा तहि राजु करइ महिपालदेउ राणउ ।
जीवदया जगि जाणिजए जो वीरु सपराणउ ।
पातउ नामिहि मंत्रिवरो तसुतणइ मुरज्जे ।
चद्रकन्हइ चकोरु जिसउ सारइ वहुकज्जे ॥ ३ ॥

राणउ रहियउ आपुणपई षाणिहि उपकठे।
टकिय वाहइ सूत्रहार भाजइ घणगठे।
फलहीं आगिय समरवीरि ए अतिवहुजयणा।
समुद्र विरोलिउ वासुगिहिं जिम लाधा रयणा॥ ४ ॥
कूआरमि उछवु हूअउ त्रिसीगमइनइरे।
फलही देषिउ धामियह रगु माइ न सइरे।
अभयदानि आगलउ करुणारसचित्तो।
गोत्ति मेल्हावइ पइरालुअह आपइ वहुवित्तो॥ ५ ॥
भाडू आव्या भाउघणउ भवियायण पूजइ।
जिम जिम फलही पूजिजए तिम तिम कलि धूजइ।
खेला नाचइ नवलपरे घाघरिरवु झमकइ।
अत्ररिउ देषिउ धामियह कह चित्त न चमकइ॥ ६ ॥
पालीताणइ नयरि सघु फलही य वघावइ।
वालचंद्र मुनि वेगि पवरु कमठाउ करावइ।
किं कप्पूरिहि घडीय देह षीरसायरसारिहि॥ ७ ॥
सामियमूरति प्रकट थिय कृप करिउ ससारे।
मागी दीन्ह वघावणी य मनि हरपु न माए।
देसलऊअह चरित्रि सहू रलियातु थाए॥ ८ ॥

पचमी भाषा

सघु वहुभत्तिहिं पाटि वयसारिउ।
लगनु गणिउ गणधरिहिं विचारिउ।
पोमहसाल खमासण देयए।
सूरिसेयवरमुनि सवि समहे ए॥ १ ॥
घरि वयसवि करी के वि मन्नाविया।
के वि धम्मिय हरसि धम्मिय धाइया।
वहुदिसि पाठविय कुकुम पत्रिया।
संघु मिलइ वहुभली य सज्जाइया॥ २ ॥
सुहगुरुसिघसुरिवासि अहिसिंचिउ।
सघपति कल्पतरु अमिय जिम सिंचिउ।
कुलदेवत सचिया वि भुजि अवतरइ।
सूहव सेस भरइ तिलकु मगलु करइ॥ ३ ॥

पोसवदि सातमि दिवसि मुमुहुत्तिहिं ।
आदिजिणु देवालए ठविउ मुहचित्तिहिं ।
धम्मधोरी य धुरि धवल दुइ जुत्तया ।
कुंकुमपिंजरि कामधेनु पुत्तया ॥ ४ ॥
इदु जिम जयरथि चडिउ सचारए ।
मूहवरिरि मालिथालु निहालए ।
जा किउ हयवरो वमहू रामिउ हूउ ।
कहइ महागिरि सकुनु इहु नद्धउ ।
आगलि मुनिवरसंघ सावयजणा ।
तिलु न पिरइ तिम मिलिय लोय घणा ॥ ५ ॥
मादलवसविणाझुणि वज्जए ।
गुहिरभेरीयरवि अवरो गज्जए ।
नवयपाटणि नवउ रगु अवतारिउ ।
मुपिहिं देवालउ सखारी सचारिउ ॥ ६ ॥
धरि वयर्माव करि के वि समाहिया ।
समरगुणि रंजिउ विरलउ रहियउ ।
जयतु कान्हु दुइ सघपति चालिया ।
हरिपालो लढुको महाधर ट्टढ थिया ॥ ७ ॥

षष्ठी भाषा

वाजिय संख असंख नादि वाहल दुडुदुडिया ।
घोडे चडइ सल्लारसार राउत्त सींगडिया ।
तउ देवालउ जोत्रि वेगि घाघरिरवु झमकइ ।
सम विसम नवि गणइ कोइ नवि वारिउ थक्कइ ॥ १ ॥
सिजवाला धर धडहडइ वाहिणि बहुवेगि ।
धरणि धडक्कइ रजु ऊडए नवि सूझइ मागो ।
हय हीसइ आरसइ करह वेगि वहइ वइल्ल ।
साद किया थाहरइ अवरु नवि देई बुल्ल ॥ २ ॥
निसि दीवी झलहलहि जेम ऊगिउ तारायणु ।
पावलपारु न पामियए वेगि वहइ सुखासण ।
आगेवाणिहि सचरए-सघपति साहुदेसलु ।
बुद्धिवतु बहुपुनिवतु परिकमिहिं सुनिश्चलु ॥ ३ ॥

पाछेवाणिहि सोमसीहु माहुमहजापूतो ।
सागणुसाहु लूणिगह पूतु सोमजिनिजुत्तो ।
जोड करी असवारमाहि आपणि समरागरु ।
चडीय होड चहुगमे जोइ जो सघअसुहकरु ॥ ४ ॥
सेरीसे पूजियउ पासु कलिकालिहिं सकलो ।
सिरषेजि थाइउ धवलकए सघु आविउ सयलो ।
धघूकउ अतिक्रमिउ ताम लोलियाणइ पहुतो ।
नेमिभुवणि उछवु करिउ पिपलालीय पत्तो ॥ ५ ॥

सप्तमी भाषा

संधिहिं चउरा दीन्हा तहिं नयरपरिसरे ।
अलजउ अगि न माए दीटउ विमलगिरे ।
पूजिउ परवतराउ पणमिउ वहुभत्तिहिं ।
देसलु देयए दाण मागणजणपत्तिहिं ॥ १ ॥
अजियजिणिदजुहारो मनरगि करेवि ।
पणमइ सेत्रुजसिहरो सामिउ सुमरेवि ॥ २ ॥
पालिताणइ नयरे सघ भयलि प्रवेसु ।
ललतसरोवरतीरे किउ सघनिवेसु ।
कज्जसहाय लहुभाय लहु आवियउ मिलेवि ॥ ३ ॥
सहजउ साहणु तीहि त्रिन्हइ गगप्रवाह ।
पासु अनइ जिण वीरो वदिउ सरतीरिहिं ।
पाष करइ जलकेलि सरु भरिउ वहुनीरिहिं ॥ ४ ॥
सेत्रुजसिहरि चडेवि सघु सामि ऊमाहिउ ।
सुललितजिणगुणगीते जणदेहु रोमञ्चिउ ।
सीयलो वायए वाओ भवदाहु ओल्हावए ।
माडीय नमिय मरुदेवि सतिभुवणि सघु जाए ॥ ५ ॥
जिणबिंबइ पूजेवी कवडिजरकु जुहारए ।
अणुपमसरतडि होई पहुता सीहदुवारे ।
तोरणतलि वरसते घणदाणि सघपत्ते ।
भेटिउ आदिजगनाहो मडिउ पत्रीठमहूछवो ॥ ६ ॥

अष्टमी भाषा

चलउ चलउ सहियडे सेत्रुजि चडिय ए ।
आदिजिणपत्रीठ अम्हि जोइसउ ए ।
माहसुदि चउदसि दूरदेसतर सघमिलिया तहिं अति अवाह ॥ १ ॥
माणिकेमोतिए चउकु सुर पूरइ रतनमइ वेहि सोवन जवारा ।
अशोकवृक्ष अनु आम्र पल्लवदलिहि रितुपते रचियले तोरणमाला ॥ २ ॥
देवकन्या मिलिय धवल मगल दियइ किनर गायहि जगतगुरो ।
लगनमहूरतु सुरगुरो साधए पत्रीठ करइ सिधसूरिगुरो ॥ ३ ॥
भुवनपतिव्यतरजतिसुरो जयउ जयउ करइ समरि रोपिउ द्रिढु धरमकदो ।
दुदुहि वाजिय देवलाकि तिहुअणु सींचिउ अमियरसे ॥ ४ ॥
देउ महाधज देसलो सघपते ईकोतरु कुल ऊधरए ।
सिहरि चडिउ रगि रूपि सोवनि धनि वीरि रतनि वृष्टि विरचियले ॥ ५ ॥
रूपमय चमर दुइ छत्त मेघाडबर चामरजुयल अनु दिन्नदुन्नि ।
आदिजिणु पूजिउ सहलकतिहि कुसुम जिम कनकमयआभरण ॥ ६ ॥
आरतिउ धरियले भावलभत्तारिहिं पुव्वपुरिम सग्गि रजियले ।
दानमडपि थिउ समर सिरिहि वरो सोवनसिणगार दियइ याचकजन ॥ ७ ॥
भत्ति पाणी य वरमुनि प्रतिलाभिय अच्चारिउ वाहइ दुहियदीण ।
वाविउ मुधम वितु सिद्धखेत्रि इद्रउच्छवु करि ऊतरए ॥ ८ ॥
भोलीयनदणु भलइ महोत्सवि आविउ समरु आवासि गनि ।
तेरइकहत्तरइ तीरथउद्धारु यउ नदउ जाव रविससि गयणि ॥ ९ ॥

नवमी भाषा

सघवाछलु करी चीरि भले माल्हतडे पूजिय दरिसण पाय ।
सुणि सु दरे पूजिय दरिसणपाय ।
सोरठदेस सघु सचरिउ मा० चउडे रयणि विहाइ ॥ १ ॥
आदिभक्तु अमरेलीयह माल्ह० आविउ देसलजाउ ।
अलवेसरु अल जवि मिलए माल्ह० मडलिकु सोरठराउ ॥ २ ॥
ठामि ठामि उच्छव हुअइ माल्ह० गढि जूनइ सपत्तु ।
महिपालदेउ राउलु आवए माल्ह० सामुहउ सघअणुरत्तु ॥ ३ ॥
महिपु समरु बिउ मिलिय सोहइ माल्ह० इदु किरि अनइ गोविंदु ।
तेजि अगजिउ तेजलपुरे मा० पूरिउ सघआणदु ॥सु ४॥

वउणथलीचेत्रप्रवाडि करे माल्हं० तलहटी य गढमाहि ।
ऊजिलऊपरि चालिया ए माल्ह० चउव्विहसघहमाहि । सुणि ।
दामोदरु हरि पचमउ माल्ह० कालमेघो क्षेत्रपालु । सुणि ।
सुवनरेहा नदी तहिं वहए माल्ह० तरुवरतणउ झमालु ।। ५ ।।
पाज चडता धामियह मा० क्रमि क्रमि सुकृत विलसति । सुणि ।
ऊची य चडियए गिरिकडणि मा० नीची य गति पोडति ।। ६ ।।

पामिउ जादव रायभुवणु मा० त्रिनि प्रदक्षिण देइ ।
सिवदेविसुतु भेटिउ करिउ मा० ऊतरिया मढमाहि । सुणि ।
कलस भरेविणु गयदमए मा० नेमिहिं न्हवणु करेइ ।
पूज महाधज देउ करिउ मा० छत्र चमर मेल्हेइ ।। ७ ।।

अंबाई अवलोयणसिहरे मा० साबिपज्जूनि चडंति । सुणि ।
सहसारामु मनोहरु ए मा० विहसिय सवि वणराइ । सुणि ।
कोइलसादु सुहावणउ मा० निसुणियइ भमरझकारु ।सु ८।।
नेमिकुमरतपोवनु ए मा० दुट्ठ जिय ठाउं न लहति । सुणि ।
इसइ तीरथि तिहुयणदुलभे मा० निसिदिनु दानु दियति ।। ९ ।।

समुदविजयरायकुलतिलय मा० वीनतडी अवधारि । सुणि ।
आरतीमिसि भवियण भणइ मा चतुगतिफेरडउ वारि ।।सु १०।।
जइ जगु एकु मुहु जोइयए मा० त्रिपति न पामियइ तोइ । सुणि ।
सामलवीर तउ सार करे मा० वलि वलि दरिसणु देजि ।।सु ११।।
रलीयरेवयगिरि ऊतरिउ ए मा० समरडो पुरुषप्रधानु ।
घोडउ साकिरि साकलिय मा० राउलु दियइ वहुमानु ।।सु १२।।

दशमी भाषा

रितु अवतरियउ तहि जि वसतो सुरहिकुसुमपरिमल पूरंतो समरह वाजिय विजयढक्क ।
सागुसेलुसल्लइसच्छाया केसूयकुडयकयवनिकाया सघसेनु गिरिमाहइ वहए ।
बालीय पूछइ तरुवरनाम वाटइ आवइ नव नव गाम नयनीझरणरमाउलइ ।। १ ।।
देवपटणि देवालउ सघह सरवो सरु पूरावइ अपूरवपरि जहिं एक हुईअ ।
तहिं आवइ सोमेसरछत्तो गउरवकारणि गरुउ पहूतो आपणि राणउ मूधराजो ।। २ ।।
पान फूल कापड वहु दीजइ लूणममउं कपूरु गणीजइ जवाधिहिं सिरु लिंपियए ।
ताल तिविल तरविरिया वाजइ ठामि ठामि थाकणा करिजइ पगि पगि पाउल पेपणए ।। ३ ।।

माणुस माणुसि हियउं दलिजइ घोडे वाहिणिगाहु करीजइ हयगय सूझइ नवि जणह ।
दरिसणसउं देवालउ चल्लइ जिणसासणुजगि रगिहि मल्हइ जगतिहि आव्या सिवभुवणि॥४॥
देवसोमेसरदरिसणु करेवी कवडिबारि जलनिहि जोएवी प्रियमेलइ संघु ऊतरिउ ।
पहुचदप्पहपय पणमेवी कुमुमकरडे पूज रएवी जिणभुवणे उच्छवु कियउ ॥ ५ ॥
सिवदेउलि महाधज दीधी सेले पंचे वन्नसमिद्धोअपूरवु उच्छवु कारविउ ।
जिनवरधरमि प्रभावन कीधी जयतपताका रवितलि वद्धी दीनुपयाणउं दीवभणी ।
कोडिनारिनिवसणदेवी अंबिक अंबारामि नमेवी दीवि वेलाउलि आवियउ ए ॥ ६ ॥

एकादशी भाषा

सघु रयणायरतीरि गहगहए गुहिरगभीरगुणि ।
आविउ दीवनरिंदु सामुहउ ए संघपतिसवदु सुणि ॥ १ ॥

हरषिउ हरपालु चीति पहुतउ ए सघु मोलविकरे ।
पभणइ दीवह नारि संघह ए जोअण ऊलावली ए ।
आउला वाहिन वाहि वेगुलइ ए चलावि प्रिय वेडुली ए ॥ २ ॥

किसउ सुपुन्नपुरिष जोइउ ए नयणुला सफल करउ ।
निवछणा नेत्रि करेसु ऊतारिसू ए कपूरि ऊआरणा ए ।
वेडीय वेडीय जोडि बलियऊ ए कीधउ बधियारो ॥ ३ ॥

लेउ देवालउमाहि वइठउ ए सघपति संघसहिउ ।
लहरि लागइं आगासि प्रवहणु ए जाइ विमान जिम ।
जलवटनाटकु जोइ नवरग ए रास लउडारस ए ॥ ४ ॥

निरुपमु होइ प्रवेसु दीसई ए रुवडला धवलहर ।
तिहा अच्छइ कुमरविहारु रुअडऊ ए रुअडुला जिणभुवण ।
तीर्थंकर तीह वंदेवि वदिऊ ए सयभू आदिजिणु ।
दीठउ वेणिवच्छराजमदिरु ए मेदनीउरि धरिउ ।
अपूरवु पेषिउ सघु उत्तारिऊ ए पइली तडि समुदला ए ॥ ५ ॥

द्वादशी भाषा

अजाहरवरतीरथिहि पणमिउ पासजिणिदो ।
पूज प्रभावन तहि करहि अजिउ ए अज्जिउ ए अज्जिउ सफल सुछंदो ॥ १ ॥
गामागरपुरवोन्निती वलिउ सेतुजि सपत्तो ।
आदिपुरीपाजह चडिऊ ए वदिऊ ए वदिऊ, ए वदिऊ ए मरुदेविपूतो ॥ २ ॥

अगरिकपूरिहिं चदणिहि मृगमदि मंडणु कीय ।
कसमीराकुंकमरसिहिं अगिहिं ए अगिहिं ए अगो अगि रचीय ।
जाइबउलविहसेवत्रिय पूजिसु नाभिमल्हारो ।
मणुयजनमुफलु पामिऊ ए भरियऊ ए भरियऊ ए भरियऊ सुकृतभडारो ॥ ३ ॥

सोहग ऊपरि मजरिय बीजी य सेत्रुजि उधारि ।
ठिय ए समरऊ ए समरऊ ए समरु आविउ गुजरात ।
पिपलालीय लोलियणे पुरे राजलोकु रजेई ।
छडे पयाणे सचरए राणपुरे राणपुरे पहुचेई ॥ ४ ॥

वढवाणि - न विलबु किउ जिमिउ करीरे गामि ।
मडलि होईउ पाडलए नमियऊ ए नमियऊ ए नमियऊ नेमि सु जीवतसामि ।
सखेसर सफलीयकरणु पूजिउ राणपुरे पासजिणिदो ।
सहजुसाहु तहिं हरषियउ ए देषिऊ ए देषिऊ ए देषिउ फणिमणिवृदो ॥ ५ ॥

डुंगरि डरिउ न खोहि खलिउ गलिउ न गिरवरि गव्वो ।
सघु सुहेलइ आणिउ ए सघपती ए सघपती ए सघपतिपरिहिं अपुव्वो ॥ ६ ॥

सज्जण सज्जण मिलीय तहिं अगिहिं अगु लियते ।
मनु विहसइ ऊलट्ठु घणउ ए तोडरू ए तोडरू ए तोडरू कठि ठवते ॥ ७ ॥

मत्रिपुत्रह मीरह मिलिय अनु ववहारियसार ।
सघपति सघु वधावियउ कठिहिं ए कठिहिं ए कठिहिं घालिय जयमाल ।
तुरियघाटतरवरि य तहिं समरउ करइ प्रवेसु ।
अणहिलपुरि वद्धामणउ ए अभिनवु ए अभिनवु ए अभिनवु पुन्ननिवासो ॥ ८ ॥

सवच्छरि इक्कहत्तरए थापिउ रिसहजिणिदो ।
चैत्रवदि सातमि पहुत घरे नदऊ ए नदऊ ए नदऊ जा रविचदो ॥ ९ ॥

पासडसूरिहिं गणहरह नेऊअगच्छनिवासो ।
तसु सीसिहिं अबदेवसूरिहिं रचियऊ, ए रचियऊ ए रचियऊ समरारासो ।
एहु रासु जो पढइ गुणइ नाचिउ जिणहरि देइ ।
श्रवणि सुणइ सो वयठऊ ए तीरथ ए तीरथ ए तीरथजात्रफलु लेई ॥ १० ॥

॥ इति श्री सघपतिसमरसिहराम ॥

पंचपंडव चरित रासु

रचयिना

शालिभद्र सूरि

रचना-काल

वि. स १४१० (१३५३ ई०)

पंचपंडव चरित रासु

नेमिजिणिंदह पय पणमेवी
सरसति सामिणि मनि समरेवी
अविकि माडी अणुसरउ ॥ १ ॥

आगइ द्वापर माहि जु वीतो
पचह पंडव तणउ चरीतो
हरखि हिया नइ हु भणउ ॥ २ ॥

रासि रसाउलु चरीउ थुणीजइ
किम रयणायरु हीयइं तरीजइ
सानिधि सासणदिवि तणइ ॥ ३ ॥

आदि जिणेंसर केरउ नंदणु
कुरुनरिंदु हूउ कुलमडणु
तासु पुत्तु हूउ हाथियउ ॥ ४ ॥

तीणइ थापिउ तिहूयणसारो
वीजउ अमरापुरि अवतारो
हथिणाउरपुरु वन्नीयए ॥ ५ ॥

तिणि पुरि हूउ सति जिणेसरु
सघह सतिकरउ परमेसरु
चक्कवट्टि किरि पंचमउ ॥ ६ ॥

तिणि कुलि मुणीय सतणु राओ
भूयवलि भंजइ रिउभडिवाओ
दाणि जगु ऊरिणु करए ॥ ७ ॥

अन्नदिवसि आहेडइ चल्लइ
पारधिवमगु सु किमइ न मिल्हइ
दलु मेल्ही दूरिहि गयओ ॥ ८ ॥

हरिगु एकु हरिणी सु खेलइ
कोमलवयणि हरिणी बोलइ
"पेखि पेखि प्रिय पारधीउ" ॥ ९ ॥

सरु साधी राउ केडइ धाइ
हरिणउ हरिणी सहितु पुलाइ
ऊजाईउ गिउ गगवणे ॥ १० ॥

नयणह आगलि गयउ कुरगु
राय चीति जा हूयउ विरगु
जोइ वामूं इ दाहिणउ ॥ ११ ॥

ता वणि पेखइ मणिमइ भूयणु
तीछे निवसइ नारीरयणु
खणि पहुतउ राउ धवलहरे ॥ १२ ॥

जन्हनरिंदह केरी धूय
गंगा नामि रइसमरूय
ऊठह नरवइ सामुहीय ॥ १३ ॥

पूछइ राजा "कहि समिवयणि
इणिवणि वसीइ कारणि कमणि"
बोलइ गग गहासईय ॥ १४ ॥

"जो अम्हारु वयणु सुणेसिइ
निश्चि सो वरु मइ परिणसिइ
खेचरु भूचरु भूमिधरो" ॥ १५ ॥

त जि वयणु राइ मानीजइ
जन्हराय बेटी परिणीजइ
परिणी पहुतउ नियघरे ॥ १६ ॥

ए पुत्तु तसु कूखि ऊपन्नउ
विद्या लक्षण गुणसपन्नउ
कला बाहत्तरि सो पढए ॥ १७ ॥

गगानामि गगेउ भणीजइ
क्रमि क्रमि जुव्वणि तिणि पमरीजइ
बीज तणी ममिरेह जिम ॥ १८ ॥

नितु नितु राउ अहेडइ चल्लइ
रोनि चडि राणी इम बुल्लइ
"प्रियतम पारधि मन करउ" ॥ १९ ॥

राइ न मानी गगा गाणी
तीण दूगि मनि कुरमाणी
पूत्त लेउ पीहरि गईय ॥ २० ॥

घनुपकला माउलउ पढावइ
जीवदया नियचित्ति रहावइ
बोधि चारणमुनि तणइ ॥ २१ ॥

साचउ जाणइ जिणधर्ममागो
तउ मनि जूवण लगइ विरागो
गगानदणु वणि वमए ॥ २२ ॥

वस्तु

राउ संतणु राउ सतणु वयणु चुक्केवि
आहेडइ चल्लीऊ पाचपमरि मनि मोहि घूमीउ
पूत्त लेउ पीहरि गई गंग तीण अवमाणि दूमीय
वात मुणी पाछउ वलइ जा नवि देग्वइ गंग
चउवीस [वास] रहइ जिमु रडहीणु [अणंगु]॥२३॥

ठवणी ॥ १ ॥

आह मनमाहि नरिंदो पारधि मभावइ
सइ दलि रमलि करतउ गगातडि आवइ ॥

गगतडा तडि अछइ ओयणु
वित्थरि दीरघि बारह जोयणु
पामहरा वागुरीय वहूय
पडटा वणि कोलाहलु हूय ॥

दस दिसि वाजइ हाक वहू जीव विणामइं
एकि घुमइ एकि वायइ एकि आगलि नामइ ॥

दह दिसि इम जा वनु आरोडइ
जीव विणासइ तरूयर मोडइ
जा इम दलवइ पारधि लागइ
ताम अमभमु पेखइ आगइ ॥

विहु खवे दो भाथा करयलि कोदंडो
बालीवेसह बालो भुयदंडपयडो ॥

राय पासि पहिलु पहुचेई
पय पणमो वीनती करेई ।
"साभलि वाचा मुझ भूपाल
इणि वणि अछउ अम्हि रखवाल ॥

जेती भुइ तूं राओ तेनी तू मरणि
मुझ मनु का इम दूमइ जीवह मरणि" ॥

तासु वयणु अवहेलइ राओ
अतिघणु घल्लइ जीवह घाउ
कोपि चडिउ तसु वणरखवालो
धनुष चडावइ जमविकरालो ॥

हाकी भड ऊठाडइ आगला ति पाडइ
सरसे जपउ ढाडइ राउत रूमाडइ ॥

बेटउ रूडु करतउ जाणी
ताखणि आवी गगाराणी
बेउ पखि झुझु करता राखइ
नियप्रिय आगलि नदणु दाखइ ॥

देखी गगाराणी राजा आणदिउ
मेल्ही सवि हथियार बेटउ आलिगिउ ॥

राउ भणइ "मइ किसउ पवारउ
हिव तुम्हि मइ सु घरि पाउधारो
राजु तुम्हारु पूत्त तुम्हारउ
अज्जीउ गगे किसुं विचारउ" ॥

पूत्ति भतारिहिं देवी अतिघणुं मानवी
पूत्त समोपीउ सय आपणि नवि आवी ॥

पिता पुत्त वेउ रंगि मिलीया
देवि मुकलीवी पाछा वलीया
हथिणाउरि पुरि राजु करेई
क्षण जिम दोहा वहुय गमेई ॥

अन्नदिणतरि रामलि करतउ
जमणतडा तडि राउ पहूतउ ।
जल खेलंती दीठी वाल
वेडी वइठी रूपविसाल ॥

पूछइ वेडीवाहा तेडी
"ए कुण दीसइ वइठी वेडी" ।
वेडीवाहा तणु जु सामी
राय पासि पभणइ सिरु नामी ॥

"ए अम्हारा कुलमिणगारी
सामी अछइ अजीय कूयारी ।
कोइ न पामु वरु अभिराम
सफलु करू जिम देवह कामु" ॥

तसु घरि वइसी राउ सा वाली मागइ
वात स वेडीवाहा पुण चीति न लागइ ॥

"साभलि सामी अम्ह घरसूत्तो
तुम्ह घरि अछइ गगापूत्तो
मइ वेटी जउ तुम्हह देवी
तउ मइ हथि दूख भरेवा ॥

कुरुववसह केरउ मडणु
राजु करेसि गगानदणु
धीय महारी तणा जि वाल
ते नवि पामइ दूख कराल ॥

गुज पासि तुम्हि किसु कहावउ
तुम्हि अम्हारी धीय न पामउ" ।
इम निगुणीइ घरि पहुत नरिंदो
जिम विंध्याचलि हरीइ करिंदो ॥

॥ वस्तु ॥

नयरु अन्नइ नयरु अन्नइ रयणउरु नामि
रयणसिहरु नरवरु वसइ तासु गेहि एह वाल जाईय
विद्याहरि अपहरीय जातमात्र तडि जमण मिल्हीय-
डमीय वाल गयणह पडी तउ मइ लिद्ध कुमारि
सत्यवती नामि हुमिए सतणघरनारि" ॥

ठवणि ॥ २ ॥

पणमीउ सामीउ नेमिनाहु अनु थविकि माडी
पभणिसु पडव तणउ चरितु अभिनवपरिवाडी ॥
हथिणाउरि पुरि कुरनरिद केरो कुलमडणु
महजिहि मतु सुहागसीलु हूउ नरवरु सतणु ॥

तसु घरि राणी अछइ दुन्नि एक नामि गगा
पुत्त जाउ गगेउ नामि तिणि तिहूणि चगा ॥
सत्यवती छइ अवर नारि तसु नदण दुन्नि
सवे सलक्खण रूयवत अनु कचणवन्नि ॥
पहिउलउ वेटउ करमदोसि' वालप्पणि विवनउ
विचित्रवीर्यु बीजउ कुमारु बहुगुणसपन्नउ ॥
राउ पहूतउ सरगलोकि गगेयकुमारिं
तउ लघु बधवु ठविउ, पाटि तिणि वयणविचारिं ॥
कासीसरघरि तिन्नि धूय अविकि अवाला
त्रीजी अबा अछइ बाल मयणह जयमाला ॥
परिणावेवा तीह बाल सयवरु मडाविउ
गगानंदणु चडीउ रोसि अणतेडिउ आव्यो ॥
समरि जिणीय सवि राय बाल लेउ त्रिण्हइ आव्यो
वडउ महोच्छउ करीउ नयरि बधवु परिणाव्यो ॥
अविकि वेटउ धायराठु सो नयणे आधउ
अवाला नउ पुत्त पडु त्रिहु भुयणि प्रसिद्धउ ॥
अवानंदणु विदुरु नामु नामि जि सरीखउ
खइ खीणइ पुणु विचित्रवीर्यु पंडु राजि पतीठिउ ॥
कुंतादिवि नउ लिविउ, रूपु देखीउ चित्रामि
मोहिउ पडु नरिंदु चीति अति लीधउ कामि ॥
विद्याधरु वनि कुणिहि एकु मेल्हिउ छइ वाधी
छोडिउ पंडुकुमारि पासि तसु मुद्रा लाधी ॥
एतइं अधकवृष्णि नामि सोरीपुरसामी
दस वेटा तसु एक धूय कुंतादिवि नामी ॥
पाटी आपणहारु पुरुषु सोरियपुरि पहुतउ
"पडु वरीउ" पिय पासि कू यरि सभलइ कहतउ ॥
नवि जीमइ नवि रमइ रगि नवि सहीय वोलावइ
वोलावी ती पहीय जाइ अणतेडी आवइ ॥

रीजइ गूंजइ रडइ बाल जिम मयग गलावद्ध
कामिनि काणणि मण समाधि सा किमइ न पामइ ॥

चंदु य चंदणु हीयइ हार अंगार समाणउ
'कुणहइ काइ दहइ दुखु जाणीइ तु जाणउ ॥

नीलजु निघिणु मइं अजाणु काइ मारइ मारो
ईणि जनमि मुज पंडुकुमर विणु नही य भतारो' ॥

विरहि विरागीय वण मझारि जाउं मणि भावइ
'लवणिम जुवणु रूपरेह ता आलिहिं जाइ' ॥

कहि ठवइ जा पासु उन्न तरुयर णी ...
आविउ मूंद्रप्रभावि ताम मनि चिंतिउ सामि ॥

परिणीय आपी पंडुकुमरि आपणीय जि थवणी
सहोयर वनि एकांति हूउ पुत्तु जायउ रमणी ॥

गंग प्रवाहिउ रयण माहि घालिउ, मजूस
कीजइ पातकु पुण्यवंति कइ लाज कि रीस ॥

जाणीउ राइ कुंतिचित्तु पंडु जु परिणावइ
लिहिउ जासु निलाडि जाम त सुंजु आवइ ॥

॥ वस्तु ॥

सबलु नरवरु सबलु नरवरु देसि गंधारि
कुंयरि तसु तणए आठ धीय गंधारि पहिलीय
कुलदेवलिआइसि धायरट्ठ नरनाह दिन्हीय
देवकनरदइ नदणी कुमुइणि विदुरकुमारि
वीजी मद्रकि मद्रवूय पडुतणइ घरनारि ॥

गभु धरीऊ गभु धरीऊ देवि गधारि
दुट्ठत्तणि डोहलऊ कूड कलहि जण झुझि गज्जइ
पुरुपवेसि गइवरि चडई सुहड जेम मनि समरु सज्जइ
गानि रडता वदीयण पेखीउ हरिखु करेइ
सासु ससरा कुणवि सुं अहनिसि कलहु करेइ ॥

ठवणि ॥ ३ ॥

पुन्नप्रभाविहिं पामीयउ पहिलुं कुतादेवि
पुन्नमणोरहु पूत्त पुण सुमिणा पच लहेवि ॥

दीठउ सुरगिरि क्षीरहरो सुमिणइ सिरिरविचंद
जनमि युधिष्ठिरराय तणइ मिलीया सुरवइबिंद ॥
गयणगणि वाणी पडीय 'खमि दमि सजमि एकु
धरगपूतु जगि ऊपनउ सत्यसीलि सुविवेकु' ॥
रोपीउ पवणिहिं कलपतरो सुमिणइ कुंतिदूयारि
पवणह नंदण वज्जमओ भीमु सु भूयण मझारि ॥
त्रीसे मासे जाईयउ दूमीय देवि गधारि
दिवसि अधुरे ऊपनओ दुर्योधनु ससारि ॥
दसह दसारह बहिनडीय त्रीजउ धरइ आधानु
'दाणव दल सवि निद्दलउ मनि एवडु अभिमानु
'धनुषु चडावीउ भूयणि भमउं' इच्छा छइ मन माहि
वइठउ दीठउ हाथिणीय सुरवइ सुमिणा माहि ॥
जनममहोछवु सुर करइ नाचइ अपछरबाल
दुदुहि वाजइ गयणवले घरणिहिं ताल कसाल ॥
गयणह वाणी ऊछलीय 'अरजुन इद्रह पूतु
धनुषवलि धधोलिसीए दुरयोधन धरसूतु' ॥
नकुलु अनइ सहदेवु भडो जुअलइ जाया बेउ
प्रभु चदप्रभु थापीयउ नासिकि कूतीदेउ ॥
सउ बेटा धयराठघरे पंडु तणइ घरि पच
दुर्योधनु कउतिग करए कूडा कवडप्रपच ॥
अन्नदिणतरि गिरिसिहरे राजा रमलि करेइ
कुतीकरयले अडवडिउ रडयड भीमु रुडेइ ॥
पाहणि पाहणि आफलीउ बाल न दूमीउ देहु
पाहण सवि चूनउ हूयए केवडु कउतिगु एहु ॥
गयणह वाणी आपीयउ आगइ वज्रसरीरु
वाधइं पचइ चद जिम पडव गुणगभीर ॥
भीमु भीडतउ जमणतडे कूटइ कुरववीर
पाडइ द्रउडइ भेडवइ बाधीय बोलइ नीरि ॥

दुरयोधनु रोसिहिं चडीउ बोलइ "साभति भीम
तुं मुझ बधव कूटतउ म मरि अखूटइ ईम" ॥
भीमि भिडिउ भद्र पाडीयउ बाधीउ घालिउ नीरि
जागिउ त्रोडइ बंध बलि नवि दूमिइ सरीरि ॥
विसु दीधउ दुरयोधनिहिं भीमह भोजन माहि
अमृतु हूई नइ परिणमिउ पुन्निहिं दुरिउ पुलाइ ॥
अतिरथि सारथि तहि वसए राय तणइ घरिसूत्तु
राधा नामिहि तसु घरणि करणु भणुं तसु पूत्तु ॥
सउ कूंयर पचगलउं किवहरि पढिवा जाइं
धीरु वीरु मति आगलउ करणु पढइ तिणि ठाइ ॥
दडा लगइ गुरू भेटीउ द्रोणु सु बभणवेसि
तेह पासि विद्या पढइ कृपगुर नइ उपदेसि ॥

॥ वस्तु ॥

तीह कूंयरह तीह कूंयरह माहि दो वीर
इकु अरजुनु आगलऊ अनइ करणु हीयइ हरालउ
गुरकूवइ विणयह लगइ धणुहवेणु दीधउ सरालउ
किसु न हूइ गुरभगति लगइ माटि नउ गुरू किद्धु
अहनिसि गुरू आराधतउ एकलव्यु हूउ सिद्धु ॥
गुरु परिक्खइ गुरु परिक्खइ अन्नदीहंमि
दुरयोधनपमुह सवि रायकूयर वण माहि लेविणु
सारीगु मिल्हि करि तालरूंख सिरि लखु देविणु
तीण परीक्षा गुर तणी पूगउ एकु जु पत्थु
राहावेहु तउ सिखवइ मच्छइ देविणु हत्थु ॥
एक वासरि एक वासरि कूंयर नइ माहि
गुरि सरिसा जलि तरइ द्रोणचलण जलजीवि लिद्धउ
कूयरपरीक्षा तणइ मिसि गुरिहिं कूडपोकारू किद्धउ
धायउ अरजुनु धणुहधरु अवर नधाया केइ
मेल्हाविउ गुरचलणु तसु गुरू किम नवि तूसिइ ॥

ठवणि ॥ ४ ॥

गुरि वीनविउ अवसरि राउ "सविहु वैठा करउ पसाउ
तुम्हि मंडवउ नवउ अखाडउ नव नव भगि पूत्र रमाडउ" ॥ १ ॥

आइसु विदुरह दीधउं राइ दह दिसि जणवइ जोवा धाइं
सोवनथभे मच चडावइ राणो राणि ते सहू य आवइ ॥ २ ॥

पहिलउं आवइ गुरु गगेउ धायरट्ठ धुरि वइसइं राउ
विदुर कृपा गुरु अवर नरिंद मचि चड्या सोहइं जिम चद ॥ ३ ॥

केवि दिखाडइं खाडा सरमु केवि तुरंगम जाणइ मरमु
चक्र छुरी किवि साबल भालइ किवि हथीयार पडता झालई ॥ ४ ॥

पहिलु सरमइ धरमह पूत्रो जेह रहइ नवि कोइ शत्रो
ऊठिउ भीमु गदा फेरंतउ तउ दुर्योधन भिडइ तुरतउ ॥ ५ ॥

मनि मावीत्रह मत्सर रहीउ पाछइ अरजुनु अति गहगहीउ
भीमु दुजोहण जा बे मिलिया ता गुरनदणि पाछा करीआ ॥ ६ ॥

गुरु ऊठाडइ अरजुनु कुमरो करणहिं सरिसउं माडइ वयगे
बे भाथा विहु खवे वहेई करयलि विसमु धणुहु धरेई ॥ ७ ॥

लोहपुरषु छइ चक्रि भमतउ पच वाणि आहणइ तुरतउ
राधावेधु करीउ दिखाडइ तिसउ न कोई तीणि अखाडइ ॥ ८ ॥

तीछे हूँफी ऊठइ करणु 'अरजुनु पामइ मूं करि मरणु'
रोसिं ऊठइ बेउ झूझेवा रणरसु जोइ देवी देवा ॥ ९ ॥

बेउ हूफइ बेउ वाकरवाइ राय तणा मनि रीझ ऊपाइ
धरणि वसक्कइ गाजइ गयणु हारिइ जीतइ जयजयवयणु ॥ १० ॥

हीया धसक्कइं कायर लोक सत तणां मन करइ सशोक
जाणे वीज पडि (अ) अकालि जाणे मुंद्र खुम्या कालिकालि ॥ ११ ॥

क्षणि नान्हा क्षणि मोटा दीसइं माहोमाहि खुसए बेउ रीसइं
वधवि वीटीउ राउ दुजोहणु चिहुपंडवि वीटीउ द्रोणु ॥ १२ ॥

किसु पहूतउ द्वापरि प्रलउ ईह लगइ कइ अम्ह घरि विलउ
अरजुन बोलइ "रे अकुलीन, अरजुन झूझिसि मइ मुं हीन ॥ १३ ॥

अरजुन सरसी भेडि न कीजइ नियकुलमानि गरवु वहीजइ
इम आपणपु घणुं वखाण बोलिन नीयकुल तणुं प्रमाणु ॥ १४ ॥

इम अरोडिउ तपि जा करणु पुरुष पराभवि सारु मरणु
दुरजोधनि तउ पखउ करीजइ "वीराचारि कुलु जाणीजइ" ॥ १५ ॥

एतइ अतिरथि सारथि आवइ करण तणुं कुलु राउ जणावइ
"मइ गगा ऊगमतइ दीस लाधी रतनभरी मंजुस ॥ १६ ॥

कुंडल सरिसउ लाधउ बालो रंकु लहइ जिमरयण झमालो
तिणि दिणि दीठउ सुमिणइ सूरो अम्ह घरि अविउ पुन्नह पूरो ॥ १७ ॥

कानहेठि करु करिउ जुसूउ तउ अम्हि कहीयइ करणु निरुत्तउ"
इसीय वात मन भीतरि जाणी गूभू न कहीउ कुंती राणी ॥ १८ ॥

करणु दुर्जोहणु बेई मित्र पंचह पंडव केरा शत्र
तसु दीधु सइ कूयरं राजो सो सग्रहीइ जिणि हुइ काजो ॥ १९ ॥

द्रोणगुरिं भूमता वारी बेउ बेटा बहुमानि भारी
ईम परीक्षा हुई अखाडइ तीछे अरजुन चडीउ पवाडइ ॥ २० ॥

॥ वस्तु ॥

अन्न वासरि अन्न वासरि राय असथानि
परिवारि सु अछइ ताम दूतु पोलि, पहूतऊ
पडिहारिहि वीनविउ लहीउ मानु चाउरि वइट्ठऊ
पय पणमी इम वीनवइ "द्रुपदनरिंदह धोय
परणउ कोई नरपवरुराहावेहु करीउ ॥

द्रुपदरायह द्रुपदरायह तणी कूयारि
तसु रूपह जामलिहि त्रिहउ भूयणि कइ नारि नत्थीय
पाधारउ कुमरिं सहीय आठ चक्र छइ थंमि थभीय
तीह मति बि पुतली फिरइं स सृष्टि सहारि
तासु नयण वेही करी परिणउ द्रुपदि नारि" ॥

ठवणि ॥ ५ ॥

पडु नरेसरो सइवरि जाइ हथिणाउरपुर सचरुए
राइ दले सरिसा कूयर लेउ तारे सु जिम चांदुलउ ए ॥

वाजीय त्रबक गुहिर नीसाण दिणयरो रेणिहिं छाईउ ए
पहूतउ जाणीउ पंडु नरिंदु द्रुपदु पहूचए सामहो ए ॥

तलीया तोरण वंदरवाल नयरु उलोचिहिं छाईउ ए
मणिमय पूतली सोवनथभ मोतीय चउक पूराविया ए ॥

कंकूय चदणि छडउ दिवारि घरि घरि तोरण ऊभीया ए
नयरि पइसारउ पडु नरिंद किरि अमराउरि अवतरी ए ॥

पोलि पहूतउ पडु तेजि तरणि पयडु
सीसि चमर ववाल अनु कठि कुसुमह माल ॥

अनु कठि कुमुमह माल किरि सु मयणि आपणि आवीइ
कोइ इंदु चदु नरिंदु सइवरि पहुतु इम सभावीयइ ॥

चडीउ चंचलि नयणि निरखइ वयणु वोलइ सउं सही
'पच पडव सहितु पहूतु तउ पंडु नरवरु हुइ सही' ॥

मिलिया सुरवए कोडि तेत्रीस गयणे दुंदुहि द्रहद्रहीय
मेडे बइठला रायकूयार आवए कूयरि द्रूपदीय
सीसि कचुवरि कुसुमह खूपु कानि कनेउर झलहलइ ए
नयण सलूणीय काजलरेह तिलउ कसत्तूरी यम णिघडीय
करयले ककण मणि झमकारु जादर फालीय पहिरण ए
अहर तबोलीय द्रूपसी वाल पाए नेउर रुणझुणइ ए
भाईय वयणिहि रावावेधु नरवर साधइ सवि भला ए
कुणिहि न साधीउ पडु आएमि अरजुनु ऊठइ नरनीउ ए
'अति घणुहु जूनु एहु तूय सामि सबलु देहु'
इम भणी रहिउ भीमु 'सो धनुषु नामइ कीमु'
सो धनुपु नामइ कीमु काटकि धरणि ध्रासकि धडहडी
वभड खड विखड थाइ कि सग्गि सयल वि रडवडी
झलहलीय सायर सत्त मुग्गिरि शृगु शृगि खडखडी
खणु एकु असरणु हूउ तिहूयणु राय सयल वि धरहडी
एतइ हूयउ जयजयकारु सुर पन्नग सवि हरखीया ए
धनु धनु रायह द्रुपदधीय जीण असभम वर वरिया ए
धनु धनु राणीय कुतादेवि जसु कूहिहि ए ऊपना ए
पचम गति रहइ अवतर्या पच पचबाण जिमा जगि हूया ए
पाचइ गाईय सुर सुरलोकि मुर वए सिरु घूणाविया ए
महीयले महिलीय करइ विचारु "कवणु कीउ तपु द्रूपदीय
कोइ न त्रिहू जगि हूईय नारि हिव पछी कोइ न होइसि ए
एक महेलीय पच भतार सतीय सिरोमणि गाई ए ॥

राधावेधु मु अरजुनि साधिउ मनचीतिउ वरु लाडीय लाधउ
जां मेल्हि गलि अरजुन माल दीसइ पाचह, गलि समकाल
राइ, युधिष्ठिरि मनि लाजीजइ तिणि खणि चारणि मुनि बोलीजइ
"निसुणउ लाडीय तपह प्रमाणु पूरविलइ भवि कियउं नियाणुं
भवि पहिलेरइ बभणि हूंती कडुउ तूबु मुणिवर दिंती
नरग सही वलि साहूणि हूई पाचह पुरिस प नियाणु धरेई
एहू न कोईय करउ विचार द्रूपदराणीयपंच भतार"
साहू कही नइ गयणि पहूतउ पडु नराहिवु हूयउ सयतउ
अइहवि दीजइ मगल चार जगि सचराचरि जयजयकार
लाडीय कोट कुसुमह माल लाडइय लोचन अति अणीयाला
लाडीय नयणे काजलरेह सहजिहि लाडण सोवनदेह
कुती मद्रीय माथइ मउड धनु धनु पडव द्रूपदि जोड
पंचइ पडव ब ठा चउरी नरवइ आरातरुयरु मउरी

॥ वस्तु ॥

पंच पडव पच पडव देवि परिणेवि
सउ परिवारिहि सुं दलिहि हस्तिनागपुरि नगरि आवइ
अन्नदिवसि रिषि नारदह नारि कज्जि आदेसु पामई
समयधम्मु जो लघिसिइ तीण पुरषि वनवासि
वार वरिस वसिवु अवसि अहनिसि तीरथवासि ॥
सच्च कज्जिहिं सच्च कज्जिहि अन्न दीहमि
उल्लघिउ गुरवयणु इंदपुत्तु वनवासि चल्लई
गिरि वेयड्ढह तलि गयऊ पणमिउ नामि मल्हारु
निव मणि चूडह राजु दिइ पहिलउ उपकारु
वार वरिसह वार वरिसह चडिउ विमाणि
अट्ठावयपमुह सवि नमीय तित्थ जा घरि पहुच्चई
मणिचूडह मित्तह भयणि राउ एकु परिहरीउ वच्चई
गहीय पभावइ रिउ हणिउ मजिउमारग कूडु
घरि पहूत्तउ वेउ मित्त लेउ हेमगडु मणिचूडु ॥

ठवणि ॥ ६ ॥

एतल ए पडु नरिंदो जूठिलो पाटि प्रतीठिउ ए
बधवि ए विजयु करेवि राय सवे वसि आणीया ए

सोवन ए राशि करेवि बंधव आगलिउ गिणं ए
मित्तह ए रईय मणिचूड राय रहइ सभा रयणम ए
राईहि ए सति जिणद नवउ प्रासादु करावीउ ए
कचण ए मणिमय थम रयणमइ बिब भरावीया ए
तेडीउ ए देवु मुरारि राउ दुरयोधनु आवीउ ए
इछीय ए दीजइ दान बिबप्रतिष्ठा नीपज ए
वरतीय ए देसि अमारि ऊरिण कीधी मेदिनी ए
हसिऊ ए सभा मझारि राउ दुरयोधनु पराभवी ए
माउल ए सरिसउ मत्रु तायह अम आगलि वीनव ए
वारिउ ए विदुरि ताएण वयणु न मानइ कूडीउ ए
आणीय ए सभामिसेण पडव पचइ राइ सउ ए
कूडिहि ए दीजइ मान वयरिहि माडइ जूवटउ ए
राखिउ ए राउ जूठिलु विदुरह वयणु न मानीउ ए
हारीया ए हाथिय थाट भाईय हारीय राजि सउ ए
हारीय ए द्रुपदह धीय ऊदालिब सवि आमरण ए
ताणीय ए केमि धरेवि देवि दुसासणि दूजणिहि ए
आणीय ए सभामझारि दुरीय दुर्योधन इम भण ए
"आविन ए आवि उत्सगि द्रूपदि वइसिन मुझ तण ए"
इम भणी ए दियइ सरापु 'र [–] हुजे तु कुलि सउ ए
कुपीय ए काढवी चीरु अट्ठोत्तार सउ साडीय ए
उठीय ए गुरु गगेउ कुणवि दुरयोधनु ताजिउ ए
तउ भण ए "पडव पच वयणु महारउ पडिवजु ए
बारह ए वरस वणवासु नाठे हीडिवु तेरमई ए
अम्हि किम ए जाणिमु तुहितउ वनवासु जु तेतलु ए
पडव ए नियइ वणवासु सरसीय छट्ठीय द्रूपदीय

॥ वस्तु ॥

हैय दैवह हैय दैवह दुट्ठ परिणामु
पिय पचह पेखता द्रुपदधीय कडिचीरु कड्ढीय
द्रोण विदुर गगेय गुरा न हल्लि कोहग्गि दड्ढीय
अम आममुद्द धरहि घणिय इक्केक्कइ कडिचीरि
हाकीउ रल जिम काढीइउ आथमतई सूरि ॥

ठवणि ॥ ७ ॥

अह देवह वसि तेवि पच ए पडव वणि चलिय
हथिणउरि जाएवि मुकलावइ निय माय धीय ॥ १ ॥
पय पणमीय निय ताय कुंती मद्री पय नमीय
सच्च वयण निरवाहु करिवा काणणि सचरइ ॥ २ ॥
लेई निय हथियार द्रोण पियमहि अणगमीय
कुतादिवि भरतार नयण नीर नीझर झरइ ए ॥ ३ ॥
सच्चवई पिय माय अबा अबाली अबिका
कुती मुद्री जाइ वउलावेवा नदणह ॥ ४ ॥
पभणइ जूठिलु राउ "माइ म अरणइ तुहि करउ
निय घरि पाछा जायउ लोकु सहूयइ राहवउ ॥ ५ ॥
दाणवि कूरि कमीरि पचाली बीहावीयउ
भूझिउ मारीउ वीरू भीमिहि तु दुरयोधनह ॥ ६ ॥
तउ वनि कामुकि जाइ पंचह पडव कुणवि सउ
मत्रह तणइ उपाइ अरजुनु आणइ रसवती य ॥ ७ ॥
पणमीयतायह पाय पाछउ वालीउ मद्रि सउ
विद्या बुद्धि उपाइ आपीय पहुतउ पीत्रीयउ ॥ ८ ॥
पचाली नउ भाउ पच पचाल लेउ गिउ
एतइ केसवु राउ कुती मिलिवा आवीयउ ॥ ९ ॥
बलु बोलीउ बलवधु सुभद्रा लेई साचरए
हिव पुणु हूउ निवधु कुती थु सरसा सात ज ए ॥ १० ॥
एहु तु पुरोचन नामि पुरोहितु दुर्योधनह
"तुम्हि वीनविया सामि राय सुयोधनि पय नमीय ॥ ११ ॥
मइ मूरखि अजाणि अविणउ कीधउ तुम्हा रहइ
मूं मोटी मुहकाणि तुम्ह खमउ अवराहु मुह ॥ १२ ॥
पाधारिसिउ म रानि वारणवति पुरि रहण करउ
ताय तणइ बहुमानि हु अराधिसु तुम्ह पय" ॥ १३ ॥
कूडु करी तिणि विप्रि वारणवति पुरि आणीया ए
किसु न कीजइ शत्रि अवसरि लाधइ परभवह ॥ १४ ॥

विदुरि पवाचिउ लेखु "दुरयोधनु मन वीसिसउ
एसु पुरोहितवेषु कालु तुम्हारउ जाणिजउ ॥ १५ ॥

इह घरि अछइ मत्रु लाख तणउ छइ धवलहरो
माहि पउढाडउ शत्र एकसरा सवि सहरउं ॥ १६ ॥

काली चऊदसि दीहु तुम्हे रूडइ जोइजउ
एउ दुरयोधनु सीहु आइ उ पाइ मारिसिए"॥ १७ ॥

भीमु भणइ "सुणि माय वारउ वयरी वावतउ
कुलह कुलछणु जाइ एकि सुयोधनि संहरीइ"॥ १८ ॥

सगिरिहिं खणीय सुरग विदुरि दिवारीय दूर लगइ
हु ऊगारउ अग ईण ऊपाइ पडवह ॥ १९ ॥

इकि डोकरि तिणि दीसि पाच पूत्र इकि वहूय सउ
कुती नइ आवासि वटेवाहू वीसमिया ॥ २० ॥

राति चालइ राउ मागि सुरगह कुणवि सउ
दियइ पुरोहितु दाउ लाखहरइ विसनरु ठवइ ॥ २१ ॥

साधीउ पच्छेवाणु भीमि पुरोहितु लाखहरे
मेल्हीउ दीधु पीयाणु केडइ आवी पुणु मिलए ॥ २२ ॥

हरखीउ कउरवु राउ देखी दाधा माणसह
जोयउ पुन्नपभाउ पडव जीवी उगरए ॥ २३ ॥

॥ वस्तु ॥

दैवु न गिणई देवु न गिणई पुण्यु नइ पापु
सतापु सुयणह करई पुण्यहीन जिम राय रोलई
दारिद्र दुक्खु केह भरई तृणा कज्जि गिरि सिहरु ढोलई
जोउ मग्गि निसबला पचइ पडव जति
राजु छडाव्या वणि फिरइ धिगु धिगु दूख सहति ॥

ठवणि ॥ ८ ॥

धिगु रि धिगु रि धिग दैवविलासु पचह पडव हुइ वणवासु
उतइ लाखहरु परिजलइ उतइ भीमु जु केडइ मिलीइ ॥ १ ॥

राति खुडत पडता जाइ वयरी ने मइ वेगि पुलाइ
ते जीवता जाणइ किमइ कूडु नवउ तउ माडइ तिमइ ॥ २ ॥

सासू वहूय न चालइ पाउ ऊभउ न रहइ जूठिलु राउ
माडी वोलइ "साभलि भीम केती भुइं वयरी नी सीम ॥ ३ ॥
इकि वयरी ना परिभव सह्या लहूया नदण पाछलि रह्या
हू थाकी अनु थाकी वहू दिणु ऊगिउ तऊ मरिसइ सहू" ॥ ४ ॥
वासइ वाधा वंधव वेउ माडी महिली कंधि करेउ
तरुयर मोडतु चालिउ भीमु दैव तणु वलु दलीइ ईम ॥ ५ ॥
एक वाह साहिउ राउ बीजी साहिउ लहुडउ भाउ
जा महिमडलि ऊगिउ सूरु ता वणि पहुतउ पंडव वीरु ॥ ६ ॥
सहू पराघुं निद्रा करीइ पाणी कारणि वणि वणि फिरइ
भीमु जाम लेउ आवइ नीरु पाछलि जोअइ साहसधीरु ॥ ७ ॥
एक असभम देखइ वाल पहिलुं दीठी अति विकराल
वोलइ राखसि "साभलि सामि हु जि हिडबा कहीउं नामि ॥ ८ ॥
राखस हिडव तणी हू धूय तइ दीठइं मयणातुर हूय
वइठउ ताउ अछइ नीय ठाणि वाइ आवी माणुसहाणि ॥ ९ ॥
मुझ रहिं आइसु दीधुं इसुं 'काई आव्युं छइ माणसुं
काधि करी लेउ वहिली आवि उपवासी मइ पारणु करावि ॥ १० ॥
कर जोडी हु पणमउ पाय मइ तुम्हि परणउ पाडवराय
तुम्ह उपकार करिसु हु घणा दूख दलिसु वणवासह तणा" ॥ ११ ॥
"उभी उभी इसुं म वोलिइं पडव वीजा मणूअ म तोलि
जग उद्धसिवा घर अवतरइ रूठा जगनु जीवीउ हरइ ॥ १२ ॥
ए माडी ए अम्ह घर नारि ए अम्ह वधव सूता च्यारि
ईह तणे तू चलणे लागि भगति करी सनवछितु मागि ॥ १३ ॥
एतइं राखसु रोसि जलतु आवइ फुड फेकार करतु
वेटी वूसट मारइ जाम पीमु झिडेवा ऊठिउ ताम ॥ १४ ॥
"रे राखस मुझ आगति वाल मारिसि तउ तूं पूगउ कालु
रूख ऊपाडी वेई विढइ दह दिसि वाजइ डूंगर रढइ ॥ १५ ॥
चलणनिहाइ जागिउ सहू पणमी वोलइ हिडवा वहू
"माइ माइ ऊठाडउ राउ ए रूठउं अम्हारउ ताउ ॥ १६ ॥

इणि मारीमइ मुहडु मिडतु वीजउ कोई धाउ तुरतु"
इसुं मुणी नइ धायउ पत्थु झूझइ भीम मिलिउ भडमत्थु ॥ १७ ॥
पडिउ भीमु आसामिउ राइ गदा लेउ वलि माम्हउ थाइ
अरजुनु जा झूझेवा जाइ राखसु भीमि रहाविउ ठाइ ॥ १८ ॥

॥ वस्तु ॥

अह हिडवा अह हिडवा सत्थि चल्लेइ
कुंती अनु द्रौपदी अ कंधि करीउ मारगि चलावइ
कुंती जल विणू तूछीइ तहि हिडव जलु लेउ आवइ
एकु दिवसु वण जोयती भोलाटी पचालि
जोई जोई ऊसना पडव वणि विकरालि ॥ १९ ॥

ठवणि ॥ ६ ॥

वाघ सीह गज द्रेठि पडइ सतीय सयरि ते नवि आभिडइ
राति पडति पडव रडइ वलि वलि मूंछी भूमि पडइ ॥ २० ॥
राखसि धाई गाहिउ रानु आणी द्रूपदि लाघू मानु
भीमसेन गलि मेल्ही माल कुणबि मिली परिणावी वाल ॥ २१ ॥
भोजनु आणइ मारगि वहइ करइ भगति सरसी दुक्ख सहइ
नवउ अवासु करी नइ रमइ पचह पडव सरसी भमइ ॥ २२ ॥
एक चक्रपुरि पडव गया देवशर्मवभण घरि रह्या
हीडइ चालइ वभणवेसि जिम नोलखीइ तीणं देसि ॥ २३ ॥
राइ वोलावी वहू हिडव "अम्हि वसीमइ वेस विडवि
तुम्हि सिधावउ तायह राजि समरी आवे अम्हह काजि ॥ २४ ॥
करि रखवालु थापणि तणु अजीउ फिरेवु अम्हि वनि घणु"
नमी हिडवा पाछी जाइ वापराजि धणियाणी थाइ ॥ २५ ॥
अन्न दिवसि वभणु सकुटव रल जिम विलवइ पाडइ वुव
पूछइ भीमु करी एकतु "आविउ दूखु किमु अचितु ॥ २६ ॥
"वडुया साभलि" वाभणु भणइ "ए विवहारु नयरि अम्ह तणी
विद्यासिद्धी राखसु हूउ वक नामि छइ जम नउ दूउ ॥ २७ ॥
विद्या जोवा तीण पलानि पहिलु सिला रची आकासि
राजा भीडी अवग्रहु लीउ "पइदिणि नरू एकेकउ दीउ ॥ २८ ॥

चीठी काढइ नितू कूंयारि आवइ वारउ जण विवहारि
आजु अम्हारइ आविउ दूउ आज न छूटउ हु अणमूउ ॥ २९ ॥
केवलि वयणु जु कूडउ थाइ जउ नवि आव्या पडवराय"
पूछीउ भीमि कथा प्रवधु वणि जाई वग राखसु रूद्धु ॥ ३० ॥

॥ वस्तु ॥

वगु विणासी वगु विणासी भीमु आवेइ
वद्धावइ जणु सयलु "जीवदानु तइ देव दिद्धउ
केवलिवयणु जु सच्चु किउ त्रिहु भुयणि जसवाउ लिद्धउ"
पचइ पडवडा वसइ तीछे वभणवेसि
वात गइ जण जण मिली दुरयोधन नइ देसि ॥ ३१ ॥

राति माहे राति माहे हुई प्रच्छन्न
तउ जाइ द्वैतवणि वसइ वासि उडवा करी नइ
पुरुष प्रियवदु पाठविउ विदुरि वात वक नी सुणी नइ
पय पणमी मो वीनवइ दुरयोधनु नु मत्रु
"तुम्ह पासि ए आविसिइ करसु दुरयोधन शत्र ॥ ३२ ॥

ईम निसुणीउ ईम निसुणीउ भणइ पचालि
"वणि रुलता अम्ह रहइ अजीय शत्र सिउ सिउ करेसिइ
राजिसिद्धि अम्हह तणी लइय जेण हिव सिउं हरेसिइ
पंचाली मनि परिभवी वोलइ मेल्ही लाज
पाचइजण कंइ हुसिइ तुम्हि किसाइ काज ॥ ३३ ॥

माइ हूई माइ हूई काइ नवि वंझि
अह जाया नवि मूआ तुम्हे राजु काई दैवि दिद्धउ
पुत्रवत नारी अछइ तीह माहि तुम्हि अजसु लिद्धउ
केसि धरीनइ ताणीउं दु सासणि दुरचारि
वालप्पणि हु नवि मूई काइं तुम्ह नारि" ॥ ३४ ॥

रोसु नामीउ रोसु नामीउ भीमि अनु पत्थि
राउ भणइ "ता खमउ मुझ वयणु जा अवधि पुज्जई
पंचाली रोमवर्मि अवसि अंति अम्ह काजु सिज्झई
सच्च वयणु मनि परिहरउ साचउ जिणधर्ममूलु
सत्यवयणि रूडु पामीइ भवसायर पल्कूलु" ॥ ३५ ॥

दूअवयणि दूअवयणि राउ जूठिल्लु
गिरि गधमायण गिया इदकीलु तसु सिहरु दिट्ठऊ
मुकलावी अरजुनु चडई नमीउ तित्थु तसु सिहरि वइट्ठऊ
विद्या सवि सिद्धिहिं गई जा पेखइ वणराइ
आहेडी आरोडीउ ता एकु सूअरु धाइ ॥ ३६ ॥

ठवणि ॥ १० ॥

सूयर देखी मेल्हिउ वाणु अरजुन सिउ कुणु करइ सवाणु
तिणि खिणि मेल्हिउ वणचरि वाणु ऊडिउ गयणि हूउ अप्रमाणु ॥ ३७ ॥
अरजुन वनचर लागउ वादु करउं भूझु ऊतारउ नादु
एकमर कारणि भूझइ वेउ करइ परीक्षा ईसर देउ ॥ ३८ ॥
खूटा अर्जुन सवि हथीयार मालभूझ वेउ करइं अपार
साहिउ अर्जुनि वनचरु पागि प्रकटु हुई बोलइ "वरु मागि"॥ ३९ ॥
अर्जुनु बोलइ "वरु भडारि पाछइ आवइ लउ उपगारि"
खेचरु बोलइ साभलि "सामि गिरि वेयड्ढु मुणीइ नामि ॥ ४० ॥
इद्रु अछइ रहतू पुरराउ विज्जमालि वे लहुडउ भाउ
चपलु भणी नइ काढिउ राइ रोसि चडिउ रानसपुरि जाइ ॥ ४१ ॥
इंद्रवयणु इकु तुम्हि साभलउ करीउ पसाउ नइ दाणव दल"
हरखिउ अरजुनु जा रथि चडिउ दाणवघरि वुवारवु पडिउ ॥ ४२ ॥
असुर विणासी किउ उपगारु इद्रि लोकि हूउ जयजयकारु
इद्र तणुं ए कीधु काजु असुर विणासी लीधउं राजु ॥ ४३ ॥
कवच मउड अनइ हथीयार इद्रि आप्यां तिहूयणि सार
धनुषवेदु चित्रगदि दीउ पुत्रु भणी इंद्रि परठीउ ॥ ४४ ॥
पाछउ आवइ चडीउ विमाणि माडी बंधव पणमइ राणि
एतइ कमलु अगासह पडीउ वइठी द्रूपदि करयलि चडिउं ॥ ४५ ॥
सवा कमल नी इच्छा करइ भीमसेनु तउ वनि वनि फिरइ
असउण देखी बोलइ राउ भाम पासि वछेदिइं जाउ ॥ ४६ ॥
माग न जाणइ रीजिउ सहू समरी राइ हिडंबा वहू
कुणवु ऊपाडी मेलिउ भीम जाणे दूखह आवी सीम ॥ ४७ ॥

मुखु देखी सवि घडुया तणु पंडव कूंयरु लडावइ घणुं
जाम हिडबा पाछी गई बात अपूरव ता इकहुई ॥ ४८ ॥

द्रुपदि वयणि सरोवर माहि पइठउ भीमु भलेरइ ठाइ
भीमु न दीसइ वलतउ किमइ तउ भंपावइ अरजुन तिमइ ॥ ४९ ॥

केडइ नकुलु अनइ सहदेउ पाणी वूडा तेई बेउ
माइ मोकलावी पइठउ राउ सविहु हूउ एकु जु ठाउ ॥ ५० ॥

काइ रोउ न लहइ रानि द्रूपदि कूंती रही बे ध्यानि
मनह माहि समरइ नवकारु 'एहु मत्रु अम्ह करिसि सार' ॥ ५१ ॥

बीजा दिवसह दिणयर उदइ ध्यान प्रभावि आव्या सइ
अछइ सोवन्नीकाबज हाथि एकु पुरुषु आविउ छइ साथि ॥ ५२ ॥

माइ नमी मनि हरिखु धरिउ पुरुष पासि कहावइ चरीउ
एक मुनि पामइ केवलज्ञानु गयणि पहूचइ इद्र विमानु ॥ ५३ ॥

तुम्ह ऊपरि खलहिउ जाम जाणी सुरवइ बोलउं ताम
हु पाठविउ वेगि पडिहारु जईअ पयालिकीउ उपगारु ॥ ५४ ॥

सतीय बेउ छइ कासगि रही इंद्रह आइसु तु अम्ह कही
मेल्हउ पडव वडइ वछेदि विणु हथियारह बाधा भेदि ॥ ५५ ॥

॥ वस्तु ॥

नागपासह बध नागपासह बध छोडिवि
इद्राइसि पडवह नागराइ निजराजु दिढउ
हारु समोपीउ नरवरह सतीय रेसि अनु कमलु लिद्धऊ
अरजुन सगति भूझता सपचूड सानिद्ध
मागीउ आवी तुम्ह पय पचइ विद्या सिद्ध" ॥ ५६ ॥

वरसि छडइ वरसि छडइ द्वैतवणि जाइ
दुज्जोहण घर घरणि सामि सिक्ख रडतीय मग्गइ
धम्मपुत्त वयणेण पुण इदपुत्तु तिणि मग्गि लग्गइ
दुरयोधन चित्रगदह मेल्हावी उहि पत्थि
विज्जाहररायहं नमइ दुरयोधनु लेउ सत्थि ॥ ५७ ॥

ठवणि ॥ ११ ॥

ताड ऊपाडिउ घालिउ पाइ पूछिउ कुसलु युधिष्टिरि राइ
भणइ दुरयोधनु "अतिअ सुखीया तुम्ह पाय जउ मइ पणमीया ॥ ५८ ॥

घर ऊपरि दुरयोधनु चलइ एतइं जयद्रथ पाछउ वलइ
निउन्नीउ कूंती रहिउ सोइ अरजुनि आणी मन्न रसोइ ॥ ५९ ॥
लोचन वची कूड करेउ चालिउ पापी द्रूपदि लेउ
अर्जुनु भीमु भिडया भड वेउ कटकु विणासिउ द्रूपदि लेउ ॥ ६० ॥
पांचे पाटे भद्रिउ ( ) भीमि भिडी ऊपाडी रीस
नवि मारिउ छइ माडी वयणि जिम नवि दीसइ राडी भयणि ॥ ६१ ॥
एतइ नारदु रिषि आवेऊ दुर्योधन सुं मत्रु करेउ
नगर माहि वज्जाविउ वडहू बोलिउ दूजणु इम पडवडहु ॥ ६२ ॥
"पचह पडव करइ विणासु तेह तणी हु पुरुं आस"
पूत्रु पुरोहित नउ इम भणइ "कृत्या नउ वरु छइ अम्ह तणइ ॥ ६३ ॥
कृत्या पासि करावु कामु वयरी नुं हु फेडउ ठामु"
कृत्या आवी धाई 'सकल कइ मारू कइ करूं विकल' ॥ ६४ ॥
नारदु पहुतउ सिख्या देवि पंडव वइठा घ्यानु घरेवि
एक पाइ दिणयर द्रेंठि हीयडइ मंत्रु पंच परमेठि ॥ ६५ ॥
दिवस सात जा इण परि जाइ ता अन्चभू को रणवाइं
एतइ आविउ कटकु अपारु पडव घाया लेई हथीयार ॥ ६६ ॥
घोडइ घाली द्रूपदि देवि साटे मारइं कटकु मिलेवि
अरजुनि जामुं दलु निरदलु राय तणुं तां सूकउ गलु ॥ ६७ ॥
कृत्रिम सरवरि पाणी पीइं पांचइ पुहवी तलि मूंछीयइ
सरवर पालि द्रूपदि मिली एकि पुलिदइ आणी वली ॥ ६८ ॥
कृत्या राखसि तणीय जि सही भीलि वाली ऊभी रही
मणि माला नुं पाया नीरू पाचइ हूया प्रकटसरीर ॥ ६९ ॥

॥ वस्तु ॥

पंच पंडव पच पडव चित्ति चितति
कुणु नरवरू आवीऊ कुणि तलावि विसनीरू निम्मिउ
कुणि द्रूपदि अपहरीय कुणि पुलिदि, इम चित्ति विम्हिउ
अमरु एकु पयडउ हुउ बोलइ "सांभलि णाह
ए माया सवि मइं करी कृत्या राखेवाह" ॥ ७० ॥

एतइं भोजनवेला हुई द्रूपदि देवि करइ रसवई
मासखमणपारणइ मुणिंद वेला पहुतउ वारि नरिंद ॥ ७१ ॥

पचइ पंडव पय पणमति अतिथिदानु ते मुनिवर दित
वाजी दुंदुहि अनु दुडदुडी अबर हूती वाचा पडी ॥ ७२ ॥

मत्स्यदेसि जाईं नइ रमउ ए तेरमउ वरसु नीगमउ
ग्या वइराटह राय असथानि वेस विडव्या नीय अभिमानि ॥ ७३ ॥

कक भट्टू वल्लवु सूआरू अरजुनु हुउ कीवाचारू
चउथउ नकुलु असधउ थाइ सहदे वारइ नरवइ गाइ ॥ ७४ ॥

प्रथम पवाडइ कीचक मरइ वीजइ दक्षिणगोग्रहु करइ
त्रीजउ उत्तरगोग्रहु हूउ पंडवि वरसु इस परि गमिउ ॥ ७५ ॥

अभिवनु उत्तरकूयरि वरिउ आवी कृष्णि वीवाहु सु करिउ
पहुतउ सहूइ कन्हडपुरि च्यारि कन्न चिहु पडव वरी ॥ ७६ ॥

॥ वस्तु ॥

दूयभावि दूयभावि गयउ गोवालु
"दुजोहण वयणु सुणि एक वारमह भणिउ किज्जई
निय अवधिं आवीया पडवाह वहु मानु दिज्जई
इंदपत्थु तिलपत्थु पुरु वारुणु किसी च्यारि
हस्तिनागपुरु पाचमुं आपीउ मत्सरु वारि" ॥ ७७ ॥

भणइ कुरवु भणइ कुरवु "देव गोविंद
मह महीयलि वणि फिरिया एहु मनु पडव न मानइ
भुइ , लद्धी भूयबलि एक चास हिव ए न पामइ
इवक महिलीपच्च जण तीहं मिलिउ तु पविग्व
ए उअहाणउ सच्चु किउ 'कूडउ कूडा मक्खि' ॥ ७८ ॥

कन्हु बोलइ कन्हु बोलइ "भीमवलु जोइ
विगखप्पर कीचका वकु हिडुबु कमीरु मारिउ
लहु बवधि अर्जुनि दुन्नि वार तुह जीउ ऊगारिउ
विदुरि कृपागुरि द्रोणि मइ जउ न मिलइ ए राय
तउ जाणु नियकुल नुंहिव कउरव नु घरु जाइ" ॥ ७९ ॥

पडु पुच्छीउ पडु पुच्छीउ विदुरि घरि कन्हु
रीसारुणु चल्लीयउ मग्गि मिलीउ सहूइ नावइ
"दुरयोधनु दुट्ठमणु किम इव देव अम्ह सलि न आवइ
हिव एकु अम्ह मानु दियउ विहु पखउ तु छडि
कउरववस विणासिवा काई कूडु म माडि" ॥ ८० ॥

मानु दिन्हउ मानु दिन्हउं कन्ह गगेय
एकतु करि अखीउ कन्न गुझु कुंती पयासीउ
"ईह सत्थि काइ तु मिलिउ जोइ जोड तु मनि विमासीउ"
करणु भणइ "सच्चु कहउ पुणू छह एकु वि नाणू
दुरयोधन रहिं आपणा मइ कल्पा छइ प्राण"॥ ८१ ॥

भणइ कन्हडु भणडु कन्हडु "कन्न जाणेजि
नवि मानिउ तुम्हि हु एह वात अति हुई विरूई
अम मुझ घरि अविया पडुपुत्र इह वात गरूई
दुर्योधनि हु पंडवह छट्ठज कीधउ तोइ
रथु खेडिसु अरजुन तणउ ज भावइ त होउ" ॥ ८२ ॥

ठवणि ॥ १३ ॥

व्रतु लेउ विदुरु गयउ वन माहि कन्ह वली द्वारावती जाइ
विहु पखि चालइ दल सामही विहु परि आवइ भड गहगही ॥ ८३ ॥

जरासिंध नउ आविउ दूउ कालकुमरु जई लग्गइ मूउ
वणिजारा नी वात साभली जरासिंधु आवइ तुम्ह भणी ॥ ८४ ॥

उत्सव माहे उत्सवु एहु सहिहु वयरी आव्यो छेहु
धर्मराय ना पणमीय पाय एतइ शल्यु तु परि दल जाइ ॥ ८५ ॥

'करण रहइ दिउ गुमाजणी' व इसी वात तिणि जातइ भणी
पाचि पचाले लिउ मनाहु आविउ धट्ठउ कूंगरु अवाहु ॥ ८६ ॥

इंदनडु अनु चंदापीडु चित्रगदु अनइ मणिचूडु
आविउ उत्तरू अनु वइराह मिलिउ वाग पडव नउ धाहु ॥ ८७ ॥

धृष्टद्युमन् सेनानी कीउ बीजउ कन्हडदल मामहउ
पवित्र भूमि गरनाति नइ श्रोत्रि दलु आव्ठउ तिणि कुम्खेत्रि ॥ ८८ ॥

कऊरव नइ दलि गुरू गगेऊ कृपु दुरयोधनु शल्यु मिलेऊ
शकुनि दुसासणु जयदथु पुत्रु गरूऊ भूरिश्रवा भगदत्तु ॥ ८९ ॥
मिलीऊ जरासिंधु जादववइरि सह लगऊ अस हूइ सइरि
दुरयोधनु अति मत्सरि चडीऊ जाई जरासिंध पाए पडीऊ ॥ ९० ॥
"मुझ रहइ पहिलऊ दिउ अगेवाणु पंडव कन्ह दलऊ जिम माणु
इहा सेनानी गगेउ प्रह विहसी जुडिला दल वेउ ॥ ९१ ॥

दल मिलीया कलगलीय सुहड गयवर गलगलीया
घर ध्रसकीय सलवलीय सेस सगिरिवर टलटलीया।
रणवणीया सवि सख तूर अबरु आकपीउ
हय गयवर खुरि खणीय रेणू ऊडीउ जगुझपीउ।
पडइ बध चलवलइ चिंध सींगिणि गुण साधइ
गइ वरि गइ वरू तुरगि तुरगु राऊत रण रू घइं।
भिडइ सहड रडवडइ सीस घड नड जिम नच्चइ
हसइं घुसइ ऊससइ वीर मेगल जिम मच्चइ।
गयघडगुड गडमडत धीर धयवड घर पाडइ
हसममता सामत सरसु सरसेलि दिखाडइं।
सऊ सऊ रायह दिवसि दिवसि गगेऊ विणासइ
तऊ आठमइ दिवसि कन्हु मन माहि विमासइ।
मेल्हीऊ शल्लिहि सकति कूंअरु ऊतरु रणू पाडीऊ
ताम सिखंडीय तणीय बुद्धि तऊ कान्हि दिखाडीऊ।
अरजुनु पूठि सिखडीयाह वइसी सर मकइ
पडीऊ पीयामहु समर माहि किम अरजुनु चूकइ।
त्रिगवी सरू रहावीयऊ सरि गंगा आणी
कऊतिगु दाखीऊ कऊरवाह पीऊ पायु पाणी।
इग्यारमइ दिवसि दोणि ऊठवणी कीजइ
आजु अपडवु कइ अदोणू इम मनि चीतीजइ।
काहल कलयल ढक्क बूक त्रवक नीसाणा
तऊ मेल्हीऊ भगदत्ति राइ गजु करीऊ सढाणा।

चूरइ रहवइ नरकरोडि दतूसलि डारइ
अरजुन पाखइ पडकटकु हणतु कुणु वारइ।
दाणव दलि जिम दडवडतु दती देखी नइ
घायऊ अरजुनु धसमसतू वयरी मूंकी नइ।
दिणि आथमतइ हणिऊ हाथि हरि पडव हरखीया
दिणि तेरमइ चक्र व्यूहु गऊ कऊरवि माडीय।
अर्जुनु गिऊ वनि भूभिवा तिणि अभिवनु पइसइ
मारीऊ जयदथि करीऊ भूभु तऊ अरजुनु रूसइ।
करीऊ प्रतिज्ञा चडीऊ भूमि जयदथु रणि पाडइ
भूरिश्रवा नऊ तीण समइ सरि बाहु विडारइ।
सत्यकु छेदिऊ वलिहिं सीसू तसु दिणि चऊदमइ
रीतिहिं भूभइ विसम भूभि गुरू पडइ कीमइ।
कूडऊं वोलइ धरमपूतू हथीयार छंडावइ
छेदिउ मस्तकु धृष्टद्युमनि क्रमु सिउ न करावइ।
बार पहर तऊ चडीऊ रोसि गुरनदणु भूझइ
रणि पाडिऊ भगदत्तु राऊ कऊरव दल मभइ।
करि करवालु जु करीऊ करणू समहरि रणू माडइ
फारक पायक तूरग नाग नवि कोई छडइ।
धूलि मिलीय भलमलीय सयल दिसि दिणयरू छाईऊ
गयणे दुदुहि दमद्रमीय सूरवरिंजसु गाईऊ।
पाडइ चिंध कवध बध धरमडलि रोलइ
बाणि विनाणि किवणि केवि अरीयण धंधोलइ।
कूडु करीऊ गोविंदि देवि रथु धरणिहिं खूतऊ
मारीऊ अरजुनि करणू कूडि रणि अणभूभतऊ।
शल्यु शकुनि वेऊ हणीय वेगि नकूलि सहदेवि
सरवरमाहि कढावीयऊं दुरयोधनु दैवि।
राइ सनाहु समोपीयऊ भीमिहिं सू भिडेऊ
गदापहारि हणीय जाघ मनि सालू सू फेडिऊ।

रूठऊ राम मनाविवा जा पंडव जाइ
कृपु कृतवर्म आसवामता त्रिन्हइ घाइ।
पाछपीलि पापी करइ कूडु दीधऊ रतिवऊ
निहणीय पच पंचाल बाल अनु राखसि जाऊ।
सीसू शिखडी तणऊ तामु छेदीऊ छलु साधीऊ
पाप पराभव नइ प्रवेसि गतिमागु विराधीऊ।
कन्हडि वोधीऊ सूयण लोकु सहु सोगु निवारीउ
पहुतु सहूइनीय नयरिं परीयणि परिवारीय।

॥ वस्तु ॥

दाधु दिन्हऊ दाधु दिन्हऊ कन्ह ऊवएसि
तहिं अरजुणि मिल्हिऊ आगिणेय सरू अगि ऊट्ठीय
बहु दुक्खु मणि चितवीय पंडसेन घण नयणि वुट्ठीय
कन्हडु सहूउ परीठवीउ कूणविं निवारी रोसु
हथिणाउरपुरि आवीया अति आणदिऊ लोकू।

ठवणि ॥ १४ ॥

थापीऊ पडव राजि कन्हडु ए उत्सवु अति करए
कूणविहिं देविं गंधारिं धयरट्ठ ए राऊ मनावीऊ ए।
हरीयला दूपदि देवि इक्कु दिणू ए नारद परिभवि ए
बेहु रहइ कन्हु जाएवि सुद्रह ए माहि वाटडी ए।
आणीय धानुकी पडि देवीय ए अरिं वसि घालीया ए
पहुतला पासि गंगेय जय तणी ए साभलइं वातडी ए।
ऊपनुं केवलनाणु सामीय ए नेनि जिणेसरह ए
साभली सामि वखाणु विरता ए सावयव्रतु धरइं ए।
वरतीय देसि अमारिं नासिक ए जाईऊ जिणू नमइं ए
दिणि दिणि दीजइ दाव पूजीय ए जिण भूयण ऊपनऊ ए।
ऊपनऊ भवह वइरागु वेटऊ ए पीरीयखि पाटि प्रतीठिऊ ए
सामीय गणहर पासि पाचह ए हरिखिहि व्रतू लिइं ए।
साभली वलिभदि वात नियभव्र ए पूठए पूछइ प्रभु कन्ह ए
वोलइ गुरू धर्मघोपु "पुवभविं ए पाच ए कूणवीय ए।

वसइ ति अचलह गामि वंधव ए पाच ए भाविया ए
सूरईऊ सतुन देवु सुमतिऊ ए सुभद्रु सूचामु ए।
सुगुरू यशोधर पासि हरिखिहि ए पाच ए व्रतु धरए
कणगावलि तपु एकु वीजऊ ए करइ रयणावली ए।
मुकतावलि तपु सारू चऊथऊ ए सिहनिकीलिऊ ए
पाचमु आविलवर्धमानु तपु तपी ए अणूत्तरि सवि गिया ए
चवीयला तुम्हि हूआ पचइ ए भवि ए सिवपुरि पामिसऊ ए
साभली नेमिनिरवाणु चारण ए सवणह सूणि वयणि
सेत्रुजि तीथि चडेवि पाचह ए पाडव सिद्धि गिया ए
पडव तणऊ चरीतू जो पढए जो गुणइ मभलए
पाप तणऊ विण तसासु रहइ ए हेला होइसि ए
नीपनऊ नयरि नादऊदि वच्छरी ए चऊददहोत्तर ए
तदुलवेयालीयसूत्र माझिला ए भव अम्हि ऊवर्या ए
पुनिमपखमुणिद सालिभद ए सूरिहि नीमीऊ ए
देवचन्द्रऊपरोधि पडव ए राक्षु रसाऊलु ए॥

॥ इति पचपडवचरित्ररास । समाप्त ॥ छ ॥ १ ॥

श्री गौतम स्वामी रास

रचयिता

कवि विनय प्रभ

रचना-काल

वि. सं. १४१२ (१३५५ ई०)

श्री गौतम स्वामी रास

ढाल पहेली

वीर जिणेसर चरण कमल कमला कयवासो,
पणभवि पभणिसु सामि साल गोयम गुरु रासो;
मणु तणु वयण एकत करवि निसुणो भो भविया,
जिम निवसे तुम देहगेह गुणगुण गह गहिया ।। १ ।।

जंबुदीव सिरिभरहखित्त खोणीतल मडण,
मगधदेस सेणीय नरेस रीउदल बल खडण,
धणवर गुब्बर नाम ग्राम नहि गुणगण सज्जा,
विप्प वसे वसुमूइ तथ्थ तसु पुहवी भज्जा ।। २ ।।

ताण पुत्त सिरिइन्दभूइ भूवलय पसिद्धो,
चउदह विज्जा विविह रुव नारि रस विद्धो (लुद्धो),
विनय विवेक विचार सार गुणगणह मनोहर,
सातहाथ सुप्रमाण देह रूपे रभावर ।। ३ ।।

नयण वयण कर चरण जिणवि पकज जल पाडिअ,
तेजे तारा चद सूर आकाशे भमाडिअ,
रुवे मयण अनग करवि मेल्हिओ निरधाडिअ,
धीरमे मेरु गभीर सिधु चगिम चयचाडिय ।। ४ ।।

पेखवि निरुवम रुव जास जण जपे किंचिअ,
एकाकी कलिभीने इथ्थ गुण मेहल्या सचिय,
अहवा निश्चे पुव्वजम्मे जिणवर इणे अंचिय,
रंभा पउमा गोरि गग रति हा विधि वचिअ ।। ५ ।।

नहि बुध नहि गुरु कवि न कोई जसु आगल रहिओ,
पचसया गुणपात्र छात्र हीडे परिवरिओ;

करे निरंतर यज्ञकर्म मिथ्यामति मोहिअ,
इणे छलि होसे चरणनाद दसणइ विसोहिअ ॥ ६ ॥

॥ वस्तु ॥

जबुदीवह जबुदीवह भरहवासमि,
भूमितल मंडण मगधदेस, सेणियन-रेसर,
वर गुव्वर गाम तिहा विप्प, वसे वसुभूय सुदर,
तसु भज्जा पुहवी, सयल गुणगण रुव निहाण,
ताण पुत्त विज्जानिलो, गोयम अतिहि सुजाण ॥ ७ ॥

भाषा (ढाल बीजी)

चरण जिणेसर केवल नाणी, चउविह सघ पइट्ठा जाणी,
पावासुर सामी सपत्तो, चउविह देब निकायहि जत्तो ॥ ८ ॥
देव समवसरण तिहाँ कीजे, जिण दीठे मिथ्या मनि खीजे,
त्रिभुवन गुरु सिंघासणे बेठा, तसखिण मोह दिगंते पइट्ठा ॥ ९ ॥
क्रोध मान मायाँ मदपूरा, जाओ नाठा जिम दिने चौरा,
देवदुदुभि आकाशे वाजे, धर्मनिरेसर आव्या गाजे ॥ १० ॥
कुसुम वृष्टि विरचे तिहा देवा, चउसठ इद्रज मागे सेवा,
चामर छत्र शिरोवरि सोहे, रुपे जिणवर जगसमोहे (सहु मोहे) ॥ ११ ॥
उपसम रसभर भरि वरसता, योजनवाणि बखार करंता,
जाणिअ वर्धमान जिन पाया, सुरनर किनर आवे राया ॥ १२ ॥
काति समूहे झलझलकंता, गयण विमाण रणरणकता,
पेखवि इंद्र भूई मन चिंते, सुर जावे अम्ह यज्ञ होवते ॥ १३ ॥
तीर तरंडक जिमते वहता, समवसरण पहुता गहगहता,
तो अभिमाने गोयम जपे, तिणे अवसरे कोपे तणु कंपे ॥ १४ ॥
मूढा लोक अजाण्यो बोले, सुर जाणता इम काइ डोले,
मू आगल को जाण भणीजे, मेरु अवर किम ओपम दीजे ॥ १५ ॥

॥ वस्तु ॥

वीर जिणवर वीर जिणवर नाण संपन्न,
पावापुरि सुरमहिअ पत्तनाह ससार तारण,

तिहिं देवे निम्मविअ समोसरण बहु सुखकारण,
जिणवर जग उज्जोअकर तेजे करी दिणकार,
सिंहासणे सामी ठव्यो, हुओ सुजय जयकार ॥ १६ ॥

भाषा (ढाल त्रीजी)

तव चडिओ घणमाण गाजे, इंदभूइ भूदेव तो,
हुंकारो करि संचरिअ, कवणसु जिणवर देव तो ॥ १७ ॥

योजन भूमि समोसरण, पेखे प्रथमा रंभ तो,
दहदिसि देखे विविध वधु, आवती सुर रंभ तो ॥ १८ ॥

मणिम तोरण दंड धज, कोसीसे नव घाट तो,
वयर विवर्जित जंतुगण, प्रातिहारज आठ तो ॥ १६ ॥

सुरनर किंनर असुर वर, इंद्र इंद्राणी राय तो,
चित्त चमक्किय चिंतवे अे, सेवता प्रभु पाय तो ॥ २० ॥

सहस किरण सम वीर जिण, पेखवे रुप विशाल तो;
अेह असंभम (व) संभवेरे, सा ए इंद्रजाल तो ॥ २१ ॥

तव वोलावे त्रिजग गुरु, इंदभूई नामेण तो;
श्रीमुखे संसय सामि सवे, फेडे वेद पएण तो ॥ २२ ॥

मान मेल्ही मद ठेली करी, भक्तिए नामे शीस तो,
पंच सयाशु व्रत लीओ ए, गोयम पहेलो सीस तो ॥ २३ ॥

वंधव संजम सुणवि करी, अगनिभूइ आवेय तो,
नाम लेइ अभ्यास करे, ते पण प्रतिवोधेय तो ॥ २४ ॥

इणे अनुक्रमे गणहर रयण, थाप्या वीरे अग्यार तो,
तव उपदेसे भुवन गुरु, संयम शुं व्रत वारतो ॥ २५ ॥

विहु उपवासे पारणु ए, आपणये विहरत तो,
गोयम संयम जग सयल जय जयकार करत तो ॥ २६ ॥

॥ वस्तु ॥

इंदभूइअ, इंदभूइअ, चडिअ बहु माने,
हुंकारो करि कंपतो, समोसरणे पहोतो तुरंत,
अह संसा सामि सवे, चरमनाह फेडे फुरंत,

बोधि बीज सजाय मने, गोयम भवह विरत्त,
दिख्ख लइ सिख्खा सहिअ, गणहर पय संपत्त ॥ २७ ॥

भाषा (ढाल चोथा)

आज हुओ सुविहाण, आज पचेलिमा पुण्य भरो;
दीठा गोयम सामि, जो निअ नयणे अभिय सरो ॥ २८ ॥

सिरि गोयम गणधार, पंचसया मुनि परिवरिय,
भूमिय करय विहार, भवियण जन पडि बोह करे,
समवसरण मझारि, जे जे ससय उपजेए ते से पर उपकार,
कारणे पुछे मुनि पवरो ॥ २९ ॥

जिहाँ जिहाँ दीजे दीख, तिहाँ तिहाँ केवल उपजे ए,
आप वन्हे अणहुत, गोयम दीजे दान इम ॥ ३० ॥

गुरु उपरि गुरु भत्ति, सामी गायल उपनीय,
एणि छल केवल नाण, रागज राखे रग भरे ॥ ३१ ॥

जो अष्टापद सेल, वंदे चडि चउवीस जिण,
आनमल वधि वसेण, चरम सरीरी सोय मुनि ॥ ३२ ॥

इय देसण निसुणेवि, गोयम गणहर सचलिय,
तापस पन्नरसएण तो, मुनि दीठो आवतो ए ॥ ३३ ॥

तपसोसिय नियअंग, अम्ह सगति नवि उपजे ए,
किम चडसे दृढ काय, गज जिम दीसे गाजतो ए ॥ ३४ ॥

गिरए एणे अभिमान, तापस जा मने चिंतवे ए,
तो मुनि चडिओ वेग, आलंबवि दिनकर किरण ॥ ३५ ॥

कचण मणि निप्पन्न, दड कलस धज वड सहिअ,
पेखवि परमानद, जिणहर भरतेसर विहिअ ॥ ३६ ॥

निय निय काय प्रमाण, चउदिसि सठिअ जिणह बिंब,
पणमवि मन उरहास, गोयम गणहर तिहाँ वसिअ ॥ ३७ ॥

वइर सामिनो जीव, तिर्यक जृंभक देव तिहा,
प्रतिबोधे पुडरीक, कडरीक अध्ययन भणी ॥ ३८ ॥

वलता गोयम सामि, सवि तापस प्रतिबोध करे,
लेइ आपणे साथ चाले, जिम जुथाधिपति ॥ ३९ ॥

खीर खाड घृत आण, अमिअवूठ अगुठ ठवि,
गोयम एकण पात्र, करावे पारणो सवि ॥ ४० ॥

पचसया शुभ भावि, उज्जल भरिओ खीरमसि ;
साचा गुरु सयोगे, कवल ते केवल रुप हुआ ॥ ४१ ॥

पचसया जिणनाह, समवसरणे प्राकारत्रय,
पेखवि केवल नाण, उपन्नू उज्जोय करे ॥ ४२ ॥

जाणे जिणवि पीयूष, गाजती घण मेघ जिम,
जिणवाणी निसुणेव, नाणी हुआ पाचसये ॥ ४३ ॥

॥ वस्तु ॥

इणे अनुक्रमे, इणे अनुक्रमेनाण सपन्न, पन्नरहसयपरिवरिय ;
हरिअ दुरिअ, जिणनाह वदइ ;
जाणेवि जगगुरु वयण, तीहनाण अप्पाण निंदइ,
रमच जिणेसर तव भणे, गोयम करिस भ खेउ ;
छेहि जइ आपणे सही, होस्युं तुल्ला वेउ ॥ ४४ ॥

भाषा (ढाल पांचमी)

मामीओअे वीर जिणद, पुनिमचद जिम उल्लसिय ;
विहरि ओए भरहवासंमि, वरस वहोत्तर संवसीय,
ठवतो ए कणय पउमेसु, पायकमलसंघहि सहिय,
आविओए नयणाणद, नयर पावापुरि सुरमहिय ॥ ४५ ॥

पेपीओए गोयमसामि, देवसमा प्रतिवोघ कए ;
आपणो ए त्रिशलादेवी, नंदन पहोतो परमपए,
वलता ए देव आकासि, पेखवि जाण्यौ जिण समे ए,
तो मुनिए मने विपवाद, नादभेद जिम उपनोए ॥ ४६ ॥

कुण समेये सामिय देख, आप कन्हे हु टालिओए,
जाणतो ए तिहुअणनाह, लोक विवहार न पालियो ए ;
अति भलुं ए कीधलुसामि, जाण्युं केवल मागशे ए ;
चिंतव्युं ए वालक जेम, अहवा केडे लागशे ए ॥ ४७ ॥

हु किम ए वीर जिणंद, भगते भोलो भोलव्यो ए ;
आपणोए अविहड नहे, नाह न सपे साचव्यो ए ;

साचो ए एह वीतराग, नेह न जेहने लालिओए,
तिणेसमे ए गोयम चित्त, राग विरागे वालियोए ॥ ४८ ॥

आवतु ए जे उलट, रहेतु रागे साहियुं ए,
केवलुं ए नाण उत्पन्न, गोयम सहेजे उमाहियु ए,
त्रिभुवने ए जयजयकार, केवलि महिमा सुर करेए,
गणधरु ए करे वखाण, भवियण भव जिम निस्तरे ए ॥ ४९ ॥

॥ वस्तु ॥

पढम गणहर पढम गणहर, वरिस पचास गिहवासे सवसिस,
तीस वरिस संजम विभूसिय, सिरि केवल नाण,
पुण बार वरस तिहुअण नमंसिअ,
राजगही नगरी ठव्यो, बाणुवय वरसाउ,
सामी गोयम गुण-निलो, होस्ये सीवपुर ठाउ ॥ ५० ॥

भाषा (ढाल छठ्ठी)

जिम सहकारे कोउल टहुके, जिम कुसुमहवने परिमल बहके,
जिम चंदन सौगध निधि,
जिम गंगाजल लहेरे लहके, जिम कणयाचल तेजे झलके,
तिम गोयम सोभागनिधि ॥ ५१ ॥

जिम मानससर निवसे हंसा, जिम सुरवर शिरेकणयवतसा,
जिम महुयर राजीव वने,
जिय रयणा-यर रयणे विलसे, जिम अबर तारागण विकसे,
तिम गोयम गुण केलि रवनि ॥ ५२ ॥

पुनिम दिन (निशि) जिम ससिहर सोहे, सुरतरु महिमा जिम जग मोहे,
पूरव दिसि जिम सहसकरो,
पंचानने जिम गिरिवर राजे, नरवइ घरे जिम मयगल गाजे,
तिम जिनसासन मुनि पवरो ॥ ५३ ॥

जिम सुरतरुवर सोहे साखा, जिम उत्तम मुखे मधुरी भाषा,
जिम वन केतकी महमहे ए;
जिम भूमिपति भूयबल चमके, जिम जिण-मदिर घंटा रणके,
गोयम लब्धे गहगहे ए ॥ ५४ ॥

चिंतामणि करे चडियुं आज, सुरतरु सारे वछित काज,
कामकुंभ सो वसि हुओ ए,
कामगवी पूरे मन कामी, अष्ट महासिधि आवे धामी,
सामी गोयम अणुसरु ए ॥ ५५ ॥

प्रणवाक्षर पहेलो पभणिजे, माया बीज श्रवण निसुणीजे,
श्रीमुखे (श्रीमति) शोभा सभवे ए,
देहव धुरि अरिहत नमीजे, विनय पहु उवझाय थुणीजे,
इणे मत्रे गोयम नमो ए ॥ ५६ ॥

पर परवसता काइ करीजे, देश देशान्तर काइ भमीजे,
कवण काजे आभास करो,
प्रह उठी गोयम समरीजे, काज सवे ततखिण ते सीके,
नवनिधि विलसे तास घरे ॥ ५७ ॥

चउदहसे (चउदसय) बारोत्तर वरिसे, (गोयम गणधर केवल दिवस)
खंभ नयर प्रभु पास पसाये, कीयो कवित उपगार परो,
आदिही मंगल एह भणीजे, परव महोत्सव पहिलो दीजे,
रिद्धि वृद्धि कल्याण करो ॥ ५८ ॥

धन माता जेणे उअरे धरीया, धन पिता जिणकुले अवतरिया,
धन सहगुरु जिणे दीखिया ए,
विनयवंत विद्या-भंडार, जसु गुण पुहवी न लभे पार,
रिद्धि विद्धि कल्याण करो। (वड जिम शाखा विस्तरो) ॥ ५९ ॥

गौतम स्वामीनो रास भणीजे, चउविह सघ रलियायत कीजे,
सयल संघ आणद करो,
कुंकुम चदन छरो देवरावो, माणके मोतीना चोक पुरावो,
रयण सिंहासण वेसणु ए ॥ ६० ॥

तिहा वसी गुरु देशना देशे, भविक जीवना काज सरेसे,
उदउवत (विज्यभद्र) मुनि एम भणे ए,
गौतम स्वामी तणो ए रास, भणता सुणता लीलाविलास,
सासय सुख निधि - संपजे ए ॥ ६१ ॥

एह रास जे भणे भणावे, वर मयगल लच्छी घर आवे,
मन वछित आशा फले ए ॥ ६२ ॥

✲

कुमारपाल रास

रचयिता :

देव प्रभ

रचना-काल

अनुमानत' वि. स १४५० (१३९३ ई०)

कुमारपाल रास

॥ रोला ॥

पढम जिणिदह नमीय पाय अनइ वीरह सामी,
गायेम पमुह जि सूरिराय मुणि सिद्धिहिं गामी,
समरवि सरसति, कवडि जक्ख, वरदेवि अंबाई,
कुमरनरिंदह तणउ रासु पभणउ सुहदाई ॥ १ ॥

॥ वस्तु ॥

चच्चनन्दन चच्चनन्दन गुणह सम्पन्न,
पाहिणिदेवी उवरि धरिउ मोढवंसि उपन्न मुणीइ,
पुप्फवृष्टि सुरवइ करइ ए जास जनमि उवतार,
चगदेव चिर जीविजिउ जिणिसासणि साधार ॥ २ ॥

वालकालि सजम लियउ गुरु विनय करन्ता,
हेमसूरि गुरु नाम दिन्न जगि जस जयवता,
मति थोडी गुणतणी रासि हउ कहवि न जामउ,
हेमसूरि गुरुतणउ चरित किम करीअ वक्खाणउ ॥ ३ ॥

मेपु षडी फरसिय, जाव मसि कीजइ सायर,
अन्त न लाभइ गुणह तणउ जिम चन्द दिवायर,
पहिलउं धरीइ धजपताक गिरि मेरु समाणा,
कुमरविहारह करउ भगति सवि मडलिकराणा ॥ ४ ॥

सोवन्नथभे पूतली ए मइं मयगल दीठा,
सम्भलि कुमरनरिंद राउ जिनपडित वइठा,
रायहं कुमरनरिंद राय हेमसूरि वूझावइ,
आहेडउ वारिउ, सयलदेसि राय धम्म करावइ ॥ ५ ॥

अरिट्ठनेमि जिम कुमरपालि डागरउ दिवारिउ,
छाली वोकड करइ वात, गाडरि वधावइं,
ससला नाचइ रुलियभरे अजराभर हूआ,
लहिया दहिया करइं आलि, पारेवइ सहीआ ॥ ६ ॥

भइ सा अनइ हरिण रोझ सूयर अनइ संवर,
चीत्रा कुमरनरिंदराजि रंगि नाचइं तीतर,
जूअ न माकुण लीक कोइ कहवि न मारइ,
हरिणा हरिणी करइ केलि सुषि हेमसूरिवारइ ॥ ७ ॥

लावा लवइ पजर थिया सुषि अच्छइ भूतलि,
सूइ डा नवि पजरइ थिया पुण नाचइं सीतलि,
कावरि अनइं होल भणइ, साभलि तू सारइ,
पाणी माहि जि मच्छली ए लोधा नवि मारइ ॥ ८ ॥

सारसरी सरि हास लवइ मोरडीअ वधावइ,
अक्खई होजे कुमरपाल, अम्हमरण न आवइ,
काग सरप अनइ सुणह घाउ कोइ नवि घालइ,
न मरउ कुमरनरिंद राजि, सखि हीयडउ माचइ ॥ ९ ॥

कटेसरि चामड भणइ, साभलि तउ साउगि,
छडि न पडहण तणीय वात अच्छि भइया सावगि,
कटेसरि आपणइ चित्ति थाकी आलोची,
हेमसूरि सरिसउ किसउ रोसु, जेह न सकउं पहुची ॥ १० ॥

वालीनाह करहडा ए वे पडणि पडता,
छंडि न आमिष तणी आस अच्छि वाकुल पन्ता,
वालीनाह दिउ गाम, लीहावउ वहीए,
माडइ लाडूइ करउ भगति अनइ ईडराएं ॥ ११ ॥

पारधि जीवन पोसीग ए वहु पावह जोगु,
पारधि खेलत दसरथह हूउ पुत्रवियोगु,
कुमरनरेसर नियरज्जि आहेडउ वारइं,
जलचर थलचर खचर जीव इह कोइ न मारइं ॥ १२ ॥

पट्टणि टालिय पट्टणि टालिय जीवसधार,
सूअर संबर रोझ तहिं फिरइं, जेह जिम मणह भावइ,

दहीआ तीतर सालहिय कच्छ मच्छ नहुमरण आवइ,
छाली बोकड गाडरह कोइ न घालइ घाउ,
राजु करइ जा मेइणिहि कुमरउ रायहराउ ॥ १३ ॥

॥ रोला ॥

जूअ वसणि हूउ नलनरिंद दमयंति विओगु,
अडवि भमता वार वरिस, पाडव मनि सोगु,
देषी दूषण जूअतणउ नवि षेलइ सारि,
जूआरी नवि जूय रमइं, नवि बोलइ मारि ॥ १४ ॥

मसवसणि सोदास राय, पामिउ दुहसेणीय,
दीठी नरगह तणीय भूमि नरवइ पुण सेणिय,
आमिषभोयण तणइ दंडि बत्तीस विहार,
राय करावइ कुमरपाल जगि तिहुअणसार ॥ १५ ॥

दूषण मदिरापान तणइ जायवकुलनासो,
किरिउ दीवायणि दुट्ठ देवि बारवइ विणासो,
रायादेसइं नीच सवे हिव मदिरा मेल्हइं,
मतवाला नवि मधु करइ, भूमली न षेलइं ॥ १६ ॥

गणिका गमणु निवारिउं ए नरवइ निय राजि,
छंडविवेशावसण लोग लागा सवि काजि,
वेशा कीधी माइ सरिस तइं कुमरउ राय,
ता पण पूजइ जिणह मुत्ति, वन्दइ गुरू पाय ॥ १७ ॥

वेशावसणिइं गमइ अरथ जो पुरिस अहन्नउ,
पाछइ झूरइ मनहमाहि जिम वणीय कयन्नउ,
जोरह जणणी इम भणइ ए साभलि वछ वात,
निश्चइ जीवडउ जाइसइ ए जइ पाडिसि षात ॥ १८ ॥

दीसइ चोर न देसमाहि, जिम सुसमइ रकु,
घरि ऊघाडे बारणइ लोए सूयइ निसकु,
परस्त्रीदोसिहिं रावणइ ए दिउ नरगि पीआणु,
दसरथनन्दणि रामदेवि किउं अकह कहाणउं ॥ १९ ॥

नियनिय मदिरि भणइ नारी, साभलि परतार,
नारि नियारिय जो अतउ, हिव जाणिसि सार,

रंगइं धरणी भणह, नाह, सुणि धम्म विचारो,
मनुसुद्धिहिं हिव करि न सामि, परस्त्री परिहारो ॥ २० ॥

॥ वस्तु ॥

जूय वारिय जूय वारिय मंससजुत्त,
सुरापाणु नवि जाणीइ, वेसवसण नयणो न दीसइ,
पारधि जीव न मारिइ, चोर कोइ दष्टिइं न दीसइ,
कुमरड राउ उम्मूलि तउं परस्त्रीउ परिहार,
सातइ वसण निवारि करि गहिउ धम्मह मार ॥ २१ ॥

पाणिय गालइ तिन्नि वार अणात्थमिय करता,
कुमरनरिंद तणइ राजि सावइ पडिक्कता,
वड्डा सरावग थिया अच्छइ, श्रावकविधि पालइ,
धम्महिं लीणा रातिदिवस सवे पातग टालइ ॥ २२ ॥

बहिनडली बंधव भणइ, ए मज्झ कउतिगु भावइ,
हेमसूरि गुरु तणउ बोध अम्ह भलउ सुहावइ,
कुमरविहार वन्दावि चालि, जिण राय कराविय,
अणहिलवाडउ कुमरपालि तलितलि मडाविय ॥ २३ ॥

सोवनथभे पूतली ए आपण जोअन्ती,
निरुवम रूविहि आपणइ ए तिहुयण मोहन्ती,
हीरे माणिक्य चूनडी ए पाथरखड जडिया,
निम्मल कती बिंकरासि अइ निउणे घडिया, ॥ २४ ॥

मतिय मोकलि देसि देसि बहु सघ मेलावइ,
घामी बहु भासीस दिइं, राउ जात चलावइ,
देसि–विदेसह मिलिय सघ, पहुतउ गूजरात,
बाहड ,मत्री वीनवइ ए, सुणि स्वामिय वात ॥ २५ ॥

चउरा गूडर सघ तणा, नवि लाभइ पार,
चालि न नरवर सुरट्ठ भणी, म न लाइ सि वार,
दीधउं सघपति तीरथ भणी पहिलउ पीआणउ,
भोली बुद्धिहि आपणिए हु किंपि वक्खाणउ ? ॥ २६ ॥

॥ वस्तु ॥

बहूय देसह बहूय देसह सघ मेलेवि,
जिणभत्तिहि एगमणि भूमिनाहु सेत्रु जि वच्चइ,
गाइ वाइ रुलिय भरी, सघलोक आणदि नच्चइ,
ठामि ठामि वधाविइ हिव हुइं मगल चारू,
अरथहि वरसइं मेह जिम दानि मानि सुविचारू ॥ २७ ॥

॥ रोला ॥

सूरिराय सिरि हेमसूरि जिण धम्मधुरीणा,
समणा समणी सहससंख, मनि समरसि लीणा,
मिलिया सावतणा साष, वनि धनद समाणा,
सावीय वहती सीसकमलि गुरु-गुरणी आणा ॥ २८ ॥
भेरी मूगल ढोल घणा घमघमइ नीसाणा,
खेला नाचइ रग भरे नवनवा सुजाणा,
धामिणि तरुणि दिइ रासु करि सग्रह आवी,
मधुरी वाणिहि भणइ भास किवि कन सुहावी ॥ २९ ॥
बन्दी जयजयकार करइ कइ दीहर सादि,
गायइ गायण सत्त सरे कवि किंनर आदि,
चालीय गयघड माल्हती ए झरती मद वारि,
खोणी खणता तुरय लाष, करहा सइं च्यारि ॥ ३० ॥
राउत पायक राजलोक अनइ मागणहार,
सख विवज्जिय मिलिय लोक, कोइ जाणइ सार ?
कि अह चालिउ भरत राउ कि सगरनरिंदो ?
राया सपइ दसनभद्द ? कि कन्ह गोविंदो ? ॥ ३१ ॥
कि वा दीसइ नलनरिंदु कि देवह राउ ?
भ्रति उपज्जइ जोयता ए नरवइ समदाउ,
सघपति करतउ गामिगामि जिण पूज अवारी,
पहुतउ सेत्रुजि, दिह दाण, रिद्धि गणइ असारी ॥ ३२ ॥
दोषी हरषी सघवी ए रिसहेसरु सामी,
वन्दइ-पूजइ थुणइ भावि, मिलिया सवि सामी,

मंडिय रेवइमडणउ जायवकुलसारो,
सीलिहिं सुन्दर, नाणवन्तु सिरि नेमिकुमारो ॥ ३३ ॥
संघसहित पहुपूज करी राउ दाणु दियन्तो,
वाजत गाजत चालियउ हरसिहि उल्हसन्तो,
धीरू गुहारिय वउणथली, मगलपुरि पासो,
दीव, अजाहरि, कोडिनारि, पाटणि जिणु पासो ॥ ३४ ॥

॥ वस्तु ॥

चडिय भूपति चडिय भूपति नाहु सेत्रुजि,
रिसहेसर पणमीयइ नरय तिरिय जो दुक्ख वारइ,
तह उज्जिलि नेमि जिणु काम कोह तिहिं स्वामि वारइ,
मंगलि पाटणि वउणथलि, दीवि अजाहरि देव,
कोडीयनारि जुहारि करि, पाटणि पहुतउ हेव ॥ ३५ ॥
भणइ कुमरड भणइ कुमरड, रिसह अवधारि,
करि जोडी हू वीनवउ, सामि पासि हू काइ न मागउ,
जिहा कुले तिहा नवि उलखिउ तिहा चकवइ म देउ,
सिरि सेत्रुंजइ गिरिसिहरि वर पंषीउ करेइ ॥ ३६ ॥

॥ रोला ॥

सानिधि सासणदेवि तणइ सघि कीधी जात,
पाटणि आवी नारि करइ घरि घरि इम वात,
कीधी जपुण जात अम्हे एहु सामि पसाउ,
प्रतपउ कोडि दीवालियह हेमसूरि सिउ राउ ॥ ३७ ॥
कासी कोसल मगध देस कोसबी वच्छा,
मरहठ मालव लाडदेस सोरीपुर कच्छा,
सिन्धु सवालष कासमीर कुरु कन्ति सइ भरि,
कान्हडदेस कान्हडिय भणइ, जाणिय तालधरि ॥ ३८ ॥

॥ वस्तु ॥

मारि वारीय मारी वारीय देस अड्ढारि,
देस विदेसह मेलि करि भविय लोक जिणि जत्त कारिय,
चऊदसह चालीसह राय विहार किय रिद्धि सारिय,

मोगड मूकी जेण हिव जगि लीधउ जसवाउ,
वूउ न होसिइं चिहु युगे कुमरड सरिसउ राउ ॥ ३९ ॥

॥ रोला ॥

त्रिहु भुवणे जसु कीत्ति लईइणि गूजरराइं,
कृतयुग कय अवतारि नेव गंजइ कलिवाइ,
सहिय विभावठि कम्मदोसि जिम वभ चकीसरि,
देवभूमि गिइं सिद्धचक्क जयसिंह नरीसरि ॥ ४० ॥

चुलिक्यवसी तिहुणपाल-—कुलअबर-—भाणू,
विक्कम वच्छरि वरतत ए एगार नवाणू,
पाटि बइठउ कुमारपालु बलि, भीमसमाणउ,
मडइ रणरगइ जासु तणइ कोइ राउ न राणउ ॥ ४१ ॥

मेरु ठामह न चलइ जाव, जा चन्द-दिवायर,
सेषनागुजा धरइ भूमि जा सातइ सायर,
धम्मह विसउ जा जगहमाहि, घ्रूय निश्चल होए,
कुमरउ रायह तणउ रासु ता नन्दउ लोए ॥ ४२ ॥

सूरीसर सिरि सोमतिलय गुरू पायपसाया,
वुह देवप्पह गणिवरेण चिर नन्दउ राया,
पढइ गुणइ जे सुणइ रासु जणा हरषिइ लेई,
सविहु दुरियह करइं छेह सिवपुर पामेई ॥ ४३ ॥

॥ इति कुमारपालरास समाप्त ॥

सम्वत् १५५९ वर्ष चैत्र वदि ३ शुक्रे भुवनवल्लभगणि लषितं ।

☼

जिनचंद सूरि फागु

रचना-काल

वि. सं १३४१ (१२८४ ई०) लगभग

जिनचंदसूरि फागु

अरे पणमवि सामिउ सतजु, सिव वाउलि उरि हारु,
अरे अणहिलवाडामडणउ सव्वह तिहुयणसारु,
अरे जिणपवोहसूरि पाटिहि, सिरि सजमु सिरि कतु,
अरे गाइवउ जिणचद सूरि गुरु, कामलदेवि कउ पूतु ॥ १ ॥

अरे हयडऊ तपियउ पँखिवि, न सहए रतिपति नाहु,
अरे वोलावइ वसतु ज सव्वह रितुहु राउ,
अरे आगए तुह वलि जीतओ, गोरड करऊ वालभु,
अरे इसइ वचनु निसुर्णविग्गु, आगयउ रलिय वसतु ॥ २ ॥

अरे पाडल वालउ वेउल, सेवत्रो जाइ मुचकुदु,
अरे कट्ठु करणी रायचपक विहसिय केवडिविदु,
अरे कमलहि कुमु दिहि सोहिया, मानस जवलि तलाय
अरे सीयला कोमला सुरहिया वायइ दक्खिणा वाय ॥ ३ ॥

अरे पुरि पुरि आवुला मउरिया, कोइल हरखिय देह,
अरे तहिं ठए टुहकए वोलए, मयणह केरिय स्नेह
अरे इसइ वसतिहि हूयए, माघु स केतिय मात्र (?)
अरे अचेतन जे पाखिया, तिन्हु तणी जुगलिय वात ॥ ४ ॥

अरे इसउ वसंतु पेखेवि, नारियकुजरु कामु,
अरे सिगारावए विविह परि, सव्वह लोयह वामु,
अरे सिरि-मउडु, कन्नि कुंडल वरा, कोटिहि नवसरु हारु,
अरे वाहंहि चूडा, पागिहि नेउर कओ झणकारु ॥ ५ ॥

अरे सिरिया मोडा लहलहहि कसतूरिय महिवट्टु,
अरे न··· ···· ··· · ··· · ·

... .

. . . . .. ' ट परि हुयउ देवगणाभउ ।
रिणतूरिहिं वज्जतिहिं उट्ठिउ शीलनरिन्दु ।
देखिवि उतकट्टु विग्गिहयउ सयलु वि देखिहि विंदु ॥ २१ ॥

अरे द्रेठिहिं द्रेठिहि दीठए नाठउ रतिपति राउ,
नारीयकुंजरु मेल्हिवि जोयए छाडिय खाल (?) ॥ २२ ॥

घरणिदह पायालिहिं पुहविहिं पडिय लोउ,
जीतउ जीतउं इम भणइ सग्गिहिं सुरपति इदु ॥ २३ ॥

वद्धावणउ करावए सग्गिहिं जिणसरसूरि,
गूजरात पाटण भल्लउ सयलह नयरह माहि ॥ २४ ॥

मालवा की बाउल भणहि सयलह लोयह माहि
सिरिजिणचदसूरि फागिहिं गायहिं जे अति भावि,
ते बाउल अरु पुरुसला, विलसहि विलसहि सिवसुह साथि ॥ २५ ॥

सिरि-थूलिभद्द फागु

(स्थूलिभद्र फागु)

रचयिता :

कवि जिन पद्म

रचना-काल

वि० स० १३६० (१३३३ ई०)

सिरि-थूलिभद्द फागु

पणमिय पासजिणिंद-पय अनु सरसइ समरेवी।
थूलिभद्द-मुणिवइ भणिसु फागु-बंधि गुण केवी ॥ १ ॥

॥ प्रथम भास ॥

(अह) सोहग सुन्दर रुपवंतुगुण-मणि-भंडारो
कंचण जिम झलकत-कंति संजम-सिरि-हारो।
थूलिभद्दमणिराउ जाम महियलि बोहतउ
नयरराज-पाडलिय-माहि पहुतउ विहरतउ ॥ २ ॥

वरिसालइ चउमास-माहि साहू गहगहिया
लियइ अभिग्गह गुरुह पासि निय-गुण-मह्महिया।
अज्ज-विजयसभूइ-सूरि गुरु-वय मोकलावइ
तसु आएसि मुणीस कोस-वेसा घरि आवइ ॥ ३ ॥

मंदिर-तोरणि आवियउ मुणिवरु पिक्खेवी
चमकिय चित्तिहि दासडिउ वेगि जाइ वधावी।
वेसा अतिहि ऊतावलि य हारिहिं लहकती
आविय मुणिवर राय-पासि करयल जोडती ॥ ४ ॥

'धम्म-लाभु' मुणिवइ भणवि चित्रसाली मगेवी
रहियउ सीह-किसोर जिम धीरिम हियइ-धरेवी ॥ ५ ॥

॥ द्वितीय भास ॥

झिरिमिरि झिरिमिरि झिरिमिरि ए मेहा वरिसते
खलहल खलहल खलहल ए वाहला वहते ॥
झबझब झबझब झबझब ए वीजुलिय झब्बकइ
थरहर थरहर थरहर ए विरहिणि-मणु कंपइ ॥ ६ ॥

महुर-गँभीर-सरेण मेह जिम जिम गाजते ।
पचवाण निय कुसुम-वाण तिम तिम साजते ॥
जिम जिम केतकि महमहत परिमल विहसावइ
तिम तिम कामिय चरण लग्गि निय रमणि मनावइ ॥ ७ ॥

सीयल-कोमल-सुरहि वाय जिम जिम वायते
माणमडप्फर माणणिय तिम तिम नाचते ॥
जिम जिम जल-भर-भरिय मेह गयणगणि मिलिया
तिम तिम पथिय-तण नयणा नीरिहिं झलहलिया ॥ ८ ॥

मेहारवभरऊलटि य जिम जिम नाचइ मोर
तिम तिम माणिणि खलभलइ साहीता जिम चोर ॥ ९ ॥

॥ तृतीय भास ॥

अइ सिंगारू करेइ वेस मोटइ मन-ऊलटि
रइय (?) अंगि बहु-रगि चगि चदण-रस-ऊगटि ॥
चपक-केतकि-जाइ-कुसुम सिरि खुप भरेई
अति-अच्छउ सुकुमाल चीरू पहिरणि पहिरेइ ॥ १० ॥

लहलह-लहलह-लहलहए उरि मोतिय-हारो
रणरण-रणरण-रणरणए पगि नेउर-सारो ॥
झगमग-झगमग-झगमगए कानिहिं वर कुंडल
झलहल-झलहल-झलहलए आभणाह मडल ॥ ११ ॥

मयण-खग्गु जिम लहलहए जसु वेणी-दडो
सरलउ तरलउ सामलउ (?) रोमावलि दडो ॥
तुंग पयोहर उल्लसइ [जिम] सिंगारथवक्का
कुसुम-वाणि निय अमिय-कुंभ किर थापाणि मुक्का ॥ १२ ॥

कज्जलि-अंजिवि नयण जुय सिरि सइँथउ फाडेई ।
बोरीयाँवडि-कचुलिय पुण उरमडलि ताडेइ ॥ १३ ॥

॥ चतुर्थ-भास ॥

कन्न-जुयल जसु लहलहत किर मयण हिंडोला
चंचल चपल तरंग चंग जसु नयण-कचोला ॥
सोहइ जासु कपोल-पालि जणु गालिमसूरा
कोमल विमलु सुकंठु जासु वाजइ सख-तूरा ॥ १४ ॥

लवणिमरसभरकूवडिय जमु नाहिय रेहइ
मणयराय किर विजयखंभ जसु उरु सोहइ ॥
जसु नहपल्लव कामदेव अकुस जिम राजइ
रिमिझिमि रिमिझिमि पाय-कमलि घाघरिय सुवाजइ ॥ १५ ॥

नवजोवण विलसत देह नवनेह गहिल्ली
परिमल-लहरिहिं महमहत रइकेलि पहिल्ली ॥
अहर-बिब परवाल-खड वर-चंपावन्नी
नयण-सलूणीय हाव भाव बहु-रस-सपुन्नी ॥ १६ ॥

इय सिंगार करेवि वर जउ आवी मुणि पासि
जोएवा कउतिगि मिलिय सुर-किन्नर आकासि ॥ १७ ॥

॥ पचम-भास ॥

अह नयण कडक्खिहिं आहणए वाकउ जोवती
हाव-भाव सिंगार-भगि नवनविय करंति ॥
तहवि न भीजइ मुणि-पवरो तउ वेस बोलावइ
तवणतुल्लु तुह विरह, नाह ! मह तणु सतावइ ॥ १८ ॥

वारहँ वरिसहँ तणउ नेहु किणि कारणि छडिउ
एवड्डु निट्ठुरपणउ काइँ मू-सिउँ तुम्हि मडिउ ॥
थूलि भद्द पभणेइ वेस ! अइ-खेदु न कीजइ
लोहिहि घडियउ हियउ मज्झ, तुह वयणि न भीजइ ॥ १९ ॥

'मह विलवतिय उवरि, नाह ! अणुराग धरीजइ
एरिसु पावस-कालु सयलु मूसिउँ माणीजइ' ॥
मुणिवइ-जंपइ 'वेस ! सिद्धि-रमणी परिणोवा
मणु लीणउ सजम-सिरीहिं सिउँ भोग रमेवा' ॥ २० ॥

भणइ कोस 'साचउँ कियउँ 'नवलइ राचइ लोउ'
मू मिल्हिवि सजम-सिरिहिं जउ रातउ मुणि-राउ' ॥ २१ ॥

॥ षष्ठ-भास ॥

उवसमरसभरपूरिययउ (?) रिसिराउ भणेई
'चिंतामणि परिहरवि कवणु पत्थरु गिह णेइ ॥
तिम सजम-सिरि परिवएवि बहु-धम्म समुज्जल
आलिंगइ तुह, कोस ! कवणु पसरत-महाबल' ॥ २२ ॥

'पहिलउ हिवडाँ' कोस कहइ 'जुव्वण-फलु लीजइ
तयणतरु संजमसिरीहिं सिउँ सुहिण रमीजइ' ॥
मुणि बोलइ ज मइँ लियउ त लियउ ज होइ (?)
केवगु सुअच्छइ भुवण-तले जो मह मगु मोहइ' ॥ २३ ॥

इणिपरि कोसा अवगणिय थूलिभद्द मुणिराइ
तसु धीरिम अवधारि-करि चमकिय चित्ति सुहाइ ॥ २४ ॥

॥ सप्तम-भास ॥

अइ-बलवंतु सु मोह-राउ जिणि नाणि निधाडिउ
झाण खडग्गिण मयणसुहड समरगणि पाडिउ ॥
कुसुम-वुट्ठि सुर करइ तुट्ठि तह जय-जय-कारो
'धनु धनु एहु जु थूलिभद्दु जिणि जीतउ मारो' ॥ २५ ॥

पडिबोहिवि तह कोस-वेस चउमासि अणतरु
पालिअभिग्गह ललिय चलिय गुरु पासि मुणीसरु ॥
'दुक्कर-दुक्कर-कारगु' त्ति सूरिहिं सु पसंसिउ
सख-समज्जल-जसु लसंतु सुर-नारिहिंनमसिउ ॥ २६ ॥

नंदउ सो सिरि-थूलिभद्दु जो जुगह पहाणो
मलियउ जिणि जगि मल्लसल्लरइवल्लह-माणो ॥
खरतर—गच्छि जिण-पदम-सूर-किउ फागु रमेवउ
खेला-नाचइँ चैंत्र-मासि रगिहि गावेवउ ॥२७ ॥

❋

श्री नेमिनाथ फागु

रचयिता

राजशेखर सूरि

रचना-काल

लगभग वि. सं. १४०५ (१३५० ई०)

श्री नेमिनाथ फागु

सिद्धि जेहिं सइ वर वरिय ते तित्थयर नमेवी ।
फागुबंधि पहुनेमिजिणगुण गाएसउ केवी ॥ १ ॥

अह नवजुव्वण नेमिकुमरु जादवकुलधवलो ।
काजलसामल ललवलउ सुललियमुहकमलो ।
समुदविजयसिवदेविपूतु मोहगसिंगारो ।
जरासिंधुभडभगभीमु बलि रूवि अप्पारो ॥ २ ॥

गहिरसद्दि हरिसखु जेण पूरिय उद्दडो ।
हरि हरि जिम हिंडोलियउ भुयदडपयंडो ।
तेयपरिवक्कमि आगलउ पुणि नारिविरत्तउ ।
सामि सुलक्खणमामलउ सिवसिरिअणुरत्तउ ॥ ३ ॥

हरिहलहरसउ नेमिपहु खेलइ मास वसतो ।
हावि भावि भिज्जइ नही य भामिणिमाहि भमतो ॥ ४ ॥

अह खेलइ खडोखलिय नीरि पुणु नयणि नमावइ ।
हरिअतेउरमाहि रमइ पुणि नाहु न राचइ ।
नयणसलूणउ लडसडतु जउ तीरिहिं आविउ ।
माइ वापि वध्रविहिं माड वीवाह मनाविउ ॥ ५ ॥

घरि घरि उत्सव वारवए राउल गहगहए ।
तोरण वदुरवाल कलस धयवड लहलहए ।
कन्हडि मागिय उग्गमेणधूय राजल लाधा ।
नेमिकुमाहीय, वाल अट्ठभवनेहनिवद्धा ॥ ६ ॥

ग[illegible]मग सम तिहु भुवणि अवर न अत्यइ नारे ।
मो[illegible]णविल्लि नवल्लडीय उप्पनीय समारे ॥ ७ ॥

अह सामलकोमल केशपाश किरि मोरकलाउ।
अद्धचद समु भालु मयणु पोसइ भडवाउ।
वकुडियालीय भुंहडियहं भरि भुवणु भमाडइ
लाडी लोयणलहकुडलइ सुर सग्गह पाडइ ॥ ८ ॥

किरि सिसिबिंब कपोल कन्नहिंडोल फुरता
नासा वसा गरुडचचु दाडिमफल दंता।
अहर पवाल तिरेह कंठु राजलसर रूडउ
जाणु वीणु रणरणइ जाणु कोइलटहकडलउ ॥ ९ ॥

सरलतरल भुयवल्लरिय सिहण पीणघणतुग।
उदरदेसि लंकाउली य सोहइ तिवलतुरंगु ॥ १० ॥

अह कोमल विमल नियबबिंब किरि गगापुलिणा,
करिकर ऊरि हरिण जघ पल्लव करचरणा।
मलपति चालति वेलहीय हसला हरावइ
सभारागु अकालि बालु नहकिरणि करावइ ॥ ११ ॥

सहजिहिं लडहीय रायमए सुलखण सुकमाला।
घणउं घणेरउ गहगहए नवजुब्वण बाला।
भभरभोली नेमिजिणवीवाह सुणेई
नेहगहिल्ली गोरडी हियडइ विहसेई ॥ १२ ॥

सावणसुकिलछट्ठि दिणि बावीसमउ जिणदो
चल्लइ राजलपरिणयण कामिणिनयणाणदो ॥ १३ ॥

अह सेयतुगतरलतुरइ रइरहि चडइ कुमारो
कन्निहि कुडल सीसि मउड गलि नवसरहारो।
चंदणि ऊगटि चदधवलकापडि सिणगारो
केवडियालउ खुपु भरवि वकुडउ अतिफारो ॥ १४ ॥

धरहि छत्तु वित्तु चमर चालहिं मृगनयणी
लूणु उत्तारिहि वरवहिणी हरि सुज्ञलवयणी।
चहुपरि बइसइ दसारकोडि जादवभूपाला
हयगयरहपायक्कचक्कसी किरिहिं भमाला ॥ १५ ॥

मगल गायहिं गोरडीय भट्टह जयजयकारो।
उग्गसेणघरनारि वरो पहुतउ नेमिकुमारो ॥ १६ ॥

अहसिहिय पयपय हल सहि ए तुह वल्लहउ आवइ
मालिअटालिहि चडिउ लोउ मण नयणु सुहावइ।
गउखि वइठी रायमए नेमिनाहु निरखइ
पसइपमाणिहिं चचलिहि लोअणिहिं कडखइं ॥ १७ ॥

किम किम राजलदेवितणउ सिणगारु भणेवउ।
चपइगोरी अइधोइ अगि चदनुलेवउ।
खुंपु भराविउ जाइकुसमि कसतूरी सारी।
सीमतइ सिदूररेह मोतीसरि सारि ॥ १८ ॥

नवरगी कु कुमि तिलय किय रयणतिलउ तमु भाले।
मोतीकु डल कन्नि थिय विवोलिय करजाले ॥ १९ ॥

अह निरतीय कज्जलरेह नयणि मुहकमलि तवोलो
नगोदरकठलउ कठि अनु हार विरोलो।
मरगदजादर कचुयउ फुडफुल्लह माला।
करि कंकण मणिवलयचूड खलकावइ वाला ॥ २० ॥

रुणुझुणु ए रुणुझुणु ए रुणुझुणु ए कडि घघरियाली।
रिमिझिमि रिमिझिमि रिमिझिमि ए पयनेउर जुयली।
नहि आलत्तउ वलवलउ सेअसुयकिमिसि
अंखडियाली रायमए प्रिउ जोअइ मनरसि ॥ २१ ॥

वाडउ भरिउ जीवडह टलवलत कुरलत।
अहूठकोडिरूं उद्धसिय देषइ राजलकतो ॥ २२ ॥

अह पूछइ राजलकतु काइ पसुवधणु दीसइ
सारहि वोलइ सामिसाल तुह गोरवु हूस्यइ।
जीव मेल्हावइ नेमिकुमरु मरणागइ पालइ।
धिगु ससारु असारु इस्यउं इम भणि रहु वालइ ॥ २३ ॥

समुदविजय सिवदेवि रामु केसवु मन्नावइ
नइपवाह जिम गयउ नेमि भवभमणु न भावइ।
धरणि धसक्कइ पडइ देवि राजल विहलघल
रोअइ रिज्जइ वेसु रूवु वहु मन्नइ निष्फलु ॥ २४ ॥

उग्गसेणधूय इम भणइ दूपहि दाझ्इ देहो।
का विरतउ कत तुह नयणिहि लाइवि नेहो ॥ २५ ॥

आसा पूरइ त्रिहुभुवण मू म करि हयासी
दय करि दय करि देव तुम्ह हुउं अछउं दासी।
सामि न पालइ पडिवन्नउ तउ कोसु कहीजइ
मयगलु उवट सचरए किणि कानि गहीजइ ॥ २६ ॥

नेमि न मन्नइ नेहु देइ सवच्छरदाणूं
ऊजलगिरि सजम लियउ हुय केवलनाणूं।
राजलदेविसउं सिद्धि गयउ सो देउ थुणीजइ
मलहारिहिं रायसिहरसूरिकिउ फागु रमीजइ ॥ २७ ॥

[इति श्री नेमिनाथ फागु]

वसन्त विलास फागु

रचना-काल

वि. स. १४०० (१३५० ई०) लगभग

वसन्त विलास फागु

पहिलउँ सरसति अरचिसु रचिसु वसंतविलासु ।
वीणु धरइ करि दाहिणि वाहणि हंसुलउ जासु ॥ १ ॥

पहुतिय सिवरति समरती हिव रितु तणीय वसंत ।
दहदिसि पसरइ परिमल निरमल थ्या दिशि अंत ॥ २ ॥

वहिनहे गयइ हिमवरि वसन्ति लयउ अवतारु ।
अलि मकरन्दिहिं मुहरिया कुहरिया सवि सहकार ॥ ३ ॥

वसततणा गुण गहगह्या महमह्या सवि घनसार ।
त्रिभुवनि जयजयकार पिका रव करइं अपार ॥ ४ ॥

पदमिनि परिमल बहकइ लहकइं मलयसमीर ।
मयणु जिहा परिपथीय पथीय धाइ अधीर ॥ ५ ॥

मानिनि जनमत्तक्षोभन शोभन वाउला वांइ ।
निधुवनकेलिक पामीय कामीय अगि सुहाइं ॥ ६ ॥

मुनि जननां मन भेदए छेदए मानिनी मानु ।
कामीय मनह आणंदए कंदए पथिक पराण ॥ ७ ॥

वनि विरच्या कदलीहर दीहर मडपमाल ।
तलीया तोरण सुंदर चदरवाल विशाल ॥ ८ ॥

खेलनि वावि सुखालीय जालीय गुउषि विश्रामु ।
मृगमदपूरि कपूरिहिं पूरिहिं जलि अभिराम ॥ ९ ॥

रगभूमी सजकारीय झारीय कुंकुम घोल ।
सोवन साकल साधीय वाधीय चपकि दोल ॥ १० ॥

तिहा विलसइ सवि कामुक जामुक हृदयचइ रगि ।
काम जिस्या अलवेसर वेसु रचइ वर अगि ॥ ११ ॥

अभिनव परि सिणगारीय नारीय मिलीय विसेसि ।
चदन भरइं कचोलीय चोलीय मडनरेसि ॥ १२ ॥

चदनवन अवगाहीय न्हाईय सरवरि नीर ।
मदसुरभिहिमलक्षुण दक्षिण वाइं समीर ॥ १३ ॥

नयर निरूपमु ते वनु जीवनु तणउ युवान ।
वासभुवनि तहि विहसइं जलसय अलीअल आण ॥ १४ ॥

नव यौवन अभिराम ति रामति करइ सुरगि ।
स्वर्गि जिस्या सुर भासुर रासुर रासु रमइ वर अगि ॥ १५ ॥

कामुकजनमनजीवनु ती वनु नगर सुरंग ।
राजु करइ अवभंगिहिं रंगिहिं राउ अनगु ॥ १६ ॥

अलिजन वसइं अनत रे वसतु तिहा परधान ।
तरुअर वासनिकेतन केतन किशलसतान (सतान) ॥ १७ ॥

वनि विरचइ श्रीनदनु चदनु चदचउ मीतु ।
रति अनइ प्रीति सिउ सोहए मोहए त्रिभुवन चीतु ॥ १८ ॥

गरूउ मदन महीपति दीपति सहृण न जाइ ।
करइ नवी कइ जुगति रे जगति प्रतापु न जाइ ॥ १९ ॥

कुसुम तगुं करि धणुह रे गुणह रे भमरला माल ।
लघु लाघवी नवि चूकइ मूंकइ शर सुकुमाल ॥ २० ॥

मयणु जि वयण निरोपए लोपए कोइ न आण ।
मानिनी जनमन हाकए ताकए किशल कृपाण ॥ २१ ॥

इम देषी रिधि कामनी कामिनी किन्नर कठि ।
नेहगहेल्ली मानिनी माननी मूकइ गठि ॥ २२ ॥

कोइलि आबुलाडालिहिं आलिहि करइ निनादु ।
कामतणुं करि आइसि आइसि पाडए सादु ॥ २३ ॥

श्रमण थिय न पयोहर मोहु रचउ मग मारि ।
मान रचउ किस्या कारण तारणु दीह बिच्यारि ॥ २४ ॥

नाहु निंछी छिमगामटि सामटि मइलु अ जाणि ।
मयणु महाभडु न सहीइ सही इ हणइ ए वाणि ॥ २५ ॥

इण परि कोइलि कूजइ पूजइ युवति मनोर।
विधुर वियोगिनी धूजइ कूजइ मयणकिशोर॥ २६॥

जिम जिम विहसइ वणसइ विणसइ मानिनी मानु।
यौवन मदिहिं उदच ति ढपति थाइ युवान॥ २७॥

जइ किमइ गजगति चालइ सालइ विरहिणि अगु।
वालइ विरहि करालीय बालीय चोलीय अगु॥ २८॥

घूमइ मधुप मकेसर केसर मुकुल असंख।
चालइ रतिपति सूरइ पूरइ सुभटि कि शख॥ २९॥

वउलि विलूला महुअर वहुअ रचइ झणकार।
मयण रहइ किरि अगुदिण वदिण करइ कइ वार॥ ३०॥

चापला तरूयरनी कली नीकली सोव्रन वानि।
मार मारग ऊदीपक दीपक कलीय समान॥ ३१॥

बांधइ कामुकि करकसु तरकसु पाडल फूल।
माहि रच्या किरि केसर ते सरनिकर अमूल॥ ३२॥

आवुलइ माजरि लागीय जागीय मधुकरमाल।
मूंकइ मारु कि विरहिय हीअइ स धूमवराल॥ ३३॥

केसूयकली अति वाकुडी आकुडी मयणची जाणि।
विरहिणिना इणि कालि ज कालिज काढइ ताणि॥ ३४॥

वीर सुभट कुसुमायुध आयुध शालअशोक।
किशल जिस्या असि झबकइ झबकइ विरहिणी लोक॥ ३५॥

पथिक भयकर केतु कि केतुकिदल सुकुमार।
अवर ते विरहविदारण दारण करवतधार॥ ३६॥

इम देषीय वनसपइ कंपइ विरहिणि साथु।
आसूअ नयण निशा भरइ साभरइ जिम जिम नाथु॥ ३७॥

विरहि करालीय फालीय वालीय चोलीय अगु।
विषय गणइ तृण तोलइ बोलइ ते वहु भग॥ ३८॥

रहि रहि तोरीय जो इलि कोइलिस्युं वहु वाम।
नाहुलउ, अजीय न आवइ भावइ मू न विलास॥ ३९॥

उर वरि हारु ते भारु मू सयरि सिंगारु अगारु ।
चीतु हरइ नवि चदनु चद्रु नही मनोहारु ॥ ४० ॥

माइ मूं दूष अनीठउं दीठउं गमइ न चीरु ।
भोजनु आजु ऊचीठउं मीठउ स्वदइ न नीरु ॥ ४१ ॥

सकलकला त्य निशाकर ध्या कर सयरि संतापु ।
अबल म मारि कलकिय शकिय रे हिव पाप ॥ ४२ ॥

भमरला छाडि न पाखलि खाखल थ्या अम्ह सयर ।
चादुला सयर सतापण आपण ता नही वइरु ॥ ४३ ॥

बहिनूए रहइ न मनमथ मनमथतउ दीहराति ।
अंग अनोपम शोषइ पोषइ वयरू अराति ॥ ४४ ॥

कहि सहि मुझ प्रिय वातडी रातडी किमइ न जाइ ।
दोहिलउ मकरिनकेतन चेतु नही मुझ ठाइ ॥ ४५ ॥

सखि मुझ फरकइ जाघडी ता घडी बिहुँ लगइ आजु ।
दूष सवे हिव वामिसु पामिसु प्रिय तणउं राजु ॥ ४६ ॥

विरहु सहू तहि भागलउ कागलउ कुरलतउ पेषि ।
वायसना गुण वरणए अरण ए त्यजीय विशेषि ॥ ४७ ॥

धन धन वायस तू सर मू सरवसु तू देस ।
भोजनि कूर करबलउ आबलउ जइ हूँ लहेसु ॥ ४८ ॥

देसु कपूरची वासि रे वासि वली सरु एउ ।
सोवन चाच निरूपम रूपम पाषडीउ वेउ ॥ ४९ ॥

शकुन विचारि सभावीया आवीया तीह वालभ ।
रसि भरि निज प्रिय निरखीय हरिषिय दिइ परिरभ ॥ ५० ॥

रगि रमइ मनि हरिसीय सरिसीय निज भरतारि ।
दीसइ ते गयगमणीय नमणीय कुचभर भारि ॥ ५१ ॥

कामिनी नाहुला जी सुख ती मुखि कहण न जाइ ।
पामीय नइ प्रियसगम अग मनोहर थाइं ॥ ५२ ॥

षूप भरी सिरि केतुकि सेत किया सिगार ।
दीसइ ते गयगमणीय नमणीय कुसुमचइ भारि ॥ ५३ ॥

सहजि सलील मदालस आलसीया ती हं अग।
रासु रमइं अबला वनि लावनिसयरिसु रग ॥ ५४ ॥

कान कि झलकइ बीज नउ वीजनउ चद्र कि भालि।
गल्ल हसइ सकलक मयकह बिबु विशाल ॥ ५५ ॥

मुख आगलि तु मलिन रे नलिन जई जलि न्हाइ।
दंतह बीज दिषाडि म दाडिम तुं जि तमाहि ॥ ५६ ॥

मणिमय कुडल कानि रे वानि हसइ हरीयाल।
पचमु आलति कठि रे कठि मुताहल माल ॥ ५७ ॥

वीणि भणउ कि भुजंगमु जगमु मदनकृपाण।
कि रि विषमायुधि प्रकटीय भृकुटीय धणुह समाण ॥ ५८ ॥

सीसु सीदूरि पूरिय पूरीय मोतीय चगु।
राषडी जडीय कि माणिकि, जाणिकि फणिमणि चगु ॥ ५९ ॥

तीह मुखि मुनि मन सालए चालए रथ कि अनगु।
सूर समान कि कुडल मडल किया रथ अग ॥ ६० ॥

ममह कि मनमथ धुणहीय गुणहीय वरतणु हार।
वाण कि नयण रे मोहइं सोहइ सयल नसारु ॥ ६१ ॥

हरिण हरावइ जोतीय मोतीय ना शरि जालि।
रगि निरूपम अधम रे अधर किया परवाल ॥ ६२ ॥

तिल कुसुमोपम नाकु रे लाकु रे लीजइ मूंठि।
किशलय कोमल पाणि रे जाणि रे चोल मंजीठ ॥ ६३ ॥

वाहुलता अति कोमल कमल मृणाल समान।
जीपइ उदरि पचानन आनन नही उपमानु ॥ ६४ ॥

कुच वि अमीयकलसा पणि थापणि तणीय अनग।
तीहंचउ राषणहारु कि हारु ति धवल भुजग ॥ ६५ ॥

नमणि करइ न पयोधर योध र सुरत सग्रामि।
कचुक त्यजइ सनाहु रे नाहु महाभडु पामि ॥ ६६ ॥

नाभि गभीर सरोवर उरवरि त्रिवलि तरग।
जघन समेखल पीवर चीवर पहिरिणि चग ॥ ६७ ॥

निरुपमपणइं विधि ता घडी जाघडी उपम न जाइ ।
करि ककण पइ नेउर केउर बाहडीआइं ॥ ६८ ॥

अलविंहि लोचन मीचइ हिंचइ देलिहि एकि ।
एकि हणइ प्रियु कमलि रे रमलकरइ जलकेलि ॥ ६९ ॥

एकि दिइं सहि लालीय तालीय छंदि रास ।
एकि दिइं उपालभु वालभरहि सविलास ॥ ७० ॥

मुरुकलइ मुख मचकोडइ मोडइ ललवल अंगु ।
वानि स धनुष वषोडए लोडए चित्तु सुरगु ॥ ७१ ॥

पाडल ञ्ली अति कूंअली तुं अलीयल म धधोलि ।
तउ गुणवेध ति साचउ काचउ महीउं म रोलि ॥ ७२ ॥

कंटकसकटि एवडइ केवडइ पइसी भृगु ।
छयलपणइ गुण माणइ जाणइ परिमल रगु ॥ ७३ ॥

वउलसिरी मदुभीभल इ भलपणुं अलि राज ।
सपति विगु तगु मालती मालती वीसरी आज ॥ ७४ ॥

चालइ नेह पराणउ जाणउ भलउ सखि भृगु ।
अलग थिउ अति नमण इ दमण इ लिइ रसु रगु ॥ ७५ ॥

चालइ विलसिवा विवरु रे भमरु निहालइ मागु ।
आचरिया इणि नियगुण नीगुण स्युं तुझ लागु ॥ ७६ ॥

केसूय गरबु म तुं धरि मूं सिरि भसलु बइठु ।
मालइ विरहि बहुअ दहु अवहु भणी बइठ्ठु ॥ ७७ ॥

सखि अलि चलण न चापइ चापइ लिअइ न गधु ।
रूडउ दोहग लागइ आगइ इस्यु निवधु ॥ ७८ ॥

भमरि भमतउ गुगु करइ अगरु जि कोरीउ कोइ ।
अजीय रे तीणि वरासडइ वंस विणासइ सोइ ॥ ७९ ॥

मूरष प्रेम मुहातीय जातीय जईय म चीति ।
विहसीय नवीय निवालीय वालीय मडपि प्रीति ॥ ८० ॥

एक थुड वउल नइ वेउल वेउ लता नव नेहु ।
भमर विचालइ किस्या मरइ पामर विलसि न बेउ ॥ ८१ ॥

मकरंदि मातीय पदमिनि पदमिनी जिम नव नेहु ।
अवसरी ले रसु मूंकइ चूकइ भमर न देहु ॥ ८२ ॥

भमर पलास कसा बुला आवुला आविली छाडी ।
कुचभरि फलतकि तरूणीय करुणी स्युं रति माडि ॥ ८३ ॥

इणपरि निज प्रियु रंजवइं मु जवयण इणि ठाइ ।
धनु धनु ते गुणवत्त वसतविलासु जि गाइ ॥ ८४ ॥

बीसलदेव रासो

रचयिता

नरपति नाल्ह

रचना-काल

अनुमानतः १३वीं शती

बीसलदेव रासो

प्रथम खण्ड

हंस-बाहणि मिग लोचनि नारि ।
सीस समारइ दिन गिणइ ॥
जिण सिरजइ उलिगण घरनारि ।
जाइ दिहाडाउ भूरिताँ ॥ १ ॥

गौरी-नदन त्रिभुवन-सार ।
नाद वेदाँ थारे उदर भडार ॥
कर जोडे 'नरपति' कहइ ।
मूषा वाहन तिलक सेंदुर ॥
एक दंतउ मुख झलमलइ ।
जाणिक रोहणीउ तप्पई सूर ॥ २ ॥

'नाल्ह' रसायण रस भरि गाई ।
तुठी सारदा त्रिभुवन-माई ॥
उलिगणाँ गुण वरणताँ ।
कुकठ कुमाणसाँ जिणकहई रास ।
अस्त्री-चरित-गति को लहइ ? ।
एकइँ आखर रस सबइ विणास ॥ ३ ॥

तुठी सारदा त्रिभुवन-माई ।
देव विनायक लागू हूँ पाय ॥
तोंहि लबोदर वीनमुं ।
चउसठि जोगिनि का अगिवाँण ॥
चउथ जोहारूँ खोपराँ ।
भूलेठ अक्खर आणजे ठाइँ ॥ ४ ॥

हँस-बाहणि देवी कर धरइ बीण ।
कुकठ कथूँ बोलूँ कुल हीण ।
तो तूठाँ वर प्रापिजइ ।
भूलउ हो आखर आणि बहोडि ॥
बीसल-दे-रास प्रगासताँ ।
'नाल्ह' कहइ जिणि आवइ हो खोडि ॥ ५ ॥

कसमीराँ पाटणह मँझारि ।
सारदा तुठी ब्रह्म-कुमारि ॥
'नाल्ह' रसायण नर भणइ ।
हियडइ हरषि गायण कइ भाइ ॥
खेलाँ मेल्ह्या माँडली ।
वइस सभा माँहि मोहेउ छइ राइ ॥ ६ ॥

सरसति सामणी तूँ जग जीण ।
हँस चढी लटकावँ वीण ॥
उरि कमलाँ भमरा भमइँ ।
कासमीराँ मुख मडणी माइ ॥
तो तूठाँ वर प्रापिजइ ।
पाप छ्यासी जोयण जाइ ॥ ७ ॥

सरसति सामणी करउ हउ पसाउ ।
रास प्रगासउँ वीसल-दे राउ ॥
खेलाँ पइसइ माडली ।
आखर आखर आणजे जोडि ॥
कर जोडि 'नरपति' कहइ ।
'नाल्ह' कहइ जिण लावइ खोडि ॥ ८ ॥

बारह सँ बहोत्तराँ हाँ मँझारि ।
जेठ बदी नवमी बुधवारि ॥
'नाल्ह' रसायण आरभइ ।
सारदा तुठि ब्रह्म-कुमारि ॥
कासमीराँ 'मुख मण्डणी ।
रास प्रगासो बीसल-दे-राइ ॥ ९ ॥

गायो हो राम मुणै सव कोइ।
साँभल्याँ रास गगा-फल होइ॥
कर जोडे 'नरपति' कहइ।
रास रसायण मणै सव कोइ॥ १०॥

गावणहार माँडइ (अ) र गाई।
रास कइ (सम) यइ वँसलो वाई॥
ताल कई समचइ घूँवरी।
माँहिली माँडली छीदा होइ॥
बारली माँडली साँघणा।
रास प्रगास ईणी विधि होइ॥ ११॥
'नाल्ह' बसाणइ छइ नगरी जू धार।
जिहाँ बसइ राजा भोज पँवार॥
असीय सइहस सजे करि मैंमत्ता।
पञ्च क्षोहण जे कइ मिलइ नरिंद॥
कर जोडे 'नरपति' कहई।
विसुन पुरी जाणे वसइही गोव्यद॥ १२॥

धार नगरी राजा भोज नरेस।
चउरास्या जे कै बसइ असेस॥
राजबेलावल अति घणइँ।
राज कूवँरि अति रूप असेस॥
वेटी राजा भोज की।
ऊनत — पयोहरवाली — वेस॥ १३॥

राजा भोज कइ मिल्यो दिवाण।
मील्या सुर नर इन्द्र विमान॥
राई राणा चहु देसी का।
राणी पूछइँ सुणि राइ नरयद॥
वारइ वहतई आपणइँ।
कुँवर परणावौ, सोझउँ वीद॥ १४॥

पाड्या तौहि वोलावइ हो राय।
ले पतड़ो जोसी वेगो तु आई॥

सूंदिन कहे रूडा जोवसी ।
चतुर नागर ईसउ आण ज्यो चद ॥
सुर नर मोहई देवता ।
जिमि गोवल माँहि सोहइ गोव्यंद ॥ १५ ॥

राजा भोज बोलइ तिणी ठाई ।
चिहुं पड जोवज्यो भूपती राय ॥
तेडउ पुरोहित राव कउ ।
महूरत लगन गिणे तिणि ठाई ॥
कर जोड राजा कहइ ।
राजमती को करउ विवाह ॥ १६ ॥

ले महुरत चाल्योऊ तिणि ठाई ।
चिहु पड जोवज्यो भूपति राय ॥
प्रोहित राजा भोज कउ ।
हियडइ हरिष मनि रग अपार ॥
चद-वदन कइ कारणइ ।
कुण वर वरसी भोज कुँवार ? ॥ १७ ॥

जोयो छै तोडउ जेसलमेर ।
जउओ छइ नयर अयोध्या को देश ॥
ढीली मडल पुणि जोईयउ ।
जउयो छइ मथूरा मंडण राय ॥
एको चित्त न मानीयौ ।
नयणे दीठो तव वीसल राय ॥ १८ ॥

पाड्यो तोहि वोलावइ राय ।
लगन सोपारी लेकरि जाहि ॥
गढ अजमेरा गम करउ ।
चउरो वडमी पपालज्यो पाव ॥
वेटी राजा भोज की ।
राजमती वर वीसल राव ॥ १९ ॥

पाड्यो—प्रधान चल्यो तिणी ठाई ।
गढ अजमेर पहूता जाई ॥

जाई करी राय जुहारीयउ ।
माणिक मोती चउक पूराय ॥
पाव पपाल्या राव का ।
राजमती दीई वीसलराव ॥ २० ॥

हुई सोपारी मनि हरष्यो छइ राव ।
वाजित्र वाजइ नीसाणो घाव ॥
गढ माहि गूडी उछली ।
घरि घरि मगल तोरण च्यारि ॥
चहुआण वस उघरउ ।
जो घरि आवी जाति पमार ॥ २१ ॥

ब्राह्मण समदइ छइ वीसलराय ।
हासलउ घोडउ कुलह कवाई ॥
दीन्हउ सोनउ सोलहउ ।
पाट पटोला वीडा पान ॥
कर जोडे 'नरपति' कहइ ।
पाड्या थोडउ म्हाको रायज्यौ मान ॥ २२ ॥

देइ कुवर चाल्यो तिणि ठाई ।
राजा भाज जूहार्यउ जाई ॥
सुणि हरष्यौ मनि अति घणइ ।
वावै जवारा राजकुमार ॥
चिहुं दिसि नौता मोकल्या ।
पड पड रा आवीया राई ॥ २३ ॥

फिरइ वीनउला राज कुमार ।
पड पड का मील्या खवार ॥
नयरी नइं माढें वीचइ ।
हस्ती पायक अत न पार ॥
भोज तणई नउँतइ मील्यौ ।
जाणे उदयाचल उगइ छइ भाँण ॥ २४ ॥

फिरइ विनउला वीसलराय ।
वाजित्र वाजइ नीमाणो घाई ॥

जीमणवार साजत हुइ ।
कुँ कुँ चन्दन पाका पान ॥
कर जोडे राजा कहई ।
चालउ चउरासी गव की जान ॥ २५ ॥

परणवाँ चाल्यो बीसलराय ।
चउरास्या सहु लिया बोलाई ॥
जान तणी साजति करउ ।
जीरह रगावली पइहरज्यो टोप ॥
घोडा बँसज्यो हासला ।
कडि, सोनहरी, हाथे जोडी ॥ २६ ॥

जान सजाई बीसलराव ।
खेह, उडी रवि गयो लुकाई ॥
कोतिग आव्या देवता ।
कोतिग आव्या इन्द्र विमान ॥
लूण, उतारे अछपरा ।
धनि धनि हो बीसल चहुँवाण ॥ २७ ॥

पूजी विनायक चाल्यो छइ जान ।
चौरास्या सहू दीधउ छइ मान ॥
आठ सेहस नेजा —धणी ।
पालखी वइठा सहस पँचास ॥
हाथी चाल्या दोढसो ।
असाय सेहस चाल्या केकाण ॥
रथ ऊपरि धज फरहरई ।
खेहाडमर नवि सूझइ भाण ॥ २८ ॥

परणवाँ चाल्यो बीसलराव ।
पञ्च सखी मिलि कलस वन्दावि ॥
मोती जा आषा किया ।
कूँ कूँ चंदन पाका पान ॥
अमली समली आरती ।
जाई वधेरइ दियो मिलाण ॥ २९ ॥

जाई बघेरइ दीयो मिलाण ।
बाचउ ब्राह्मण वेद पुराण ॥
मङ्गल गावै कामनी ।
पंच सबद तणतुं झुंणकार ॥
मेघाडमर छत्र सिर दियउ ।
आज सफल राजा जनम ससार ॥ ३० ॥

पाई ककण सिर बधीयो मोड ।
प्रथम पयाणउँ दूरग चीतोड ॥
राता फूदाँ पाटका ।
ब्राह्मण उचरइ वेद पुराण ॥
मगल गावइ कामनी ।
उठीय षेह नवि सूझै भाण ॥ ३१ ॥

परणवा चाल्यो बीसलराव ।
वाज्या ढोल नीसाणे घाव ॥
डोरउ बाध्यउ पाटको ।
पालीय परगह अत न पार ॥
पालखी (की) चाली सात सइ ।
नाल्ह कहइ राव पूरज्यो आस ॥ ३२ ॥

टाटर पाषर सजति कियो राव ।
धार नगरी राजा परणवा जाइ ॥
एक बासउँ औ (र) वाटइ बसउँ ।
उठी प्रभातै मौण वदाई ॥
मेघाडमर सिर छत्र ठयो ।
देश मालगिर चालीयो राई ॥ ३३ ॥

पुर पाटण थी चाल्यो राव ।
बीसलपुर जाई दियो मीलाण ॥
कोट कोटी, कोठी, सामधी ।
पाली परिगह अत न पार ॥
बाजा वाजइ डुवडुभो ।
परणवा चाल्यो बीसलराव ॥ ३४ ॥

सामजि करि उभा रजपूत ।
हरपि नरायण दीधो सूत ॥
कडी सोनहरी झलमलै ।
बाजाहो पलेटा लाबी भूल ॥
पग मचकती मोजडी ।
अर्सष सारहली वाजइ ढूल ॥ ३५ ॥

गढ अजमेरां को चाल्यो राव ।
परणवा चाल्यो भोज कुमार ॥
देस मालागिर गम कीयो ।
राजकुली साथइं तिणि ठाई ॥
धार नगरी नीडा गया ।
डेरा दीवाड्या बीसल-राव ॥ ३६ ॥

देस मालागिर हुवउ हो उछाव ।
राजमती कउ रचउ वीवाह ॥
च्यारि खड जीव नउतीया ।
मिल्या हो चउरासिया अंत न पार ॥
भाट चारण कुण अंत गिणइ ।
विप्र वेदां करे आठ हजार ॥ ३७ ॥

गलइ · ' उभउ छइ देव ।
लावण लाडु परुसज्यो सेव ॥
घृत सत्यासी को मू किज्यो ।
रायभोग मडोवरा मूंग ॥
उभउ राजा सीष दइ ।
जीमइ चउरासिया तुगें तुग ॥ ३८ ॥

माघ पंडित वोलइ तिणी ठाई ।
चउघडयउ बाजइ सीह दुवारि ॥
सामेला की वेला हुई ।
राजी का रजपूत माढो तुषार ॥
मनमानें जे पलाणजइ ।
हिव चालो ठुकराला सामहा जानि ॥ ३९ ॥

राजा कोउ वोल हूवड परिमाण ।
सिरेका ताजी लेहि पलाण ॥
छार दहीय, पलाणज्यो ।
सावहू खेडा नेतरवार ॥
दुदुभी सीग मोचाववो ।
चलता चालज्यो आपण माण ॥ ४० ॥

चल्या ठकुराल्या न लावीय वार ।
भोज तणाँ मिलिया असवार ॥
वीरमदे चढीयो जग-रूप ।
महल पलांरायो ताज दो [न] ॥
खुरसाणी चढी चाल्यो गोड ॥ ४१ ॥

अवर सौ चढि चाम्यो छे भाण ।
कुँवर पलारायो छे केकाँण ॥
ताजी चढीयो खेत सी [ह] ।
पाटसूत दीयो चंद परमार ॥
हस पलारायो वीर जी ।
मेघनादँ चढि उभो राण ॥ ४२ ॥

चढि चाल्यो छँ मीर कवीर ।
खुंद कार तुह्य ढुकेदुक धीर ॥
अमल खलीतो धरि रही ।
भीना पौसत छाड्या, छाणि ॥
उभा बगितारा करइ ।
दोड, सीताव वगनी भरि लाव ॥ ४३ ॥

जाणिक इन्द्र चढ्यो भुवाल ।
खइराड्या आया खुर माँण ॥
गोड चढ्या गज केसरी ।
कछवाह कहुँ नीर - वाण ॥
केई मोलकी साँपलाँ ।
के चावडा केइ चहुवाँण ॥
केई पोची केई देवडा ।
केई गहिलोत सरिस परमार ॥ ४४ ॥

सोनीगरा का हूँ करूं वषाण।
हाडा—बुदी का धणी॥
हूंग्र उजेणी जाई दीयो मेल्हाण।
चउरास्या सहु तिहा मिल्या॥
उढीय छे षेह न सूझै भाण॥ ४५॥

हुऔ साँमेलौ जुहार जुहार।
पान अटागर काथ श्रोकार॥
उतरेव लाड—लावाजीवा।
जान को कटक असीय हजार॥
जाणे उदयाचल ऊलट्यो।
परदेसी जाइ लोपी छइ धार॥ ४६॥

कूंवर चढावती बोलै बोल।
अगर चदन कीजइ षोल (र)॥
भला भला ताजी चढै।
आचरै बीडा पाका पान॥
ऊटा लीजइ आकरा।
चालौय चतुरास्या साँमहा जान॥ ४७॥

धार नगरी आव्यौ बीसलराय।
पच सषी मिली देषिवा जाय॥
मोती थाल भराविया।
माँहि वीजउरउ तिलक सिंदूर॥
अमली समली आरती।
जाणि प्रतक्ष उगीयो सूर॥ ४८॥

बीसल आव्यो धार मँझार।
मन हरषी घन राज-कुमार॥
चाल्यौ सषी करौ आरती।
सकल दिसो जीसो पुनिमचद॥
सुर नर मोहै देवता।
जिम गोवल माँहि सोहइ गोव्यंद॥ ४९॥

धार नग्री आयो बीसलराव।
जानीवासउ दीयौ तिणि ठाव॥

चउरास्या सहु ऊतर्या ।
बाजइ ढोल निसाणे घाव ॥
आडि विनउला संचर्यउ ।
तोरण आवीयो बीसलराव ॥ ५० ॥

देस मालागिर भोज छइ राव ।
राजमती को रच्यो हो वीवाह ॥
जान माहइ नौता फिरइ ।
चउथ ब्रहमपतिवार आदीत ॥
नावी फीरइ उतावला ।
स्वाति नषत्र आठमी परणेत ॥ ५१ ॥

तोरण आव्यो वीसलराव ।
पच सखी मिली कलस वदावि ॥
मोती का आषा किया ।
कुँ कुँ चंदन तिलक सिंदूर ॥
अमली समली आरति ।
जाणिक तोरण उगीयो सूर ॥ ५२ ॥

तोरण आवीयो वीसलराय ।
बर-वेहडा वदावइ नारि ॥
जूसल मूसल वदीया ।
कुँ कुँ चदन अंग विलास ॥
माथै मुकट सोना तणो ।
राजा इन्द्र सभा मोहै कविलास ॥ ५३ ॥

माघ पंडित बोलइ तिणि ठाय ।
हथलेवो वेगो मँगाय ॥
माघ पंडित ईम उचरई ।
ब्राह्मण वेदतणा भुणकार ॥
मगल गावई कामनी ।
राज-कुवर घाली वरमाल ॥ ५४ ॥

माश्रम जोसी देश्रम व्यास ।
माघ-आचारज कवि कालिदास ॥

ए च्यारउ वेद उचरइ ।
चउरी दीसउ मांडहा मांहि ॥
राजमती राखी [या] जी सी ।
इण कुंवरि नहीं त्रिभुवन मांहि ॥ ५५ ॥

माह मास सीय पडै अति सार ।
राजमती धन अनय-कुमारि ॥
देही कण इसार जू तपै ।
राजा सांथ भयउ उगतउ भाण ॥
साथ पंडित वेद उचरई ।
चउरी कुंवर बैसारी हुई आणि ॥ ५६ ॥

पंच सखी मिलि बइठी आई ।
राजा है साथ पूजावण जाई ॥
मोती रा आखा किया ।
कांच सोपारी पाका पान ॥
हर हथलेवउ जोडीयउ ।
जाणिक रुकमिणी मिलीयो कान्ह ॥ ५७ ॥

पाटै बइठा दुइ राजकुमार ।
पहिरी वस्त्र जादर-सार ॥
कान्हे कुंडल आड़ीया ।
सरव सोनारो मुकुट लीलाट ॥
रूप देखि राजा हसई ।
त्रिभुवन माहइ छइ जाति पमार ॥ ५८ ॥

चउरी माहि बइठउ छइ राई ।
पंच सखी मिलि मगल गाई ॥
मोती चउक पुरावीया ।
वाजीत्र वाजै घुरइ निसाणा ॥
चहुवाण वंश उधर्यो ।
जइ घरि आवी जाति पमार ॥ ५९ ॥

देस मालागिर हूवउ हो उछाह ।
राज कुवर को हूवउ विवाह ॥

चन्दन काठ को माडहो।
सोना की चौरी, मोती की माल ।।
पइहलइ फेरइ राय दैडाइचौ।
आर्ली.सर सो देइ कुडाल ।। ६० ।।

दूजइ फेरो जब फेरइ छै राय।
सडु अंतेवर लियो बोलाइ ।।
राजमती .. . .दाडाइचौ।
दीया साधन अरथ भडार ।।
दीयो देस मडोवरो।
समद सोरठ सारी गुजरात ।। ६१ ।।

तीजो फेरो जब फेर्यो छइ राय।
पाट महादे राणी लीई छइ बुलाई ।।
राज कुँवर दाडाइचौ।
दीधा सेभर नागर चाल ।।
तोडा टोक चिछाली छो।
माडल गढ से ऊपर माल ।। ६२ ।।

चउथइ फेरइ जवि दीज्यो छइ थोल।
नीरवाडी का जाचत डोल ।।
हस्यारथ करे चेलकी।
भोज घणा देसी लेइ वहोड।
कहइ समझाई, कर पेलवी।
राजा कीमीव तु मागि चितोड ।। ६३ ।।

कुँवर अवधारइ सूणि साभर्या राव।
वीनती म्हाकी चितह सुहाई ।।
भोज मया कर वीसलराय ।। ६४ ।।

रहि रहि कुँवर न वोली अयाण।
धार सू लछउ मागी उजेणी ।।
मागी चंदेरी, पेडलै।
मार्गां अजोध्या देवता मोड।
ईंद्रनी [उ] पायो आपहइ।
सरग का देवता अलभ चितोड ।। ६५ ।।

धी को बोलनू मानीयो बाप ।
काई न मारी राजा पाई बचन ॥
काई कहैसी सासरइ ।
गाव न उतर्यो हीया थी एक ॥
लका कउ माल परणतै लीयउ ।
थारउ काई होसी ईणी चीतोड विसेष ॥ ६६ ॥

उचितयो राजा बचन दीयो भोज ।
सूणि बाई ! बचन तै कह्या चौज ॥
ज्यानकी लिय पटंतरइ ।
धीय तणइ सिर सोवन मौड ॥
धीय थी सग राजा हुवो, धीय ! ।
इवइ धीहहै धर्मि आपीयो चीतोड ॥ ६७ ॥

परणइ, राजा, बीसलराय ।
माघ पंडित है हुवउ पसाव ॥
बंभण भाट तेडावीया ।
दीधा ताजी उतिम ठाई ॥
दीधो सोनो सोलहो ।
दीधी सुरह सबछी गाई ॥ ६८ ॥

हुई पहिरावणी हरषीउ राई ।
अचल बधी राजकुमार ॥
चौरी चढीयो भोज की ।
वाजइ बरगू भूगल भेर ॥
हुवउ षंधारउ रावलइ ।
धार कउ द्विज चाल्यो अजमेर ॥ ६९ ॥

राजा भोज आयो तिणि ठाई ।
गउरोउ जीमाज्यो छै वीसलराय ॥
चउरास्या सहुको मील्यौ ।
पालो परिघउ सयल असेस ॥
पहिरावणी राजा करइ ।
दे वर-दषीणा लागइ छइ पाय ॥ ७० ॥

सासू जूहारवा चाल्यो छइ राई ।
बाजित्र बाजैं निसाणे घाई ॥
कुलीय छत्तीसइ साथ छई ।
माणिक मोती भर्‌या नारेल ॥
भाणमती आसीस दइ ।
अविचल राज कीज्यो अजमेर ॥ ७१ ॥

मोकलावी छइ भोज कुंवार ।
दीधी दासी सहस दुई चारि ॥
दीधी वाला पालषी ।
दीधा हाथी उतम ठाई ॥
कुँवर बलावे बाहुड्‌या ।
राजमती मूकलावा सुभाई ॥ ७२ ॥

राजमती मुकलावी सुभावी ।
सारी जान माहइ हुओ हो उछाह ॥
सुणी प्रधान राजा कहई ।
मोहि तुठो छइ सिरजणहार ॥
आषर लिखाया वेहका ।
जाइ सूखासण वइठो छइ राय ॥ ७३ ॥

अथेरापति चढि चाल्यो राय ।
लो अस्त्री अरधग वइसाय ॥
ज्यूँ ईश्वर सँग गोरज्या ।
चहुवाण बस हुव [उ] उछाह ॥
राजा कहइ परधान सुं ।
गढि अजमेर पहुँता जाई ॥ ७४ ॥

दीठउ आनासागर समंद तणी वहार ।
हंस-गवणी मृग-लोचणी-नारि ॥
एक भरइ बीजी कलिरव करइ ।
तीजी घरी पीवजे ठडा नीर ॥
चौथी घन सागर जूं घूलई ।
ईसो हो समद अजमेर को तीर ॥ ७५ ॥

"पूरब देस को पूरब्या लोक।
पान फूला तणउ तु लहइ भोग।
कण सचइ कुकस भखइ।
अति चतुराई राजा गठ ग्वालेर॥
गोरड़ी जेसलमेर की।
भोगो लोक दक्षण को देस॥ ११॥

जनम हुवउ थारउ मारू" कइ देस।
राज कुवरि अति रूप असेस॥
रूप नीरोपमी मेदनी।
आछा कापड भीणइ लंक॥
ललयागी घन कूंवलो।
अहिरघ वाला, निर्मल दत॥ १२॥

कूंवर कहई"सुणी! साभन्या राव!।
काई स्वामी तु उलगई जाई?॥
कह्यउ ह्मारउ जइ सुणउ।
थारइ छइ साठि अतेवरी नारि"॥
कर जोडे धन वीनवइ।
"राजकुवरी निति भोगवि राय"॥ १३॥

रावइ कहइ "सुणी! राजकुमारि।
दूमनी काई हीयउइ बर नारि॥
कह्यउ ह्मारो जउ सुणइ।
आणि सू कोडि-टकाउल-हार॥
देस उड़ीसइ गम करू।
जाई जुहारू जादवराई"॥ १४॥

'रहि रहि राव ओलगी तू जाई।
माहरी गइली तु करह पठाई॥
जाईस पीहर आपणइ।
आणिसु अरथ नइ दरब भडार॥
आणिसु हीरा पाथरी।
माडव सरसीहु आणि सूं धार"॥ १५॥

"रहि रहि मूरख न बोलि अयाण ।
कउण देसी तोहि मडव धार ? ।।
कहउ हमारउ जै सूणइ ।
जइ घणा रइहस्या तो मास वि च्यार ।।
देव जुहारे आवस्या ।
आवौऊँ सासपसार मा राजकुमार ।। १६ ।।

मइ धणो ! थार मिल्हीय आस" ।
"मइला राजा थारउ कीसउ हो वेसास ।।
तो हू दासी करि गीणी ।
सगा सुणी जी माहि ना गमीमा ।।
जीवत ही मुआ वडइ ।
बालूं लोभी हू थारा दाम" ।। १७ ।।

"कडवा वोल न बोलीस नारि ! ।
तु मो मेल्हसी चित विसारि ।।
जीभ न जीभ विगोयनो ।
दव का दाधा कुपली मेल्ही ।।
जीभ का दाधा नु पागूरई" ।
'नाल्ह' कहइ सुणाजइ सव कोई ।। १८ ।।

पच सखी मीली वइठी छई आई ।
"निगुणी ! गुण होई तो प्रीव क्यु जाई ? ।।
फूल पगर जू गाहजइ ।
थारउ आचल वध्यो नाह कु जाई ? ।। १६ ।।

"गई नही, सखी ! भइस पीडार ।
अस्त्रीय चरित्र उलिपई ही गवार ।।
लाख चरित्र आगइ मइ कीया ।
चोली खालि दीखाल्या छइ गात ।।

तउ पती न उवालहो ।
नीहचइ सषी ! ओलिग जाईण हार" ।। २० ।।

पौलि वडी प्रीय वइठउ छइ खाट ।
आगणी तुरीय पलाराया छइ धाट ।।

"कमल-वदन बिलखी हुई।
अगइ दाह न हियै वैराग॥
कामनि अंग न आलगैंह।
बरस दोई स्वामी उलगि निवारि"॥ २१॥

राई कहई "सुणि हो पडीहार।
वेगि पलाण भलाई तुषार॥
चचल चपल पलाणजइ।
ईसा तुरीय दीठा तिणि ठाई॥
कर जोडी धन वीनमइ।
"मुह मरी नीसर कै औलगि जाई"॥ ३२॥

राव कहइ "सुणि राजकुमार।
दूमनी काई हीयडइ वरनारि॥
कह्यो हमारउ जै सुणइ॥
येक बार रहस्युं खटमास॥
देव जुहारे आवस्युं।
ते छइ त्रिभुंवन-मुगति-दातार"॥ २३॥

राई कुवरि बोलइ ईक चिंत।
बीप्र हुकारे वेग तुरत॥
आवीयो प्रोहित राव को।
"पाड्या ? हु थारे गुणदास॥
देई सचा वर वरसणइ।
महूरत देई वीर ! कातिग मास"॥ २४॥
"पाड्या ! वीरा ! हूँ थारी गुण दास।
दिन दस महूरत मौडउ परगास॥
मास एक वीलवावज्यो।
दूजइ फेरई प्रयि समभाई॥
देसइ हाथ कउ मुंदड़उ।
सोवन-सिगी नई कपिला गाई"॥ २५॥

पाड्या ! तोहि वोलावइ छह राय।
ले पतडो जोमी वेगो आई॥

सूदन कहै रूडा जोईसी ।
वाचइ पतड़ो बोलइ छइ साँच ॥
मास एका लगी दिन नही ।
तिथि तेरस वार सोमवार ॥
चंद्रई ग्यारमी देव है ।
तीसरो चद्र छइ खोडीला"—जोगि ॥
काल जोगण भद्रा नही ।
पुष नक्षत्र नई कातिक मास ॥
जीण दिन स्वामी थे गम करउ ।
ज्यु घणी आगइ पूरइ हो आस" ॥ २६ ॥

"पाड्यो कहु कइ परतिष (इ) भांड ।
झूठ कथइ छइ नै बोलइ छइ माड ॥
राज—कुली महूरत कीसउ ? ।
म्हा तो ओलग चालस्या आज ॥
कह्यो हमारउ जोसी ! जइ सुणई ।
जाइ उडसिई पूजू जगनाथ ॥ २७ ॥

पाड्या हू तो ओलग जाऊं ।
जाई उडीसेइ वात कहाउ ॥
कह्यो हमारो जइ सूणइ ।
मो हइ घर की गोरडी कह्यो कुबोल ॥
मोहि न मंदिर आलिगइ ।
जाइ उडीसइ तइ राखस्यु बोल ॥ २८ ॥

"आव दमोदर वइसि नु पाट ।
कहि न वीरा म्हा का पीउ की वात" ॥
"घरौ हो अयाणउ उफिरई ।
आठमो ठाव रवि वारमो राहु ॥
ग्रह गणतो अतिहि वीरा" ।
सिर धुणी मूका छइ धाह ॥ २९ ॥
"दासी होई करि निरवहु ।
पाय पपारसु ठोलसु वाई ।

पुहर पुहर प्रति जागसु ।
इण हर सेवस्यु आपणउ नाह" ।। ३० ।।

"गहिली है,त्री तोहइ लागी छई वाय ।
अस्त्रीय ले कोई उलगि जाई ? ।।
गहिली मु भ्रउ तुं वावली ।
चद क्यु कूडइ ढाकाणउ जाई ? ।।
रतन छिपायो क्युं रहई ? ।
आंगह वाचा कोहीणो छइपूरव्यो राइ ।। ३१ ।।

चालइ उलिगाणा, धन जाण न देहि ।
"कै मोहि मारि, कइ साथि तु लेहि" ।।
अचल गहतै धन रही ।
एक इकेली जोवन—पूर ।।
सूनी सेज वीदेस पीउ ।
दुइ दुख 'नाल्ह' कहइगो कूण ? ।। ३२ ।।

"छोडि अंचल धन मोहि दइ जाण ।
वरस दोय रहुँ तो देव की आण ।।
"कठिण पयोहर दिव करूँ" ।
हसि करि गोरी पूछइ छइ नाह ।।
"ए दिव (स) छइ पीउ ! आकरा ।
ईण दिव थी सुर नर हुआ छार" ।। ३३ ।।

उलिगाणां दिन लेषइ मत लाई ।
दिन दिन एक लषी णौ जाई ।।
जाई जोवन, धन मसलै हाथ ।
जोबन नवि गिणइ दीह ने राति ।।
जोवन राख्यो नु रहई ।
जोवन प्रिय विण होसीय छार ।। ३४ ।।

मे घणी ! थारी मेल्ही आस ।
जोगणी होइ सेवुं वन वास" ।।
"कइं तप तपु हु वाणारसी ।
कइ जाइ भेरव पउण पड़ाई ।।

कइ पडव पथ सचरू।
कइ जाय सेवसू गग-दूवार॥
कह्यउ हमारु जइ सुणइं।
उलग स्वामी! परियजी वार" ॥ ३५ ॥

उलगी जाण सजी समदाव।
हंसि कर गोरी पूछइ राव॥
'मात वरस पेहलो रह्यो।
चौरी जणंह न मोकल्यै कोई॥
लाहो लेता जनम गो।
तुय करै तिसी तोथी होई" ॥ ३६ ॥

अंचल गह तिय वइसा डी छइआणी।
हंसि गल लाई भोजी सो काण॥
आज ऊलंभोउ भाजवा।
"या धनवीरा! थारइ हियें न समाई॥
कै या, वोल की आकरी?।
कौणे दुख देवर! उलग जाई" ॥ ३७ ॥

उभी भावज दइ छइ सीष।
"रतन कचौलो राय सापजै भीष॥
ते नाउं पंगसू ठेलीजै।
इसी न रायां तणो नहीच अवास॥
ईसीय न देवल पूतली।
नयण सलूंणा वचन सुमीत॥
ईसीय न खाती को घडइ।
इसी अस्त्री नही रवि तलै दीठ" ॥ ३८ ॥

उभी भावज सीह-दुवार।
"सौलहो सोनो राजा काइ करो छार?॥
मरण जीवन छै पग तलइं।
कनक कचोली उरी भयो मार"॥
"हेडउं का तुरीय ज्युं।
तुये दिन दिन हाथ फेरनइ सौ वार" ॥ ३९ ॥

"रही ! रही ! भावज वचन तूं बोल ।
राज-कुंवर मोहइ कह्यो हो कुबोल ॥
मोहि रयणी दिन (न) बिसराइ ।
राज कुंवर आवे जो साथ ॥
तो विस खाये मरू ।
बारह बरस पूजू जगनाथ" ॥ ४० ॥

पच सखी मिली बइठी छइ आण ।
"अरथ दरब लिया जीव की हाण ॥
तोहि बूरो धणी मौ वीरौ ।
तोहि बूरो थारो घरि जाई ॥
अरथ दरिव गाड्यो रहई ।
जीण सीरज्यो होई तेहीज खाय" ॥ ४१ ॥

राजमती ! तुं भोज कुमार !
तो सम त्रि नही ईणौई ससार ॥
यान समारो टाहुली ।
चोवा चदन अग सुहाई ॥
सेज पहुती राव की ।
देही आल्यगन बीसलराय ॥ ४२ ॥

'चटकला, मटकला मोही न सुहाई ।
धन कइ हीयडइ हाथ न लाई ॥
हाथ न लाई प्रीय स्त्री-मरम मा ।
निर्गुणा ! थारौ कीसौ ही वेसास ॥
करकी बाघू हु दिन गिणू रोवती ।
मेल्ही काई [तू] ओलगि जाई" ॥ ४३ ॥

कूंवरी कहई "सुणी ! साभस्या राव !
सीस हर पूनम पूरो हो जाई ॥
कला संपूरण भोगवइ ।
चोवा चदन तिलक सोहाई ॥
चरित्र चउरासी हू आलवू ।
विल विलती काई मेल्हे जाई" ॥ ४४ ॥

"आज सखी मोहि विहाण।
पीडवा कइ दिन कहइ छइ जाण ॥
"आज नीरालइ सीय पड्यो।
च्यारि पहूर माही नू मीली अख ॥
उछइ पाणी ज्यूं माछली।
जिव जागु तिव उठुछुं झपि ॥ ४५ ॥

वीज अध्यारी नइ सुक्रजोवार।
महूरत नहीया कहइ वर-नार ॥
महा–उपग्रह उपजइ।
जे नर उलग ईण महूरत जाई ॥
आवण का सासा पडई।
जाणि हीमालइ राजा गलीथा हो जाई ॥ ४६ ॥

तीजें घरि घरि मगलचार।
चिहुँ दिसी कामनी करई हो सयंगार ॥
रमइ सहेली काजली।
घरि घरि कामिनी मडइ छइ खेल ॥
चद्र वदन विलखी फिरई।
स्नेह तुठी राजा औलगी मेलही ॥ ४७ ॥

"चउथ अधारी [दि] नई मगलवार।
चन्द उजालउ घरि घरि बारि ॥
वरति करइ घरि आपणइँ।
चउथ जुहारउ सामर्या-राव ॥
वचन हमारउ मानज्यो।
हरिष के पूजो ईणी ठाई ॥ ४८ ॥

पंचम कउ दिन पहूतो छइ आई।
अउत होइ घरि छोडो हो राय ॥
तु अजमेरा राजीयो।
पुत्र कुलत्र सहू परिवार ॥
सईभर थाणउ वइसणइं।
राई चहुवाण ! औलगि नीवार" ॥
"रही (रही) कामणी अचल छोडी।
औलग जाऊं हूँ अऊ न वहोडी ॥

देस उडीसइ गम करूँ" ।
ये वचन बोल्या तिणि ठाई ॥
छउ सातम दिन आवीयो ।
निहचइ औलगि चालण-हार ॥ ५० ॥

राज-वचन सुणि राजकुंमार ।
पल्यग छोडि धरती पडी नारि ॥
बेटी राजा भोज की ।
उठई उछकि लेइ अकमाय ॥
कर जोडे 'नरपति' कहइ ।
सातम को दिन रहीयो हो राव ! ॥ ५१ ॥

चद्र-बदन दीठी घन नाह ।
सीस हरण जाणे गलीयो छइ राह ॥
आसू ढाल्या मोर ज्यूँ ।
कामनी कंत मिल्या तिणी ठाई ॥
आठमकउ दिन आवीऊ ।
बरत करइ घरि बीसलराइ ॥ ५२ ॥

नवमी घरि घरि मगल होई ।
घरि घरि पूज करइ सब कोइ ॥
नव दिन पूंगा नउरता ।
बलि वाकुल पूजा रचौ ठाई ॥
भोग लीयइ जगदीस्वरी ।
ईण परिपूजइ छइ बीसलराय ॥ ५३ ॥

दसराहा को दिन पहुँतो छइ आई ।
तुरीय पलाराया छइ ठार्य हो ठाई ॥
चउगास्या सहू आवीया ।
बाजा बाजहि घूरइहि निपाण ॥
राई अहेडड चालियो ।
उडीय खेह नइ मूझई भाण ॥ ५४ ॥

हर-वासर दिन पहुतो छइ आय ।
चंद्र-बदन धन लागइ छै पाय ॥

वरित करु घरि आपणइ।
पारणो कीधो द्वादशी जोग॥
दोई दिन स्वामी थे विलवज्यो।
तेरस कइ दिन करज्यो हो भोग॥ ५५॥

चवदश वरत करई भूपाल।
सामही छीक हुणंइ कपाल॥
चउरास्या सहू बोलीया।
सउण विचारैं वीसलराय॥
कुशल ओलगि करि वाहुडा।
अमावस को दिन पहुंतो छइ आय॥
पीतरपड भरावइ छइ राई।
आव्यो प्रोहित राव को॥
सराध मराव्यो वीसलराय।
भोजन भगति राणि करइ॥
आगलि वइसि जिमायो छइ नाह॥ ५६॥

"रहि रहि कामणि प्रीत नु मड।
उलगि जाउ पहुवि घर छडि॥
राज राज मुका सैभर तणो।
सेवइ राजा सयल परिवार॥
कुसल उलग करैं वाहुड्या।
जव लगि रूडा रहज्यो नारि"॥ ५७॥

"साभलि वात कहु सूणि नाह।
वरम एक तू ओलग नु जाह॥
उलग कहीय छइ एकला।
दूजण मरिस कहइ घर वास॥
राजा रिधि छइ आपणइ।
ईण परिपूरजई मन की आस"॥ ५८॥

"ओलग जाण की खरिय जगीस।
राज-कुंवर धन देसउ सीख॥
राज माहंइ ईणि परिरहई।
राज चलावकै और परमान॥

ईण सुं विरोध नहुं वोलिजइ।
नावी म साहणी सुघराई मान ॥
दासी सरिसा झिणा हंसोउ।
सूनइ रावलइ तु मती जाई" ॥ ५६ ॥

"उलग जाण की परीय तो सार।
राजनी गति जिसो षडानि धार ॥
मूरख लोक नू जाणही।
चोर जुवारि अनइ कलाल ॥
ईण सू हंसि न वोलज्यो।
राजनि उइ भीतरी गोढ ॥
कान निडा पग दुर रहा।
मुहडा आडो दीजो हाथ ॥
साची झूंठी मत कहइ।
राज-सभा माहि साची वात" ॥ ६० ॥

साधन ऊभी टेकि किवाडि।
रतन-कुंडल,[के]सिर तिलक लीलाड ॥
जाल जलाखो——गोरडी।
सोवन पायल पय झलकति ॥
रतन जडित सिर राखडी।
सवि गति वीसरी थारी च्यत ॥
रात दिवस चालण कहइ।
नित दिन उगती भाखु दीनतो ॥ ६१ ॥

आडो वोल खरौ पछिताय।
नाह वोलावउ धन कवण मुखि जाह ॥
मइ काई नवि वोलियो।
देवर मनावई अरी वडो जेठ ॥
हरि पूजो होइ वाहुडो।
हुइ गोरी मु छेहली भेंट ॥ ६२ ॥

आचली गैहती वइमाढी छइ आण।
हँसि गल लाइ नई भाँजिय माण ॥

सा धन रोवइ पीवसु ।
"गिरवरधणी । तइ नु राखी मान ॥
यक सरा घर आवज्यो ।
था विण नीहृचइ होई घरि रान" ॥ ६३ ॥

"उठी । उठी । गोरी करि सिंगार ।
लाखणउ काँचवउ नवसर हार ॥
पहिर नु चोली नवरगी ।
बावन चन्दन अग सउहाई ॥
चित फाटा मन उचस्या ।
रूठी गोरो रहइ गलिलाई ॥ ६४ ॥

लाव डग हेला हेला उठिवार ।
आगणई तुरीय पलाराया छै वार ॥
पैहर न आछी चूनडी ।
कुं कु चन्दन खौल कराई ॥
उठी सवारा चालस्या ।"
गाढी रोई गोरी गलिलाई ॥ ६५ ॥

तूरी सभा बइठो साँभर्‌यो-राव ।
चउराम्या सहू लीयो बोलाई ॥
माई तेडावी राव की ।
सवी मिली मत्र कियो तिणि ठाई ॥
कहेउ हमारउ जइ सुणो ।
"कोक भतीजौ सूंपजए राज" ॥ ६६ ॥

राइ कहई "भली हुई आजि" ।
कोकि भतीजौ सौंप्यौउ राज ॥
थाप्या साहण वर तुरी ।
थाप्या मदिर घरि कविलास ॥
थाप्या चौरा चउखडि ।
थाप्या माभरि का रीणवास ॥
राजा चाल्यो उलगइ ।
सहू अतेवरी मेल्ही नीसास ॥ ६७ ॥

ओलग चाल्यो धन कउ नाह ।
सहू अतेवरी भूरई राउँ ॥
भूरई महोवर राव का ।
कुली छतीसइ भूरइ सोही ॥
धार भूरई राजा भोज सू ।
साभर्या राव सो पड्यो विछोह ॥ ६८ ॥

भूरइ राइ वइहनंडी अकन कुंवार ।
महाजन भूरई राई साँघार ॥
माता भूरइ राव की ।
भूरइ बभण भाट बीयास ॥
येकइ बोल कइ करिणाइ ।
चाल्यो राजा मेल्ही निसास ॥ ६९ ॥

चाल्यो ठाकुराला पलाणि ।
सावकरण दियौ वीरभाण ॥
हसंवाहण ऊदइ-स्यगहइ ।
गगाजल अचला चहुवाण ॥
भूतोभेरव. . भाट कइ ।
काली कठ दीयो वछराज ॥
कोडीधज चढऊ देवजी ।
वइरीसाल दीयो अषइराज ॥ ७० ॥

अभयचंद दियो राई पंख ।
सकत स्यघहै दीयो नीलटो हस ॥
मोतीचुर नगराग—हइ ।
रायमहल दीयउ छइ कलियाण ॥
भमर पलागायो देव-हइ ।
सेहस—कला जगदे-परमार ॥ ७१ ॥

ग्रीय नोउ चाल्यो तुरीय पलाण ।
मीगणि जोडलीया कग्विाण ॥
आमण—पडउ झलभलई ।
मोचडी घाली अणीयाला-सेन ॥

चढि घोडी लीयउ चाबकउ ।
साधन गयो विललंतीय मेल्हि ॥ ७२ ॥

चाला चउरास्या न लावी छइ वार ।
आडी आवज्यो इंधणहार ॥
होज्यो देवी जीमणी ।
वूड मल्हा लोवा सीय-माल ॥
चाल्यो राजा जाई भोवाल ॥ ७३ ॥

"सहस-फणालइ काल भूयग ।
जीमणा थी उतरउ वामेइ अग ॥
रुपि-चगा, विस-आगला" ।
दोय कर जोडँ वीनमैं मुख ॥
"उलिगणउ घरि राखज्यो ।
जु म्हा को प्रीय पाछौ वाहुडइ ।
सोवन कचौली तोही पावस्यु दूध ॥ ७४ ॥

लावडो, हरणइ, सिह, सियाल ।
पईन समीहोज्यो लोवा, सीयमाल ॥"
धन हरिणाखी ईम कहई ।
"निहचई औलग चालणहार ॥
डावउ करेवउ करकरइ ।
महा आपसूकन होज्यो ए ! भुवाल" ॥ ७५ ॥

चाल्यो उलीगाणो नग्र मझारि ।
आडी आवज्यो ईधणहार ॥
साँड तडूकज्यो जीमडइ अंग ।
सामही जोगणी काल भुयग ॥
वाट काटे मजारडी ।
सामही छीक हुणई कपाल ॥
आडी नुकडी आवज्यो ।
गोरडी कउ प्रीय पाछो हो वाल ॥ ७६ ॥

"नीर पर्वति गोरी ! कइ चलइ पाय? ।
गंग अपूठी क्युं वहई ? ॥

ध्रत्तारो कम छडइ ठामि ? ।
सूरज पछिम किम उगमई ? ॥
उलीग चालता क्यु रह्यो आजि" ? ॥ ७७ ॥
डावा सारस पहुवि सियाल ।
जीमणी होज्यो हरिण की माल ॥
डावी देवी बोली तिणि ठाई ।
डावो साड तड़कतो जाई ॥
पूरण—कलस साम्हो हुव्वो ।
सुकन सूणी हरीष्यो मन माहि ॥
चढि मदर धन जोइयो ।
कूसल ओलग करि आवे राव ॥ ७८ ॥
छोडइ छइ तोडउ नइ जेसलमेर ।
गोरडी मेल्ही गढ अजमेर ॥
छाड्यो नयर बिछाल छौ ।
छाड्या साभरि का रिणवास ॥
येक बलावे बाहुड्या ।
नाह उतरीगो नदीय बनास ॥ ७९ ॥

नाह उतरीगो नदीय बनास ।
नारि का नाडि तू, हीयउ नै सास ॥
धन भोमूती भुइ पडी ।
चीर सभाल्या नु पीवई नीर ॥
जाणे हीयणइ हरणी हणी ।
ओको गात उघाडिज्यो जोवन पूर ॥ ८० ॥
लाघी चावल पीलो हो खाल ।
डावी देवी जीमणी [सिय] माल ॥
डावी महासत्ति फैंकरई ।
डावा सारस स्यघ, सियाल ॥

उठइ तुरीय खू दावई वीसल-राव ॥ ८१ ॥
साठ तुरीय पाखर्या सजुत ।
जाई परभोमई सचर्यो ।
कोई न जाणइ साभर्या-राव ॥

उलिगणाउं होई संचर्यो।
देस उडीसइ पहुता जाई॥ ८२॥
राव उडीसइ पहुतउ जाई।
देव जुहारे लागुं पाय॥
धन दिहाडउ आज कउ।
देव उठि दीयो चउगिणउ मान॥
मेल्ही चावर बइसणइ।
राव उडीसा को परधान॥ ८३॥
राई प्रधानपणइ रह्यो जाई।
चउरास्या सहू लागइ पाय॥
देश देसा का राजिया।
देव कहइ "राजा! म्हारो तु वीर"॥
मेल्ही चावर वइसणइं।
मनवछित भोजन अर चीर॥
जे नर सूनइ संवाद संजूत।
अविचल लिषमी धरे राज वहूत॥
'नाल्ह' रसायण नर भणइ।
छू राणी सूं पडइ विजोग॥
वीघन-हरण जो वर दीयो।
पणिहु वहोडू करूँ संजोग॥
दूजौ षड चय्यो परिमाण।
जे नर सूणइ ते गगा न्हाण॥
'नाल्ह' रसायण नर भणइ।
राजा रह्यो उडीसई जाय॥
वाग-वाणी मो वर दीयो।
अस्त्री-रसायण करू वखाण॥ ८६।

॥ इति द्वितीय खण्ड॥

तृतीय खँड

प्रीय बोलावै धन रोवती जाई।
सूनउ मदिर मेल्हइ छै धाह ॥
सा धन कुरलइ मोर ज्युं।
पाच पडोसण बैठी छइ आय ॥
"ओ निसतार्‍यो ज्या करि गयो।
दिवसनइं रात मौ चिताता जाई ॥ १ ॥

पंच सखी मिलि वइठी छइ आई।
काहरऊं पीवौ न ऊषद खाई ॥
दात कष्ट वंध्यो गोरडी।
तो थी भली दमयती नारि ॥
नल राजा मेल्हे गयो।

पुरीष समौ नही निगुण ससार" ॥ २ ॥
"रहि रहि वेहनड़ी ! वच न-तू रोई।
ले लीटीका जल मुख धोई ॥
फठि रे हिया ! नीवालूवा।
पाथरी घड़ी यो, कै श्रीघट लोह ॥
झर्‌यझलीयो फूटइ नही।

सगुणा प्रीतम तणो विछोह ॥ ३ ॥
त्री जनम काई दीयौ हो ! महेस ?।
अवर जनम थारे घड़ा हो नरेस ॥
रानह न सिरजी हरिणली।
सूरह न सिरजी धीणु गाई ॥
वन षंड काली कोईली।
बइसती अंब कइ चप की डालि।
वइसती दाख बीजोरड़ी।

इणि दुख झूरइ अबला बालि ॥ ४ ॥
"आज सखी सपनतर दीठ।
राग चूरे राजा पल्यंगे वईठ ॥
ईसो हो झझारो मइ झंषीयो।
जो हू सोहीणइं जाणती साँच ॥

हठि कर जातो राखती ।
जब जागुं जीव पडी गयो दाह" ॥ ५ ॥

तोडर पायल पइहरणौ पाय ।
सोवभ–घूंघरी वाजती जाई ॥
रतन जडित की कांचली ।
औ कसी कचूवउ परउ हो सुमीड़ ॥
दन्त दाड़िम-कुली जी सी ।
मुखी अमृत, जाणे वाजै कै वीण ॥ ६ ॥

ससि-वदनी जीत्यौ मात-गयद ।
आपड़ीया . . ... .रतनालिया ॥
भौंहरा जाणे भमर भमाय ।
मूंग–फली, सी आगुली ॥
कूसम–कली, कर–नख जीसा ।
कनक कुंडल धज सोहइ कान ॥
राय—आगणि राणी फिरई ।
उणो सोलइ सइ रांणी कउ ऊतार्‌यो मान ॥ ७ ॥

"प्रीय तो चालीयो कातिग मास ।
सूना मंदिर घर कविलास ॥
सूना चउरा चोखण्डी ।
नयण गमायो पथि निर जाई ॥
मूख नही त्रीस ऊछली ।
उणी घडा नींद कहा थी होई ? ॥ ८ ॥

आघण कर दिन छोटा होई ।
सषी ! सदेशो मोकलोऊ कोई ॥
सदेसाहि ववज पड्यो ।
लाघ्या पर्वत दुर्घट-घाट ॥
परिदेमा परि—भूमि गयउ ।
वीरी जणह न चालइ वाट" ॥ ९ ॥

'देखी सखी हिव लागै छइ पोस ।
धन मरती मति लावउ हो दोस ।
दुख भीनी पजर हुई ॥
धान न भावई तिज्या सरि न्हाण ।

छाहणी धूप नू आलगई ॥
कवियक भूपडा होई मसाण" ॥ १० ॥
"माह-मास सी पड्यो अति सार ।
जल थल-महीयलं सहू कीया छार ॥
आक दयंत्ता बनदह्यो ।
चोली माहि थी दाधउ छइ गात ॥
धणीयनतका धण ताकजे ।
तुरीय पलाणि वेगो घरि आव ॥
जोवन छत्र ऊँचाईया ।
ईणि कंत ? काया मांहि फेरी छइ आण ॥ ११ ॥
'फागुन फरक्या कप्या रूष ।
चित चमकी नीद न भूख ॥
जूं जोवन जूहै सखी ।
मूरिख लोक नूं जाणइ ससार ॥
दिण परषौ दिस पालटइ ।
सखी बाब फरूकती जाइ ससार ॥ १२ ॥
चैत्र मासा चतुरंगी नारि ।
प्रीय विण जीवू कवण अधार ? ॥
चूडे भीजै छण हसौ ।"
पच सखी मिली बईठी छइ आई ॥
'दत कवाड्या नह रग्या ।
चालउ सखी होली खेलवा जाई' ॥ १३ ॥
सूणी । सहेली कहु ईक बात ।
महाहरइ फरकइ छइ दाहीणो गात ॥
आज दीसई ते ईक दिन माहि ।
म्हा क्यु होली खेलवा जाई ? ॥
ऊलीगाणां की गोरडी ।
म्हा की आँगूली देखता गिलजे बाँह" ॥ १४ ॥
"वैशाखा सखी ल्हग्गुजे धान ।
सीला पाणी पाका पान ॥
कनक काया घट सीचजै ।

मूरिख नाह न् जाणे [स] सार ॥
हाथि लगामी ताजिणौ ।
पार कइ सेवइ राज-दुवार" ॥ १५ ॥

"देखि जठाणी ! लागौ छइ जेठ ।
मूखी कुंमलाणौ अरि सूकइ छइ होठ ॥
सनेहा सारण वहई ।
धरती पाई न देणउ जाई ॥
अनवलई दव परजलई ।
हंस सरोवर छड़इ छइ ठाइ ॥ १६ ॥

"घूरि अषाढ धडुकया मेह ।
खलहल्या षाल्या, वहि गई खेह ॥
अजी न अमाठा बीहुड़्यो ।
कोईल कुरलइ अब की डाल ॥
मोर तडूकइ सीखर थी ।
माता-मइगल ज्यु पग देई ॥
सदी मतवाला ज्युं घलई ।
तिणी घरी ओलगी काई करेसतो ? ॥ १७ ॥

श्रावण वरसइ छइ छाडीय धार ।
प्रीय विण खेलइ कवण आधार ॥
सखीय ते खेलइ काजली ।
चीडीय कमेडी मडिय आस ॥
पपीहो पीऊ ! पीऊ ! करई ।
सखी असलसलावइ मौ श्रावण मास" ॥ १८ ॥

भादवउ वरसइ छइ मगैहर गभीर ।
जल, थल, महीयल सहू भर्‌या नीर ॥
जाणे सरवर ऊलटइ ।
एक अधारी वीचखी वाय ॥
सूनी सेज विदेश पीव ।
दोई दुख 'नाल्ह' क्यु सइंहणा जाई ॥ १९ ॥

आसोजा धन मडीय आस ।
माड्‌या मंदिर घरि कविलास ॥

माड्या चौरा चऊखंडी ।
माड्या गाभरि का रणिवास ॥
एक बलावं वाहड्या ।
"नाह उतरी गयो गंगा के पार" ॥ २० ॥

अमी बरस की हो वूठि वेगि ।
दांत कवाड्या सिर पाडूग केस ॥
आई अवासा सनरी ।
गलि लागइ नै रूदन करई ॥
"किम भव नीगमीस कामिनी ? ।
राति दिवस मो थारीय चित ॥
कह्यउ हमारउ जउ करउ ।
तोह नइकाईगो पटवो करि देउ मीत ॥ २१ ॥

"उठि ! उठि ! गोरी करि सींणगार ।
गलि पइहरउ मोतीय को हार ॥
नाग-फणा का तइ कली ।
छोटि कसण पयोहर खीचौ" ॥
"प्रीय म्हा कउ चाल्या उलगइ ।
जु हु जोवन राखू सची" ॥ २२ ॥

इतो कहे जब चाली छइ ऊठि ।
ले पाटो अरि पटकी छइ पूठि ॥
"नाक पाट फडाउ हू कूटणी ।
ते तू देवर अरी वडो जेठ ॥
जीभ काटु जीणी वोलियो ।
थारो नाक सरीखा ऊपलो होठ ॥ २३ ॥

सासु कहइ "वहु ! घर माहि आव ।
चद कइ भोलइ तोहि गील्लसइ राह ॥
चद पूलाणो वनी गयो ।
खीर की तोलडी कुं रहइ सेर ॥
धणी थाका धन ताकजइ ।
राव ऊडीसइ तु अजमेर" ॥ २४ ॥

"जै कै घरि हरिणापी नारि।
तो किम भमइ पार कइ वारि ? ॥
कइ मूवा कइ मारिया।
बलेन पूछी धन की सार ॥
नयण ते सारग होइ रह्यो।
धन मरती नवी लावइ वार" ॥ २५ ॥

राव उडीसह रहीयो जाई।
राजमती अजमेरा माहि ॥
दस वरस ईम नीगम्या।
वरस ईग्यारमउ पहतऊ आई ॥
राजा अजु न वाहुड्यो।
तेडो ब्राह्मण जण [ह] पठाई ॥ २६ ॥

कातिग मासा जण [ह] चलाई।
कोरो कागल गुपती लीखाई ॥
आप हस्त लिखे गोरडी।
जिम जिम वाचइ तिम तिम चेत ॥
धणी उपाहौ उलगइ।
राव चलावौ धरा अचेत ॥ २७ ॥

पच सखी मिली वइठी छइ आय।
"तैरय लीखी सखी ! माही सुणाई ॥
लालच लीखीया वहनडी।
सामहै हीयडइ डावी कूँषी ॥
दोई नख लागा देव का"।
आपस माणा करत आल ॥
धन विषहर, प्रीय गारुडो।
जागी धणी थारा डक सभाल" ॥ २८ ॥

चीरी लिखी धन आपणई हाथ।
जणह चलायो हेडाऊ के साथ ॥
सातसंइ कोस कइ आतँर।
जीण परि बोलज्यु न रीसाई ॥

कुहणी - फाटइ काचुवउ ।
षोपरि फाटइ धन को चीर ॥
जाणे दव दाधी लोकड़ी ।
दूबली हुई झूरई ईम नाह ॥
डावा हाथ को मूंदडउ ।
आवण लागौ जीवणी बाँह ॥ २९ ॥

पाड्यो चाल्यो ओका प्रीय कई देश ।
"हुँ कहुँ वीरा ! सोई कहेस ॥
एक सारा घरि आवज्यो ।
बाट बूहारूँ सीर का केस ॥
विरह महा-जल उलटई ।
थाग न पावइ मुंध नरेश !" ॥ ३० ॥

"जोसी कहई वीरा ! धन की नाह ।
तो यो दीई थी जीमणी बाँह ॥
टोव पुजाई थी बाभणी ।
चद सूरिज दुई दाया साख ॥
पानी पवन अरि धूर अकासि ।
हुँ नवि जाणु य ईम करँ ॥
मुसी हे ! नणद हुं ईणी विसास" ॥ ३१ ॥

"भूली है बइहनड़ी ईणौ वीसास ।
हूँ नीव जांणू औलगि जास ॥
वरजति बाप रखावती व्याह ।
अंकन–कुँवारी रहती सखी ! ॥
ओठण लोवडी काटती झाड ।
खेत कमाती जाट ज्युं ॥
मईकाईसिरजीउलिगाणा घरि-नारि" ॥ ३२ ॥

जे दुख -'नाल्ह' कहैइगौ कौण ?
परहरौ पल्यग नइं त्रीय तीज्यो न्हाण ॥
काथ सोपारी तँ विख वड़ी ।
करि जप माला अरि जपइ नाह ॥

आगुली गीणता दिन गया।
काग उडावता दूषइ छइ वाँह ॥ ३३ ॥

चीरी दीधी जनोई की गाँठि।
गिणि सोनईया वाछ्या छइ साठि ॥
वरस दीहाँ की सेवलो।
घी घणौ खाज्यो पगाह पराण ॥
पाये पाणही सावरी।
चउघडँया माह दीई मिलाण ॥ ३४ ॥

"कहि न गोरी! थारा प्रीवका सुहिनाण।
जीणी अहिनाणहु लेउँ पीछाणी ॥
कौण उणिहारइ कौण सारिखो ?"।
"ऊचइ गोलइ कडी जिम दाढ ॥
ऊरि चोडौ कडि पातलौ।
माहीलै कौयै जीमणो अषी ॥
कालौ तिल भमर जीसो।
सीस तिलक उगतई-विहाण ॥
पाय लखीणी मोचणी।
मूँछ करिवाण छै डावइ हाथी ॥
लाख मील्या माहि लख लहई।
पाड्या! म्हाको प्रीव छइ इणतो सहिनाण"॥ ३५ ॥

"वरस वावीस कौ वाली-वेस।
दन्त कवाड्या, सिर किलकिला केस ॥
हाट विहाऱ्या कइ जोवज्यो।
कइ जोवज्यो राज-दुवारि" ॥ ३६ ॥

"वाहुडि गोरी! तुं घरि जाह।
हुँ लेई आवऊं थारउ हो नाह" ॥
सोना तो वाध्यो गाठड़ी।
दीधी सोपारी दोय कर च्यार ॥
"ज्यु वोलइ ते नरिवाहज्यो।
बचन तुमारइ लागी छर नार" ॥ ३७ ॥

बहुडि गोरी देखाली छै वाट।
ऊँचा पर्वत दुर्घट घाट॥
लाबी बाह देखालिया।
देखितो चालिजे देस की सीम॥
"छाडही धूप थे झीणी गीणी।
चीरी राखज्यो धन कौ जीव"॥ ३८॥

कोस पयाणउ पाडीयो जाई।
सात अगा कर बैठे हो खाय॥
सूतो चालै पग ठवै।
चालता गोरी कह्या हो संदेस॥
ते सघला बीसरी गयौ।
पाड्यो सभालै आपणउ पेट॥ ३९॥

पाड्या चाल्यो जगंनाथ के देश।
छढ्या मदिर सयल असेस॥
चाल्यो प्रोहित राव को।
जाई पर-भूमि कियो प्रवेश॥
घाट दुर्घट ते लाघीया।
सातमइ मास पहुतउ हो जाई॥ ४०॥

अचरिज बात ईम सयल असेस।
बलद ते मानजे हलि वहइ गाय॥
इसो चरित तिहाँ अति घणउ।
साँड विहूणी व्यावइ छइ गाई॥
माँड पीवइ कण कण रालजे।
लाल विहूणी वाजै छै घट॥
ईसी सकति तिहाँ देव की।
चोर नाहर नही देव कइ पंथ॥ ४१॥

फिर फिर जोयो राजा नयर मझार।
करि जमदाढ खाडो तरवार॥
खेटौ रूले खोपरि समड।
याट की फूदा रुलती भूल॥

साँभर धणी जोउल दोड।
जे सहिनाण कह्या था मूध ॥ ४२ ॥

पाड्या जाई कीयो परवेस।
ले विजउरो दुज मीलइ नरेस ॥
कुसल कुसल सप्रसन्न हुवो।
जब लगि गग जमुना वहै नीर ॥
जा लगी चद सूरज तपै।
ता लगि राजा सयल परिवार ॥ ४३ ॥

"पाड्या तुम आव्यो कौण कइ साथ ?
लाघ्या कूँ पर्वत दुर्घट घाट ?" ॥
"तुम कारण दूत रमिरा।
सूना साँभर का रिणवास ॥
सून चउरा चउखंडी।
सूना मन्दिर मढ कविलास ॥ ४४ ॥

राजा प्रोहित येकणि साथी।
वाह लागा पूछइ घनो बात ॥
नयनी रूप मे रूवडी।
कोट कोसीसा अत न पार ॥
देव-नयर छइ रूवडउ।
प्रोहित जोवइ पौली पगार ॥ ४५ ॥

पठइ पोथा रामा की छै।
प्रोहित निरखै पोलि पगार ॥
चदन तिलक अगी खोल कराय।
कठ जनोई पाटकी।
रगत चदन की पीली किमाड ॥
सीसम सार की पाटली।
ऊँचा घरि घरि तोरणवार ॥
ऊँचा दादुर झलमलइ।
घरि घरि तुलछी वेद पुराण ॥

तिण भई पाप न छीपही ।
तिहा फिरई जगनाथ की आण ॥ ४६ ॥

धन ! धन ! देव ! देव ! जगनाथ !
अमर काया रतनालीय आख ॥
अमर स्यघासण वइसणइ ।
जीण दिन कंठ न ओअहकार ॥
जिण दिन मेरु न मेदनी ।
जिण दिन स्वामी चद न सूर ॥
जिण दिन पवन पाणी नही ।
जिण दिन स्वामी अभ न गभ ॥
ये तो जुग सूना- गया ।
तदि तो दीप नीपायो हो आप ॥ ४७ ॥

पाढ्या परधान तेड़ावीयो आणि ।
देसू जब लगि चउगुणो मान ॥
मेल्ही छइ चावर वइसणई ।
कौण देसारी पूछै छै बात ॥
कौण कारणि औलगि करउ ?
तु अजाणे काई पूछैई बात ? ॥ ४८ ॥

पाड्या कहै "सूणी धरह नरेस !
उणी गुणवंती कह्योउ संदेस ॥
तुम वीरा मे वहनडी ।
लाडिलौ धणी साभरी कौ राव ॥
तु उडीसा को धणी ।
थारउ उलिगाणंउ घरि वेगि पठाव" ॥ ४९ ॥

पाड्यो ऊसारै तेड्यो छइ राई ।
"छीनी उलगी माई सू कही ॥
मा ईम कहीयो देव सूं ।
राई चलायो चउगिणइ मान ॥
लाख पाषर आगइ जुडइ ।
देख उडीसा कउ परघान ॥" ५० ॥

"वेगि मया करि तू घरि चालि ।
कठिण पयोहर छाडि छइ ठामि ।।
सिखर ते धरती रहइ नीम्या ।
अधला ! असूर ! असती ! अचेती ।।
एक सरो घरी आवनू ।
अस्त्री गेली राम वाध्यो सूरा सेत ।। ५१ ।।

जाणायउ राजा थारौऊ हो जाण ।
दुई का मीःया छै येक पराण ।।
जेकिम यछै दूरो था ।
कूलह की वेडी, सीयलै जजीर ।।"
"जोवन राखो चोर ज्यु ।
पगी पगी स्वामी लागु हु पाय ।।
ईणी भवि उलिगाणो हुवो ।
आवतइ भव होई कालो हो साप ।। ५२ ।।

हेम की कूपी मयण की मुघ ।
सा धन समरई जीम मात-गयंद ।।
चौवास्या कई चौखडी ।
वाव न बाजै, नू तपै सूर ।।
बादल छायो है चन्द्रमा ।
औ की गात ऊघाड्या जोवन—पूर" ।। ५३ ।।

"देव ! मया करि तू घरि चालि ।
थारइ घरि होसी अरथ की हाणि ।।
कह्यो हमारउ ज सूणइ ।
थारी गोरही मरई उगत-विहाण ।।
कर जोडे 'नरपति' कहै ।
वेगी करि राज भवर पलाण ।। ५४ ।।

"पाड्या ! ते गोरडी कीणइ दुख दीठ ?"
"चावल वीणती गोखी वयठ ।।
मुख मइलइ चितउ उजलइ ।
दुइ पगि उतरी कह्यो हो सदेस ।।

एक सरा घरा आवज्यो ।
चढतो जोवन कहाँ लहेस ?" ॥ ५५ ॥

"पाड्या ! ते गोरड़ी किणइ दुखदीठ?"
"सदेसोई कह्यो धन नीठ ॥
आसू पडै जगी रेलिया ।
दुबली हुई खरीय कक ॥
आखड़ीया रतनालीया ।
तुटी पडैलौ, धन कौ लक" ॥ ५६ ॥

जीम जीम पाडयो कहै सदेस ।
तिम तिम झूरइ धरहु-नरेस ॥
"कइ तुं कामणी कामणै ।
केतु भरीयो सयल जजीर ॥
कइ तु बधण वधीयो ।
एक सरा राई घरह सीधाव ॥
साधन नल प्यंगल हुई ।
ओकई आगणई सूकइ चपकी माल" ॥ ५७ ॥

दुष्ट वचन बोल्या तिणि ठाई ।
ले चीठी आयी तणी राई ॥
ईसा गूपती वचन ती बचीया ।
नव जोवन नवरंगो नेह ॥
अहि-निसि समरई गोरडी ।
साभला राजा तणौ सनेह ॥ ५८ ॥

चीरी वाची देखी तब राई ।
ततक्षिण देव पधारौ जाई ॥
"काई राजा मन बिलखीयौ ? ।
सूना पाटण देस पधार" ॥
कर जोडे [इ] नै राई बीनई ।
"देहि बिदा मौ मुगती दातार ! ॥ ५९ ॥

चीरी वाचइ छइ दोही राई ।
करणो जोसी उभौ तीणी ठाई ॥

आजि चलावै देव हुइ ।
वचन हमारउ मानो नू मान ॥
कर जोडे दूज वीनमैं ।
थे घरि चालो, नू लावो हो वार" ॥ ६० ॥

कोकै पाड्यो अरी परधान ।
दीधौ छै जब तिहा चउगुणउ मान ॥
चंकी चावर वइसणइ ।
नव गज ऊचा हाथी च्यार ॥
आण्या छै अरथ थे दरब भंडार ।
आण्या हीरा पाथरी ॥
दीधा ताजी मात-गयद ।
कवाइ पइहराइ नव—लखी ॥
चाल्यो राजा मास वसन्त ॥ ६१ ॥

भीतर सचर्यो दोई राई ।
पाट-महा-दे-राणी लीय वोलाई ॥
उलागाणउ घरि चालीयौ ।
सह संदेसी नया उपरि पान ॥
"म्हा वइठा थे आचरउ ।
रहो उडीसा का परधान" ॥ ६२ ॥

राजा राणी लेई वोलाई ।
गलि लागै अ [रु] रुदन कराई ॥
उलिगाणउ घरि चालियौ ।
नमि नमि दूणौ करै जुहार ॥
"राज कीज्यो घरि आपणइ" ।
राणीनइ दीयो कोडि टकावली हार ॥ ६३ ॥

"रहि रहि प्रधान तु जी मतो जाई ।
दोती कराउ थारो हु व्याह ॥
एक गोरी दूजी सामली ।
राई भतीजी नयण सूतार ॥
वहन देवाडू देवकी ।
थारो व्याह करू गगा कई पार" ॥ ६४ ॥

"रहि रहि बइहन तु वचन न् हारि ।
म्हारइ छइ साठि अतेवरी-नारि ॥
एक एका थी आगली ।
एक अस्त्रिय जइ रतन संसार ॥
प्रेम प्रीयारी बाल ही ।
जे कइ पीहर छै बाई ' माडव धार" ॥ ६५ ॥

सेवा पूरी चाल्यो घरी राव ।
गली लागै मीलै छइ राई ॥
पूठिते उघाड़ी हुई ।
सगा सुणी जाता कसी पूठि ॥
कलिजुग पाप ज अवतर्यो ।
राजि के कारण विणसस लक ॥ ६६ ॥

छत्र दियौ सिर साम्यइ-राव ।
वाजित्र वाजै निसाणे घाव ॥
देव बलावै बाहुड्या ।
सांभरि गमन करै छइ राई ॥
गढ अजमेरा राजीयो ।
जोगी एक भेट्यो तिणि ठाई ॥ ६७ ॥

राजा पाड्यो लीयो हो बोलाई ।
अगइ बात कही समझाय ॥
थे घरि चालौ देवता ।
"मूरिख राजा अपढ अयाण ॥
हुँ किम चालु एकलो ?
आगइ गोरी तीजइ पराण ॥ ६८ ॥

एक अपूरब जोगी राई ।
गन करै तौ साभरी ते जाय ॥
चचल चपल अरि चालणइ ।
रूप अपूरब बालिय बेस ॥
ज्यो मागौ ज्युं आलज्यौ ।
पाटण सरिसा नयर असेस ॥ ६९ ॥

जोगी कहइ "सूणी धरहृ नरेस।
वीण उणीहारउ कहा उ लहेस॥
राज घणो राणी घणी।
उचै गोलइ लांवइ नाक॥
जीव पराया ओलखई।
चीरी दीज्यो प्रभु! धन के हाथ" ॥ ७० ॥

जोगी कहू "सूणी त्रीभुवन नाथ!
पदम कमल छै धन के हाथ॥
हिव होसी काचकी कामली!
दीस भूलउ रे प्रभु! उणीहार॥
बोलता बोलइ छई आकुली।
जोगी! गोरडी ईणि उणिहार" ॥ ७१ ॥

"कै धन सूत्र घडी सुत्रधार?
कै वा सचइ ढालीय सुनारि?॥
कै वा देवी देवा घरी?
कै वा चद्र वदन उणीहार?॥
कइवा देवल पुतली?
ईसीय छइ प्रभुजी! अमारडी नार" ॥ ७२ ॥

चालउ जोगी नू (ला) वोवा वार।
मडली पाई भमइ तिण वार॥
मोनई वन लेई सचर्यो।
दुईसभर्या वीध लघ्या परनत घाट॥
पर—देशा जाई सचर्यो।
सात सइ कोस गयो साझी वार॥ ७३ ॥

जोगी उयण गयो तिणी ठाई।
गढ अजमेर पहूतो जाई॥
सहू महाजन हरषीया।
कोण देस? कहो कुणि ठामि?॥
रावली पोले आवीया।
पौल्या वेगी वधावउ जाह॥ ७४ ॥

राव आव्या की माभली वात ।
नाचउ रूप मनोहर पान ॥
गइ माही गुडी उछली ।
घरि घरि तोरण मगल चार ॥
रावली प्योल आवीया ।
साहु आणंद हुवउ तीणी ठार ॥ ७५ ॥

जोगी वइठो पउलइ जाई ।
वभूत सरी सी वोल कराई ॥
आक धतूरा विम घणो ।
वउलइ वोलते वचन सुठाल ॥
राय-ली प्योले आवीया ।
वेगी वधावइ चंप की माल ॥ ७६ ॥

राय-आगणा जोगी पहूँतउ जाई ।
जाई प्रधान सूणाव्यो माहि ॥
सघलौ रावलह [लह] लहलै ।
साधन पोवती मोती की माल ॥
दासी जाई सूंणावीयो ।
तव धन उठी मोतीय राल ॥ ७७ ॥

"आज सखी ! म्हारै फरकै छई अग ।
अग फरूकै चित्त हर्स ॥
कैड्यारौ जीर खीसे खीसे जाई ।
चित जणायौ है सखी" ! ।
"सकै तुझ मीलसी साभर्‌यो राव" ॥ ७८ ॥

पंच सहेली मिली धन साथ ।
चोरी म्हेली धन अपइण हाथ ॥
जाई करी बैठी चौखंडी ।
पेहली वाची उपली औलि ॥
सा धन खलती कसोर ज्युं ।
जाणिक बैठी ग्रीव को खोलि ॥ ७९ ॥

चीरी रही धन हीयडउ लगाई ।
जाणिक वाछरू है मेल्ही गाई ॥

पाचमइं पहरी घरी आवसी ।
बारमै बरस आव्यो घरि राव ।। ८४ ।।

लाध्या देस आव्यो घरी राव ।
बाजीत्र बाजै निसार्णै घाव ।।
आण्या हीरा पायरी ।
आण्या हस्ती मात गयद ।।
कर जोडे 'नरपति' कहै ।
आव्यो राजा मा वसंत ।। ८५ ।।

बारमइ बरसे आव्यो घरी राव ।
वाजित्र बाजइ नीसाणे घाव ।।
गढि माही गूडी उछली ।
घरि घरि तोरण मगल चारि ।।
राजी – कुँवर हरखी फिरई ।
जीव घरि आव्यो धन को नाह ।। ८६ ।।

फागुण मासी आव्यो घरि राव ।
फागी रमै सहू वर नार ।।
राजमती हरीषी फिरई ।
सरब चउरास्या सरिसौ राव ।।
होली खेले राव हरीपीयौ ।
राज कुँवर होली खेलवा जाई ।। ८७ ।।

जीव घरि आयौ धन को नाह ।
जाणिक उलटइ समंद अथाह ।।
अकलक कलक मो चढ्यौ ।
समुहो जोवन वीरह वीकराल ।।
अनवलइ दव परजल ।
पगि पगि मो सखी मडइ आल ।। ८८ ।।

जाई स्यघासण वइठो छइ राई ।
चउरास्या सहु लागै छइ पाई ।।
भाइ भतीजा राव का ।
मील्या महाजन वीमलगात्र ।।

मगल गावइ कामिनी ।
चारण भाट बोलाइ तिणी ठाई ॥ ८९ ॥

राई अगणी राजा पहुतो जाई ।
मांगलीक उतारे हो माई ॥
धन्य दीहाडउ आज को ।
देई प्रदीषणा लागइ छइ पाई ॥
धन माता जीणी जनमीया ।
जाणिक भेट्यो त्रिभुवन-राई । ९० ॥

राई सुखासण पोढ्यो छै जाई ।
अतेवर सहू लीयो बोलाहि ॥
केलि गरभ जीसी कूवली ।
कू कू चदन कीधा खोली ॥
अतेवर सहू आवीयो ।
जाई बइठीओ ग्रीव की खोलि ॥ ९१ ॥

कीयो मरदन धन सघलइ अग ।
पचजटा छइ सीरह भूयग ॥
जटा जुगती जोगणी हुई ।
जे धन मीलती अगी सभार ॥
मन भग होतो वालहो ।
ईणी परि रहता राजी-दूवारि ॥ ९२ ॥

उचा परबत नीचा घाट ।
जातो जोबन न लहई वाट ॥
कोई मू सारो मू सी गयो ।
कचु कसण ते लक की वेढ ॥
रात दिवस घनी पहरीयो ।
तोही मू सारो मू सी गयो ढेढ ॥ ९३ ॥

रूठी गोरी अल्यग नू लेहि ।
पलयग वइसइ नव पान नू लेहि ॥
ऊभी दइ छई औलभा ।
करि लागइ अरि मोड़ पूछइ वाह ॥

"कत भरोसो काइ करौ ? ।
बारा बरस कीम रहज्यो नाह ? ॥ ९४ ॥
बरस दीहा का बाराहो मास ।
बारा मास का चउबीस पाख ॥
तीन सै साठि ए दिन गया ।
तीन सै साठि गइ छइ रात ॥
ऐता दिन तुम कहाँ हूँता ? ।
ईव किम बससू राज की खाट" ॥ ९५ ॥
बारमै बरस मील्यो धन नाह ।
अरुजन जू धन लीयो सनाह ॥
कसतूरी मरदन कियो ।
झबरक दीव लै गहरी वाट ॥
सा धन पान समारिया ।
जाई बैठी धन प्रीव की खाट ॥ ९६ ॥
अरजन जू धन लीयो सनाह ।
गली पैंहरई टकाडिलो हार ॥
कचु कसण ते खोलिया ।
कू कू चदन सीरह स्यदूर ॥
कर जोडे 'नरपति' कहइ ।
कामनी कत रमइ रस पूर ॥ ९७ ॥
बारमइ बरस मील्यो धन नाह ।
हीयऊ लइ हाथि गला मही बाँह ॥
अमली समली चुंबणी ।
अतिरग स्वामी भरिजे है पीक ॥
सषी सहेली मँह लाजस्यु ।
अतीरग स्वामी भरि जै छै प्रीक ॥ ९८ ॥
"साभलि बात कहै धन नाह ।
हीयडइ हाथी गला माही वाह ॥
आंगलीया कटका" करू ।
पाई तलासू माझीअ रात ॥
तोही देऊ भला जीवला ।
चोली माहरइ थी काढि दु पान ॥

"थारा कीधा जइ करूं ।
तुझ सरसी कीम जीमजै धान ॥ ६६ ॥
उलगी जाई काई कीयो नाह ? ।
मोडी उसीसो नू सूतौ बाह ॥
कठिण पयोहर नू मील्या ।
केली गर्भ सा नू मील्या गात ॥
जाघ जोडावौ नू नीरखीयौ ।
रंग-भरि रयण नू माडीयो खेल ॥
देव सतावौ राजा तु फिरई ।
घीव वीसाही तु जीमो छइ तेल" ॥ १०० ॥

कनक काया घट कूं कू लोल ।
कठीण पयाहर हेम कचोल ॥
केलि गरभ जीसी कू वली ।
घायल ज्यु घन खचइ अग ॥
कडि चालउ गोरी करइ ।
वीरह-वेदन नवि जाणइ कोई ॥
ज्यु राजा राणी मोलइ ।
यु ईणि कलि मीलजै सब कोई ॥ १०१ ॥

गवरी को नदन आव्यो छइ भाई ।
रास कहइ वीसल दे-राई ॥
राज कु वर श्रव वर्णव्या ।
सयल सभा सामलो हो सजोग ॥
गगा फल 'नरपति' कहइ ।
पुत्र कलत्र नवि हुवई वीजोग ॥ १०२ ॥

तीजो खंड चयो परिमाण ।
घरि आव्यो वीसल-चहुवाण ॥
गढ अजमेरा राजीयो ।
राजमती घन पूरी आस ॥
चउरास्या सहू वर्णव्या ।
अम्रत रसायण 'नरपति' व्यास ॥ १०३ ॥

॥ इति तृतीय खड ॥

चतुर्थ खंड

प्रणमू हणुमन्त अंजनी-पूत ।
भूल्यो आषर आणज्यो सूत ।।
कर जोडे 'नरपति' कहै ।
धार थी आवज्यो भोज नरेस ।।
मात पिता मेलाबडो ।
साभर्या रास होई पुण्य प्रवेस ।। १ ।।

राना-दे मीलीयो सूरिज भरतार ।
रूखमीणी मीलीयो कृष्ण अधार ।।
चद्र मीलयो ज्युँ रोहणी ।
'नाल्ह' रसायण नर भणई ।। २ ।।

राणी मिलीय राइ नरयन्द्र ।।
गढ अजमेरा उतीम ठाई ।
राज करइ बीसल-दे-राई ।।
चउरास्या जे कई अति घणा ।
राज कुँवर आव्या सब कोई ।। ३ ।।

भीतरते राजा तणो ।
मान अधिक दीयो सब कोई ।।
बोलइ वीसल-दे परधान ।
राय-कुँवर आयो बहु-मान ।।
राज-कुँवर तेडावियो ।
पाट पटोला कुलह कवाई ।।
दीधो सोनो सोलहो ।
चीत्रकोट दीधो तिण ढाई ।। ४ ।।

राय कुँवर बध्यो सिर मोड ।
वारा गढ सुद्रुरग चित्तोड ।।
राइ भतीजो थापीयो ।
गढ अजमेरा उत्तिम ठाय ।।
कर जोडे 'नरपति' कहई ।
राज करइ तिहा वीसल राय ।। ५ ।।

कुँवर सतोष्यो मनि हरषीयो राई ।
धार नग्री वधाउ जाई ॥
तेडो प्रोहित राव कौ ।
चीरी लीखी आप छइ हाथ ॥
"धार नग्री थे गम करो ।
राजा भोज ले आवज्यो साथ" ॥ ६ ॥

आईस दीधो वीसल-राई ।
प्रोहित मोकलाव्यो तींणी ठाई ॥
लै मौहूरत दूंज चालीयो ।
टका बीस दियो छइ राई ॥
वाटइ भीख्या जिण करउ ।
पवन वेग तीण थानीक जाई ॥ ७ ॥

चाल्यो प्रोहित मालागिर देस ।
वस्त्र कखवर अरि भला वेस ॥
हाथ कमण्डल झलमलई ।
ब्राह्मण वेद भणइ झूणकार ॥
राति दिवस करि चालीयउ ।
पनरमइ दिवस पहुतो तिणी ठार ॥ ८ ॥

को कोसीसा नयर विसाल ।
धार नग्री माहइ गम कीयउ ॥
नयर नीरूपम रूवडो ।
सरव सोनारो पोल पगार ॥
माथइ तिलक केसरी तणो ।
जाई पहुचो सीह—दुवार ॥ ९ ॥

ब्राह्मण राज कीयउ प्रवेस ।
लेइ बीजोरो दूज मील्यो ही नरेस ॥
राज जमाई-घरि आवीयउ ।
उठ्यो राई गयो रिणवास ॥
अतेवर सहू कोकियो ।
राजमती की पूरी आस ॥ १० ॥

आयौ राजा साभल्यो राई।
ततखिण वल्यउ नीसाणे घाव॥
राजा माहइ उछव हूवउ ।
ब्राह्मण दीयउ बहुत पसाव॥
जीण सजोगी सुणावीयउ।
सूणी वचन हरष्यो मनि राव॥११॥

राजा भोज बोलइ तिणी ठाई।
"देस देसारा तेडावौ राई"॥
तैरह पोहण दल मिला।
बाजइ पटह पखावज भेर॥
असी सहस्र हाथो गुड्या।
भाण न सूझइ उठो रज रेण॥ १२॥

बाजइ पटह पखावज पूर।
ढोल निसाण वाजइ रिणतूर॥
वीर घटा तिहा रुणझूणइ।
मेघाडम्बर छत्र सिर दीयौ राय॥
अन्तर वासउ हो दियो मिलाण॥ १३॥

दूरुग चितोड ससोभित ठाई।
ततषीण राय पहूँतो जाई॥
ठाम ठाम डेरा हुबा।
भोजन भगति करई तीणी वार॥
साथे चालइ राव को।
गढ अजमेर पहूँतौ जाई॥ १४॥

चिहु खडा का मीलीया छइ राय।
गढ अजमेर पहूँतौ जाई॥
आगइ प्रोहीत चालीयउ।
जाई उभो रह्यो सीह—दुवार॥
राजमती देह वधामणी।
आयो राजा भोज पमार॥ १५॥

राजा भोज आयो तीणी ठाई।
सामहो आयो छै वीसल-राई॥

गढ अजमेरा राजीयौ ।
राजा भोज नै वीसल-राई ॥
दोई राजा मेलावडौ ।
राजा भोज चाल्यो गढ माहि ॥ १६ ॥

राजा भोज आयो तीणी ठाई ।
राजमती हरखी मन माहि ॥
कुँवर मीलइ जाई वाप हुई ।
लेई उछगति भोज कुँवार ॥
कुसले पुत्रीहे मील्या ।
आज जनम राजा सफल ससार ॥ १७ ॥

घणी भगति करइ साभर्‌यो-राव ।
पाट पटोला कुलह कवाई ॥
उल्हण मीणा सौ पूरव्यो ।
भोजन भगति करइ तिणी-ठाई ॥
कर जोडे 'नरपति' कहई ।
राजमती मुकलावउ राय ॥ १८ ॥

भोज कुँवर मुकलावी राय ।
आतर वासो दीयौ तीणी ठाई ॥
मान अधिक तिह्वा आपीयो ।
कुँवर बउलावी बीसल-राव ॥
राइ बुयावै वाहुड्या ।
जाई मिलाण दीयो तिणी ठाइ ॥ १९ ॥

राजमती लै आव्यो राइ ।
देस मालागिर सेन पठाई ॥
थाणो आयौ राव आपणौ ।
घरि घरि तोरण मगलाचार ॥
घरि घरि गुडि उछली ।
हुवउ वधावउ नगरी धार ॥ २० ॥

कुँवर गई अतेवर माहि ।
पाट–महा–दे–राणी मिलै छै भाई ॥

अतेवर सहे को मीलई ।
मील्या सहोवर भोज कुमार ॥
नयण ते आसू खेरीया ।
राजमती मीली तिण बार ॥ २१ ॥

अतेवर माही रमइ राज कुमार ।
दुख सुख माइ पूछइ तीणी बार ॥
"कही पुत्री ! राई किम गयउ ? ।
रग भरी रयणी माडीयो खेल" ॥
"अही वीष जी मै मो बसई ।
एके वचन थी चाल्यो मेल्ही" ॥ २२ ॥

श्रावण मास सुवाहणो होई ।
सखी सहेली खेलै सब कोई ॥
कुँवर रमई राजा भोज की ।
पेहलई श्रावण खेलाव जाई ॥
सही सयाणी सब मीली ।
"कहि कुँवर ! कीसो बीसल-राई ? ॥ २३ ॥

राई भलो जीसो पून्यचद ।
गोकुल माही सोहै ज्युं गोव्यद ॥
ईसो राजा साभरी तणो ।
राय मुकुट राय सिर अग ॥
चउरस्या जै के उलगै ।
राई बदन जिसो पूरणचद ॥ २४ ॥

आसोज मास सूहावण होई ।
घरि घरि पूज करई सब कोई ॥
पूजी देव्या मनी हरीखीयो ।
बहु मादल बाजइ तिणी ठाई ॥
दीवल्या कई आगही ।
धूरि दरसावै चाल्यो राव ॥ २५ ॥

धूरि दरसावै चाल्यो राव ।
वाजित्र बाजइ निसांणो घाव ॥

चौरास्या सहू आवीया ।
सात सैं हाथी मत-गयद ॥
असी सहस साहण मीले ।
राइ दिसइ जीसौ पून्यमचद ॥ २६ ॥

मिल्या चौरास्या राणौ राण ।
जाइ बघेरइ दीयो मेल्हाण ॥
गढ अजमेरा राजीयो ।
मेघाडंबर सिर छात्र दीयो राई ॥
भाट विडद तिहा उचरै ।
"धनि धनि हो वीसल चहुँवाण" ॥ २७ ॥

चाल्यो राई दीयौ महुमान ।
काथ सुपारी पाका पान ॥
बलगे चाल्यो राई आपणाइ ।
हीयडइ हरषि मनि रग अपार ॥
सूभट सेन्या राज तणी ।
जाई पहुँतो मडप धार ॥ २८ ॥

धार नगरी [पहूतो] बीसल-राव ।
सामहो आव्यो भोज खधार ।-
कुसल रस प्रसन्न हुवा ।
दासी दी कोला मीली तिणि ठाइ ॥
नयर—लोक सहुँ को मीलयो ।
जाई जहुणो वीसलराव ॥२६॥

धन जननी जिण जायो वीसलराव ।
बीसल समो नवि कोई भोवाल ॥
रूप अपूरव पेखीयौ ।
लावण लाडु अरी पकवान ॥
सेना सहित राज जीमीयौ ।
राई भतीजो भोज दे वहुमान ॥३०॥

राजा भोज बोलइ तिणी ठाई ।
पाटी वैंठाड्या वीसल—राइ ॥

गढ़ अजमेरा राजीयौ ।
माणिक मोती चौक पुराई ॥
दीया खरोदक पइहरणइ ।
राजा कुँवर बेसाणी आणी ॥
मोती का अखा किया ।
अतेवर सहूँ जोवइ छह राई ॥ ३१ ॥

करि पहरावणी भोज सयूत ।
दीधा पेई भरी बहुत ॥
हाथी दीधा अति घणा ।
पाषर्‌या दीधा-तरल तुषार ॥
पहिरावणी राजा करी ।
ऊछव गुडी भोज-दुवारि ॥ ३२ ॥

अतेवर सवहू मीलैई कुँवार ।
दीधा मोती नव-सर हार ॥
कूँ कुँ काजल सयल सयूत ।
खावो पीयो घरि आपणइ ॥
अविचल राज करउ वहूत ॥ ३३ ॥

राजमती मुकलावी राई ।
पाट—महा-दे-राणी रुदन कराई ॥
कुँवण चालि चर आपणौ ।
बाजइ पडह पखावज भेर ॥
भोज बलावै वाहुड्यो ।
चाल्यो राजा गढ अजमेर ॥ ३४ ॥

बाजइ गुहीर निसाणो घाव ।
दुरग चीतोड़ पहुँतो राई ॥
अतर—बासइ गम कियौ ।
साभर थाणौ आवीयो राव ॥
चौरास्या सहू बाहुड्या ।
ठामि ठामि घर आव्यो कहइ राव ॥ ३५ ॥

गढ अजमेर पहुँतो जाई ।
वाजित्र वाजै नीसाणौ घाई ॥

गढि माहि गुडी उछली ।
कुँवर सहीत लागै छई पाई ॥
राई शवास्या सचरयो ।
सैंज पधार्यो साँभर्यो-राव ॥ ३६ ॥

राजमती धन कीयो सीणगार ।
गलि पइहर्यो टकाउलि हारि ॥
पहिरि पदारथ काचु—वड ।
कहइ नु 'नाल्ह' सारदा को दास ॥
राजा राणी सू मीलइ ।
पढइ सूणइ सवि पूरइ आस ॥ ३७ ॥

गायो रसायण लील— विलास ।
'नाल्ह' कहइ सब पूरज्यो आस ॥
रास रसायण उपजई ।
गढ अजमेरा उतिम ठाई ॥
'नाल्ह' रसायण आरभई ।
रास रच्यो तिणी बीसल–राई ॥ ३८ ॥

साझी समइ धल किया सीणगार ।
सीरह महमद गलि मोती-हार ॥
काने कुण्डल दाडीमा ।
पहिरी पटोली झीणइ जकी ॥
कूँ कूँ भरीय कचोलडी ।
बाधन—सेज अदीष्ठे जाई ॥
स्वामी हइ सासो पड्यो ।
झीणी हरराषी उपमजाई ॥ ३९ ॥

चौथा को लैंहँगो झूना को दाव ।
ठमिक ठमिक धन दे छइ पाव ॥
आवी अवासई साचरी ।
हीयइइ हरीष मन रग अपार ॥
धन दीहाडउ आज कउ ।
कुँवर तगायउ छइ वीसल-राव ॥ ४० ॥

जब लगि ग्रहीयल उगइ सूर ।
जव लगि गग बहइ जल पूर ॥

जब लगि प्रथमी मैं जगन्नाथ।
जीणि राजा सिर दीधो हाथ॥
रास पहूँत्तो राव को।
बाजै पडह पखावज भेर॥
कर जोडे 'नरपति' कहइ।
अविचल राज कीज्यो अजमेर॥
जू तारायण मीसी सो चन्द।
गोवल माहि मिलइ ज्युं गोव्यद॥
ज्युँ उलिगाणइ घरि मिल्यो।
गढि उलिगाणइ कीधो हो वास॥
मनका मनोरथ पूरव्या।
भणइ सूणइ तिणी पूरज्यो आस॥ ४२॥

इति चतुर्थ खड
समाप्त

महाराष्ट्रीय संत कवियों के हिन्दी-पद[1]

१. चक्रधर का पद

"मूल स्थानी भिउ वध बाँधो हो जोई ना काल कलाई।
गुरूवचनें अठीयाना दृढ बधाई जे वीना चचल नाही।
सुती वधी स्थिर होई जेणो तह्मी जाई :
सो परी मोरी वैरी, आपणां काई।

× × ×

पाचे पचायत पावै जन हो धावती आप आण स्थानी।
पवण पुरो ही मनि स्थिर करो हो चन्द्र मैली वा भान।
अवागमन दुई जे वारो बुद्धि राखो अपन थे।
काटिये जाता निवारो हो भिडे न वायो जाई।।
आँखें निरजन लो लो करी हो भाव आभाव दोन्ही नाही।

२ महदायिसा का पद

"नगर द्वार हो भिच्छा करो हो, वापुरे मोरी अवस्था लो।
जिहाँ जावो तिहाँ आप सरिसा कोउ न करी मोरी चिंता लो।
हाट चौहाटा पड रहूं हो मांग पच घर भिच्छा
बापुछ लोक मोरी आवस्था कोउ न करी मोरी चिन्ता लो।

३. दामोदर पण्डित के पद

(१)

नवनाथ कहे सो नाथपथी जुगुत कहे सो जोगी।
विश्व बुझे सो कहि वैरागी, ज्ञान बुझे सो योगी,
सुन हो तुम्ह सिद्धान्त गरूवा ज्ञान पथु हमारा,
शुन्य निरसुन्य कहाकें कहिजे ब्रह्मादिक नेनेति पारा। १।
ये शिव शकती समा जुगती, कवन युक्ति तुम पाया,
ब्रह्मा विष्णु महेश चन्द्र रवि भ्रमण करत समाया। २।

---

१. हिन्दी को मराठी सन्तों की देन (डा० विनय मोहन शर्मा) के आधार पर।

पुछु तोहिकें श्रोता पडित इन्द्र केतिवार आया,
बतिस मुख का ब्रह्मा प्रत्यक्ख कवण जुग तुम पाया। ३।
पच कृष्ण खेल भाव हो ज्याकी, किल (ण) कन्हे न जणाया,
कवण तें युग कवन ते थान, निज रूप काहा समाया। ४।
सारमसार बुझाते हैं विरला, तत्व ज्ञान जीन्ह पाया,
कलयुग माहे बदति ज्ञानी सब लोकु धघे लगाया। ५।
अलेख कहिजे अपरापरू, जीव कहिजे अविनाश,
उत्पति प्रलय नागदेव कहे श्री राऊल के दास। ६।

(२)

एकु जागा एकु सुता भया रे, खबना भगि चढिबो,
भवरि देत सुता खान खाइ एर निहुल बास पाहिबो। १।
कट भूलिवो रे कट भूलिवो रे कापट मूठ बुझाइ,
तत्व बीचार न आणति जोइ, तो विथ्या पडित म्हनाई,
आगे नागा पाछे कथा पहिरे, लोक लाज न धरे,
अष्ट भोग भोगि मगल गाई, तो न्हान याँ कलसी न्हाये रे। २।
सप्त दीपू अरु सप्त पताले, ब-हाड भला मिलिबो,
काल राति मधि मारि घालिवो, तो कोण जाग सूत धरिबो। ३।
आदि पति माया निचिया लोइ, बखाण के पढियासो,
नागदेव म्हणे चक्र सामि बिन, तीहा जगु भइ भजे सो। ४।

४ ज्ञानदेव के पद

(१)

"सब घट देखो माणिक मौला
कैसे कहूँ मैं काला धवला
पंचरंग से न्यारा होय
लेना एक और देना दोय। ध्रुवपद।

निर्गुण ब्रह्म भुवन से न्यारा
पोथी पुस्तक भये अपारा।
कोरा कागद पढ कर जाय
लेना एक और देना दोय।

अलख पुरुष मे देखा दृष्टि
करकर आउन समार मुष्टि।
छाटा मे कछु न होय
लेना एक और देना दोय।
खलल दिया त्रिलिका
तिरते तिरते मन न थका
इस पार न भावे कोय
लेना एक न देना दोय।
निर्गुन दाता कर्ता हर्ता
सब जुग बन मो आपहिता
सदा सर्वदा अच्चल होय
लेना एक न देना दोय।

(२)

"सोई कच्चा वे नही गुरू का बच्चा
दुनिया तज-कर खाक रमाई, जाकर बैठा बम मो
खेचरि मुद्रा वज्रासन मा ध्यान धरत है मन मो
तीरथ करके उम्मर खोई जागे जुगति मो सारी
हुकुम निवृति का ज्ञानेश्वर को तिनके ऊपर जाना
सदगुरु की (जव) कृपा भई तव आपहि आप पिछाना।"

५. नामदेव के पद

(१)

मन मेरे गजु जिह्वा मेरी काती।
मपि मपि काटउ जम की फासी।
कहा करउ जाती कहु करउ पाती।
रामको नाम जपउ दिन-राती।
रागनि रागउ सीवनि सीवउ।
राम नाम बिनु घीअ न जीवउ।
भगति करउ हरिके गुन गावउ।
आठ पहर अपना खसमु धिआवउ।
सुइनेकी सुई रूपे का धागा।
नामे का चितु हरि सउ लागा॥

(२)

जौ राजु देहि त कवन वडाई ।
जौ भीख मगावहि त किआ घटि जाई ।
तू हरि भजु मन मेरे पदु निवानु ।
बहुरि न होई तेरा आवनजानु ।
सभ तैं उपाई भरम भुलाई ।
जिस तू देवहि तिसहि बुझाई ।
सतिगुरु मिलै त सहसा जाई ।
किस हऊ पूजक दूजा नदरि न आई ।
एकै पाथर कीजै भाऊ ।
दूजै पाथर धरिए पाऊ ।
जै उहु देऊ त उहु भी देवा ।
कहि नामदेऊ हम हरि की सेवा ॥

(३)

भलै न लाछै पारमलो परमलीउ बैठोरी आई ।
आवत किनै न पेखिऊ कवने जाने री बाई ।
कवणु कहै किणि बूझिए रमईआ आकुलु री बाई ।
जिऊ आकासै पखिअलो खोज निरखिउ न जाई ।
जिउ जल माझै माछलो मारगु पेखणो न जाई ।
जिऊ आकसै घड़ुअलो म्रिगत्रिसना भरिआ ।
नामेचे सुआमी बीठलो जिन तीने जरिआ ॥

परिशिष्ट

हिन्दी का प्रथम कवि कौन ?[1]

यद्यपि हिन्दी साहित्य के इतिहास एव अनुसधान के क्षेत्र मे विगत सौ-सवा सौ वर्षों से इस प्रश्न पर बराबर विचार होता रहा है कि हिन्दी साहित्य का आविर्भाव या आरभ कब से माना जाय, किन्तु इसका कोई सर्वसम्मत उत्तर अभी तक प्राप्त नही हुआ। जहाँ कुछ इतिहासकार हिन्दी साहित्य का आविर्भाव सातवी-आठवी शती से मानते है तो वहाँ कुछ ग्यारहवी-बारहवी शती से। वस्तुत इस प्रश्न का उत्तर इस निर्णय पर निर्भर है कि हिन्दी का प्रथम कवि किसे माना जाय। हिन्दी के प्रथम इतिहास-लेखक गार्सा द तासी ने तो इस प्रश्न पर विचार ही नही किया था। किन्तु उनके अनन्तर जार्ज ग्रियर्सन, मिश्र-बन्धु, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, राहुल साकृत्यायन, आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी, डॉ० रामकुमार वर्मा प्रभृति इतिहासकारो व शोधकर्त्ताओ ने पुष्य, दलपति विजय, सरहपा, अब्दुर्रहमान, आदि विभिन्न कवियो को हिन्दी का प्रथम कवि होने का गौरव प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप मे प्रदान किया, किन्तु इन सभी मतो पर पुनर्विचार करते हुए हमने 'हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास' (प्रकाशन-काल १९६५ ई०) मे भरतेश्वर बाहुबली रास (रचनाकाल सन् ११८४ ई०) के रचयिता मुनि शालिभद्र सूरि के पक्ष मे अपना निर्णय दिया था। हमारे इस निर्णय के मूल आधार सक्षेप रूप मे ये थे—१ विभिन्न इतिहासकारो द्वारा हिन्दी के प्रथम कवि के रूप मे उल्लिखित अनेक कवि,—जिनमे 'पुष्य' का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है—अस्तित्वशून्य है क्योकि न तो उनके जीवनकाल के बारे मे कुछ पता चलता है और न ही उनकी कोई रचना उपलब्ध है। जब इनकी रचना ही उपलब्ध नही है तो यह कैसे कहा जा सकता है कि ये हिन्दी के कवि थे या किसी और भाषा के ? पूर्ववर्ती इतिहासकारो द्वारा उल्लिखित अनेक कवियो का जीवन-काल एव रचनाकाल सदिग्ध या बहुत बाद का है, जैसे कि 'खुमानरासो' के रचयिता दलपति विजय का है। आचार्य शुक्ल ने 'खुमानरासो' को लगभग नवी-दसवी शती मे रचित मानते हुए उसे आदिकाल की हिन्दी रचनाओ मे सर्वप्रथम स्थान दिया है, किन्तु अब यह असदिग्ध रूप मे प्रमाणित

१. 'पुराकल्प' वाराणसी मे प्रकाशित लेख।

हो गया है कि इसका रचनाकाल अठारहवी शती का उत्तरार्द्ध है। स्वय कवि ने इसमे अपना परिचय दिया है जिससे प्रमाणित होता है कि वह मेवाड के उन राणा सग्रामसिंह द्वितीय का समकालीन था जो अठारहवी शती मे हुए थे। वस्तुत इस ग्रथ मे इस काल तक की ऐतिहासिक घटनाओ का भी वर्णन उपलब्ध है। अत अब इसमे कोई सदेह नही कि यह रचना अठारहवी शती से पहले की नही है। इसी प्रकार वीसलदेव रासो, पृथ्वीराज रासो, परमाल रासो आदि ऐसी रचनाएँ है जिनका रचना-काल तेरहवी शती से पहले का नही है। अत इनमे से भी किसी रचना को पहली रचना के रूप मे स्वीकार नही किया जा सकता। कुछ इतिहासकारो ने हिन्दी को अपभ्र श से अभिन्न मानते हुए अपभ्र श के विभिन्न कवियो सरहपा, स्वयभू, अब्दुर्रहमान (सदेशरासक के रचयिता)—मे से किसी को हिन्दी के प्रथम कवि के रूप मे स्थापित करने की चेष्टा की है, किन्तु अब भापावैज्ञानिक, ऐतिहासिक एव व्यावहारिक दृष्टि से यह निर्णीत हो गया है कि ये दोनो भाषाएँ भिन्न है। आज से चालीस-पचास वर्ष पूर्व, जबकि अपभ्र श का अधिकाश साहित्य प्रकाश मे नही आया था, हिन्दी और अपभ्र श को एक मानने की भ्रान्ति प्रचलित थी। इसीलिए जहाँ प० चन्द्रधर शर्मा गुलेरी एव महापडित राहुल साकृत्यायन ने 'अपभ्र श' को 'पुरानी हिन्दी' के नाम से विहित किया वहाँ आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने अपने 'हिन्दी साहित्य के इतिहास' के प्रारभिक अध्यायो मे स्थान-स्थान पर अपभ्रंश के लिए 'प्राकृताभास हिन्दी' या 'पुरानी हिन्दी' जैसी शव्दावली का प्रयोग किया, किन्तु इस बारे मे वे कोई स्पष्ट निर्णय नही दे पाये थे। इसलिए अन्यत्र उन्होने अपभ्र श की रचनाओ की सूची हिन्दी-रचनाओ से अलग रूप मे भी प्रस्तुत की है। किन्तु परवर्ती अनुसधान से यह स्पष्ट हो गया है कि अपभ्र श हिन्दी की ही नही, उत्तर भारत की अन्य आधुनिक भापाओ की भी जननी है। अत उसे हिन्दी से अभिन्न नही माना जा सकता। इस तथ्य की स्पष्ट रूप से घोपणा एव व्याख्या प्रमुख भापावैज्ञानिको—डॉ० सुकीतिकुमार चटर्जी, डॉ० धीरेन्द्र वर्मा, डॉ० उदयनारायण तिवारी, डॉ० भोलानाथ तिवारी प्रभृति द्वारा हो चुकी है। साथ ही इसे अब हिन्दी साहित्य के प्रमुख इतिहासकार एव आलोचक भी स्वीकार कर चुके है। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने अपभ्र श को हिन्दी या पुरानी हिन्दी कहे जाने के विचार को अमान्य घोपित करते हुए लिखा है—"यह विचार भापाशास्त्रीय और वैज्ञानिक नही है।·· अपभ्र श को अब कोई भी पुरानी हिन्दी नही कहता।"[१] इतना ही नही, स्वयं प० राहुल साकृत्यायन ने भी, जिन्होने कि सन् १९४५ ई० मे अपनी 'हिन्दी-काव्य-धारा'

१ हिन्दी साहित्य उद्भव और विकास, पृष्ठ सख्या १६-१७।

मे अपभ्रंश के काव्य को हिन्दी मे सम्मिलित करने का प्रस्ताव अत्यन्त जोरदार शब्दो मे किया था, अपनी परवर्ती रचना 'दोहा-कोश' (प्रकाशन काल सन् १९५७ ई०) मे अपभ्र श और हिन्दी के अन्तर को स्वीकार करते हुए लिखा है—"अपभ्र श वैसे केवल हिन्दी की अपनी चीज नही है। उस पर उत्तर भारतीय या भारत की हिन्दू-आर्यस भी भाषाओ का, एक समान अधिकार है।"[1] ऐसी स्थिति मे किसी भी अपभ्रंश-काव्य को हिन्दी का प्रथम काव्य मानने की बात स्वत ही समाप्त हो जाती है।

अस्तु, यदि हम उपर्युक्त तीनो प्रकार के कवियो—अस्तित्वहीन, सदिग्ध या परवर्ती एव हिन्दीतर कवियो—को छोडकर ऐसे हिन्दी कवियो पर विचार करें जिनकी रचना प्रामाणिक हो और जिनका रचना-काल असदिग्ध हो तो उनमे कालक्रमानुसार सबसे पहला नाम 'भरतेश्वर बाहुबली रास' (११८४ ई०) के रचयिता शालिभद्र सूरि का ही आता है जिनसे हिन्दी रास-काव्यो की एक ऐसी परम्परा का सूत्रपात होता है जो आगे तीन-चार शताब्दियो तक अखड रूप मे चलती रही। यदि आदिकाल की तथोक्त सदिग्ध रचनाओ—बीसलदेव रासो, पृथ्वीराज रासो, अमीर खुसरो की पहेलियाँ आदि को भी प्रामाणिक मान लिया जाय तो भी भरतेश्वर बाहुबली रास का यह स्थान सुरक्षित रहता है। अत हमने इसी रचना के आधार पर हिन्दी-साहित्य का आविर्भावकाल ११८४ ई० निर्धारित किया है। इस तथ्य की पुष्टि तद्युगीन ऐतिहासिक, सास्कृतिक एव भाषा-वैज्ञानिक दृष्टियो से भी होती है—इस पर यथोचित प्रकाश 'हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास' मे डाला जा चुका है।[2]

हाल ही मे डॉ० नगेन्द्र द्वारा सपादित 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' (१९७३ ई०) प्रकाशित हुआ है जिसमे आदिकाल सम्बन्धी अध्याय डॉ० रामगोपाल शर्मा 'दिनेश' के द्वारा लिखित है। इसमे उन्होंने 'भरतेश्वर बाहुबली रास', के रचयिता शालिभद्र सूरि को हिन्दी का प्रथम कवि मानने का विरोध करते हुए सिद्ध कवि सरहपाद (७६९ ई०) को हिन्दी का पहला कवि घोषित किया है क्योकि उनके विचारानुसार सरहपाद की भाषा अपेक्षाकृत हिन्दी के अधिक निकट है।[3] सरहपाद के पक्ष मे उन्होने एक अन्य तर्क देते हुए लिखा है—"रही परम्परा की बात, तो उसके लिए ग्रन्थो का उतना महत्त्व नही जितना चेतना, भावना और विचारणा का है, क्योकि इन्ही से साहित्य का अस्तित्व जाना जाता है न कि मात्र ग्रथ-सख्या से। इस दृष्टि से सरहपाद की

१. दोहा-कोश, पृष्ठ सख्या ८।
२. हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास, पृष्ठ सख्या ९१-११०।
३ हिन्दी-साहित्य का इतिहास, स० डॉ० नगेन्द्र, पृष्ठ सख्या ३२।

देन अधिक महत्त्वपूर्ण है—उनकी भावधारा सिद्धो और नाथो से होती हुई कबीर तक अपनी परम्परा बनाती है जबकि शालिभद्र सूरि की देन इस सदर्भ मे नगण्य है। अत सरहपाद को ही हिन्दी का प्रथम कवि मानना तर्क-सगत है।[1]

यदि डॉ० दिनेश के उपर्युक्त निष्कर्ष को स्वीकार कर लिया जाय तो हिन्दी-साहित्य का आविर्भाव-काल सातवी-आठवी शती ही सिद्ध हो जाता है जो कि हिन्दी-भापा के भी उद्भव-काल से पहले पडता है। जैसा कि अन्यत्र सकेत किया जा चुका है प्राय सभी भापा-वैज्ञानिक हिन्दी-भापा का उद्भव लगभग १००० ई० से स्वीकार करते हैं, यहाँ तक कि डॉ० नगेन्द्र द्वारा सपादित इस इतिहास मे भी 'हिन्दी-भाषा के उद्भव एव विकास' सम्बन्धी अध्याय मे इसी मत को मान्यता दी गयी है किन्तु यह आश्चर्य की बात है कि हिन्दी-साहित्य का आरभ इससे भी दो-तीन शताब्दी पूर्व माना गया है। क्या इसका अर्थ यह माना जाय कि हिन्दी-साहित्य की रचना हिन्दी-भापा के उद्भव से पूर्व भी होने लग गयी थी!

सभवत इस असगति के लिए डॉ० दिनेश स्वय को दोषी न मानकर इस का उत्तरदायित्व ग्रन्थ-सपादक पर डाले, क्योंकि इस स्थिति मे उनका कर्त्तव्य था कि वे एक ही ग्रन्थ मे प्रस्तुत विभिन्न परस्पर-विरोधी धारणाओ मे अपेक्षित सामजस्य स्थापित करते। किन्तु जैसा कि इसकी भूमिका मे सपादक ने निवेदन किया है—"इस अनेकता मे एकता स्थापित करने का प्रयत्न एक सीमा तक तो सफल हो सकता है।" इस प्रकार के सम्मिलित प्रयासो मे इस प्रकार के अन्तर्विरोध का रह जाना स्वाभाविक है। फिर भी विद्वान् लेखक से इतनी आशा अवश्य की जा सकती थी कि वे इस प्रकार की क्रान्तिकारी धारणा प्रस्तुत करते समय हिन्दी-भाषा के उद्भव-काल के बारे मे पूर्व स्थापित मतो एव निष्कर्षो पर भी थोडा-बहुत विचार कर लेते।

डा० दिनेश के निष्कर्षो मे दूसरी असगति यह है कि बारहवी शती के शालिभद्र सूरि की भाषा की अपेक्षा आठवी शती के सरहपाद की भाषा को हिन्दी के अधिक निकट बताया गया है। अपनी बात को प्रमाणित करने के लिए उन्होने सरहपाद की कुछ सरलतम उक्तियाँ उद्धृत की है। वस्तुत उन्होने जो उक्तियाँ उद्धृत की है वे दोनो ही कवियो की भाषा के सामान्य स्तर का प्रतिनिधित्व नही करती।

तीसरे, हिन्दी की जननी अपभ्रंश भाषा एव उसके साहित्य का भी आविर्भाव एव विकास लगभग इसी समय से माना जाता है, अत यदि सरह-

1 हिन्दी-साहित्य का इतिहास, स० डॉ० नगेन्द्र, पृष्ठ सख्या ३३।

पाद को हिन्दी का पहला कवि मान लिया जाय तो हिन्दी अपभ्रंश की परवर्ती सिद्ध न होकर पूर्ववर्ती या समकालीन सिद्ध होगी जोकि भाषाओ के सहज विकास-क्रम के विपरीत है। चौथे, यह भी उल्लेखनीय है कि स्वय राहुल साकृत्यायन ने भी, जो कि सिद्ध कवियो के सबसे बडे समर्थक एव उनके साहित्य के सबसे अधिक ज्ञाता एव शोधक माने जाते हैं, सरहपाद को हिन्दी का नही, अपितु अपभ्रंश का पहला कवि माना है। उनके शब्दो मे—"इस प्रकार अपभ्रंश की सर्वप्रथम कृति सरहपाद के दोहो के रूप मे ही आज मौजूद है, इसलिए अपभ्रंश के आदिकवि के तौर पर सरहपाद का ही नाम लिया जा सकता है।"[1] यहा यहाँ ज्ञातव्य है कि राहुल जी का यह मत उस समय का है जबकि वे हिन्दी और अपभ्रंश की भिन्नता स्वीकार कर चुके थे क्योकि इन पक्तियो के तुरन्त बाद वे इसे स्पष्ट कर देते है कि अपभ्रंश पर केवल हिन्दी का ही नही, उत्तर भारत की अन्य आधुनिक भाषाओ का भी अधिकार है।

अत हमारे सामने दो परस्पर-विरोधी स्थितियाँ है—एक ओर महापडित के अनुसार सरहपाद हिन्दी की जननी अपभ्रंश के आदिकवि है तो दूसरी ओर डॉ० दिनेश के मतानुसार वे हिन्दी के प्रथम कवि हैं। यदि हम दूसरी स्थिति को स्वीकार करते हैं तो उसका अर्थ होगा कि पूरे अपभ्रंश-साहित्य को भारतीय साहित्य की परम्परा मे से निकाल देना या उसे हिन्दी-साहित्य मे ही समेट लेना। डॉ० दिनेश ने सचमुच ही सिद्धो और नाथो के साहित्य को हिन्दी-साहित्य मे सम्मिलित करके इस दूसरे विकल्प को ही स्वीकार किया है। वैसे इस प्रकार का प्रयास अनेक पूर्ववर्ती इतिहासकार भी कर चुके है किन्तु उन्होने उसे उस समय किया था जबकि अपभ्रंश को पुरानी हिन्दी मानने की भ्रान्ति प्रचलित थी। किन्तु आज जबकि प्रत्येक दृष्टि से दोनो की भिन्नता सिद्ध हो चुकी है, ऐसा करना उचित नही कहा जा सकता।

वस्तुत डॉ० दिनेश का उक्त मत इस भ्रान्ति पर आधारित है कि सरहपाद की भाषा हिन्दी है जबकि वास्तविकता यह है कि सरहपाद तथा अन्य सिद्ध कवियो का अधिकाश काव्य अपनी मूल भाषा मे उपलब्ध नही है, उसे विभिन्न विद्वानो ने तिब्बती भाषा से अनूदित करके प्रस्तुत किया है। ऐसी स्थिति मे उनकी भाषा के आधार पर कोई भी निष्कर्ष निकालना भ्रामक सिद्ध होगा। इस तथ्य को स्वय राहुल साकृत्यायन ने भी 'दोहा-कोश' की भूमिका मे सरहपाद के काव्य की विवेचना करते हुए स्पष्ट रूप मे स्वीकार किया है। यहाँ उनकी तत्सम्बन्धी कुछ उक्तियाँ प्रस्तुत हैं—

(क) "सरहपाद की अपभ्रंश कृतियाँ 'दोहा-कोश' या 'दोहागीत' के नाम

१. 'दोहा-कोश', स० राहुल साकृत्यायन, प्रथम सस्करण (१९५७), पृष्ठ सख्या ८।

से प्रसिद्ध है।"[१]

(ख) "सरहपाद के समय मे पहुँचते-पहुँचते सस्कृत और प्राकृत दोनों साहित्यो का मध्याह्न बीत चुका था।······सरहपाद पहिले सस्कृत के महापडित थे······पर उन्होने शिष्ट साहित्य की जगह लोक-साहित्य का अनुसरण करना पसन्द किया।"[२]

(ग) "उनकी कविता मे शास्त्र-सम्मत गुणो का अभाव नही है। उनके 'दोहा-कोश' एव 'चर्यागीति' के तो एक-एक पद मे उपमाएँ भरी पडी हैं। अफसोस है कि सरहपाद की इन अनमोल कृति को अभी मूल भाषा मे नही पाया गया और उसके तिब्बती अनुवाद से ही हमे सतोष करना पडेगा।"[३]

(घ) "सरहपाद आज की भाषा मे अन्नार्मल प्रतिभा के धनी थे।······शायद उन्होने स्वय इन पदो का लेखन ही नही किया। यह काम साथ रहने वाले सरह" के भक्तो ने किया। यही कारण है जो 'दोहा-कोश' के छन्दो मे क्रम और सख्या मे इतना अन्तर मिलता है।"[४]

(ङ) "आठ सौ से कुछ ऊपर दोहो के मूल-रूप मे आये बिना हम उनकी कविता का पूरा मूल्याकन नही कर सकते।"[५]

उपर्युक्त उक्तियाँ तो सरह के आधारभूत ग्रन्थ 'दोहा-कोश' के बारे मे है, किन्तु उनकी कुछ अन्य कृतियो की भी चर्चा की जाती है, जो सबकी सब तिब्बती (भोट) भाषा से राहुल साकृत्यायन द्वारा हिन्दी मे अनूदित हैं। स्वयं साकृत्यायन जी के शब्दों मे—"युगप्रवर्तक पुरुष की एक ही कृति को हिन्दी-भाषी पाठको के सामने रखकर सतोष कर लेना मैंने अच्छा नही समझा। इसलिए उनके जो अन्य ग्रन्थ तिब्बती (भोट) भाषा मे अनुवाद के रूप मे मौजूद हैं उनको भी हिन्दी मे ला देने की मैंने कोशिश की है।"[६]

सरहपाद के नाम पर कुछ 'चर्या-गीत' भी मिलते है। उनके सम्बन्ध मे भी साकृत्यायन ने एक ओर तो उनमे निहित विचारो के आधार पर उन्हे अग्राह्य माना है तो दूसरी ओर उनकी भाषा को भी बहुत परवर्ती स्वीकार किया है।

(क) "सरह वज्रयानी चर्याओं के प्रवर्त्तक थे, यह कहना मुश्किल है। उन्होने अपने 'दोहाकोश-गीति' के आरम्भ मे ही इस तरह के अनुष्ठानो और

१. दोहा-कोश, प्रथम सस्करण, पृष्ठ सख्या १८।
२ वही, पृष्ठ सख्या २२।
३. वही, पृष्ठ सख्या २२।
४. वही, पृष्ठ सख्या २३।
५ वही, पृष्ठ सख्या २४।
६. वही, पृष्ठ सख्या ६६।

विश्वासो का खडन किया है।·· ····· यदि वे स्वय चर्याओ के प्रवर्त्तक या समर्थक होते तो यह वदतोव्याघात होता।"[1]

(ख) "चर्या-पदो के पुराने पाठ के लिए हम अधिक अच्छी स्थिति मे नही है। नेपाल या भारत की जो प्रतियाँ मिली हैं वे उस समय की हैं जबकि भूत-काल का 'इल' प्रत्यय प्रचलित हो चुका था। सरहपाद से ५-६ शताब्दियो वाद उनके गीतो मे भारी परिवर्तन हो जाना स्वाभाविक है।"[2]

अस्तु, साकृत्यायन जी की मान्यता के अनुसार प्रथम तो चर्यागीत सरहपाद द्वारा रचित हैं ही नही और यदि है भी तो उनका वर्तमान रूप सरहपाद से ५-६ शताव्दियो के वाद का अर्थात् तेरहवी-चौदहवी शती का है। ऐसी स्थिति मे यदि उनकी भाषा शालिभद्र सूरि की भाषा से भी अधिक विकसित सिद्ध हो जाय तो आश्चर्य नही।

साकृत्यायन जी को 'दोहाकोश-गीति' की एक ऐसी प्रति भी मिली थी जो ताल-पत्र पर अकित थी। इसके मिलने की कहानी भी वडी विचित्र है। तिव्वत मे यह अध-विश्वास प्रचलित रहा है कि यदि 'मरणोन्मुख व्यक्ति के मुँह मे तालपोथी का धुला एक वूद जल पड जाय तो उसके पाप धुल जाने मे सदेह नही ··· अधिक चढावा चढाने वाले भक्त को पुजारी ताल-पोथी का टुकडा काटकर प्रसाद के रूप मे दे दिया करता था, और इसी उद्देश्य से नाना पुस्तको के पत्रो का यह वण्डल उसके पास था।'[3] कहना न होगा कि इस रूप मे उपलव्ध इस ताल-पोथी का शोध एव इतिहास की दृष्टि से विशेष महत्त्व नही है, क्योकि उन पुजारियो एव उनके भक्तो के लिए इस वात का कोई महत्त्व ही नही था कि उस ताल-पोथी मे क्या लिखा है। ऐसी स्थिति मे स्वाभाविक है कि विना विषय-वस्तु को महत्त्व दिये ऐसी तालपोथियाँ पिछली शताव्दियो मे वरावर तैयार होती रही होगी, जिनमे से कुछ साकृत्यायन जी के हाथ लगी थी। यह भी उल्लेखनीय है कि इस तालपोथी के प्रतिलिपिकाल के वारे मे कुछ भी पता नही चलता। वैसे यह कुटिला-लिपि मे लिखी हुई है तथा इस लिपि का प्रचार साकृत्यायन जी के अनुसार दसवी-ग्याहरवी सदी मे हुआ था। किन्तु कुटिला लिपि के ज्ञाता उसके वाद मे भी रहे है, अत यह आवश्यक नही कि यह तालपोथी दसवी-ग्यारहवी सदी की ही हो।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि 'दोहाकोश-गीति' की एक प्रति महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री को भी प्राप्त हुई थी, किन्तु उसका भी प्रतिलिपिकाल निश्चित

१. दोहा-कोश, प्रथम सस्करण, पृष्ठ सख्या ६६।
२. वही, पृष्ठ सख्या ३५७।
३. वही, पृष्ठ सख्या ६७।

नही है। इस प्रति मे केवल ५० दोहे ही थे जबकि साकृत्यायन जी वाली प्रति मे यह सख्या १६४ तक पहुँच गयी है। दोनों के उपलब्धि-काल मे लगभग ४० वर्षों का अन्तर है, किन्तु इतने थोडे समय मे ही इस रचना का आकार-प्रकार कितना वढ गया था—यह इस वात का प्रमाण है कि इसमे किस तेजी से प्रक्षेप होता रहा है। वैसे साकृत्यायन जी अपनी प्रति को इसलिए अधिक महत्त्वपूर्ण मानते थे, क्योकि उसमे शास्त्री जी वाली प्रति से अधिक दोहे हैं किन्तु आधुनिक पाठ-विज्ञान के अनुसार यह तथ्य इसमे प्रक्षिप्तता की अधिकता को ही प्रमाणित करता है।

वस्तुत सरहपाद ही नही, अन्य सिद्धो के भी तथाकथित ग्रन्थ अपने मूल रूप मे उपलब्ध नही हैं। उनमे से अधिकाश तिब्वती से अनूदित है तथा जो अनूदित नही भी हैं वे वहुत कुछ प्रक्षिप्त एव परिवर्तित रूप मे हैं। अत विचार-धारा की दृष्टि से भले ही वे मूल विचार-धारा का प्रतिनिधित्व थोडी-वहुत मात्रा मे करते हो, किन्तु जहाँ तक भाषा का प्रश्न है, वे मूल रूप से बहुत दूर हैं। सभव है उनकी रचनाओ मे कही-कही मूल अश भी घुले-मिले हो किन्तु उन्हे अलग करना वहुत कठिन कार्य है। इस मिश्रित रूप के कारण ही उनकी भाषा कही शुद्ध अपभ्र श दिखाई पडती है तो कही तेरहवी-चौदहवी शती की हिन्दी अथवा आधुनिक उडिया के अनुरूप प्रतीत होती है जिसके कारण विद्वानो ने उनकी भाषा के सम्वन्ध मे परस्पर-विरोधी मत व्यक्त किये है। उदाहरण के लिए एक ओर आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी की मान्यता है—"वस्तुत इन दोहो और पदो की भाषा भी अपभ्र श ही है पर कुछ पूर्वी प्रयोग इनमे अवश्य है। दोहो की भाषा मे तो परिनिष्ठत अपभ्र श की मात्रा अधिक है"[1] तो दूसरी ओर उडिया के सुप्रसिद्ध विद्वान् राय वहादुर आर्त्तवल्लभ महन्ती उसे शुद्ध आधुनिक उडिया मानते हुए लिखते हैं—"इन गानो की भाषा के साथ आधुनिक उत्कल का जो साम्य है वैसा अन्य किसी प्रान्त की भाषा के साथ नही। हजारो वर्ष के वाद भी भाषा मे पार्थक्य कम ही दीख पडता है।"[2]

अस्तु, उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि भाषा की दृष्टि से सिद्ध-साहित्य के आधार पर कोई भी निर्णय कर लेना निरर्थक एव भ्रामक है। वस्तुत उनके ग्रन्थ मूल रूप मे उपलब्ध ही नही हैं। जो उपलब्ध है वे प्रक्षिप्त, परिवर्तित एव परवर्ती हैं, उनमे समय-समय पर प्रक्षेप एव परिवर्तन होता रहा है, इसीलिए उनमे दसवी-ग्यारहवी शती से लेकर अठारहवी-उन्नीसवी शती तक की

१. हिन्दी साहित्य उद्भव और विकास (१६५२), पृष्ठ सख्या ५।

२. चतुर्दश भाषा-निवन्धावली (प्रथम सस्करण), पृष्ठ सख्या ७०।

भाषा के विभिन्न नमूने उपलब्ध होते है। ऐसी स्थिति मे उन्हे हिन्दी या आधुनिक उडिया का कवि वताना एक नयी भ्रान्ति को जन्म देना है।

डॉ० दिनेश ने सरहपाद को हिन्दी का प्रथम कवि मानने के पक्ष मे दूसरा तर्क यह दिया है कि चेतना, भावना और विचारधारा की दृष्टि से वे शालिभद्र सूरि की अपेक्षा हिन्दी कवियो के अधिक निकट हैं। उनके शब्दो मे—"उनकी (सरहपाद की) भाव-धारा सिद्धो और नाथो से होती हुई कबीर तक अपनी परम्परा वनाती है जबकि शालिभद्र सूरि की देन इस सदर्भ मे नगण्य है।"[1] इसके सम्वन्ध मे हमारा निवेदन है कि एक तो यह कहना ही अनुचित है कि शालिभद्र सूरि की इस दृष्टि से कोई देन नही है। वस्तुत शालिभद्र सूरि हिन्दी की रास-परम्परा के प्रवर्त्तक एव सस्थापक है जो आगे चलकर तीन-चार शताब्दियो तक अखड रूप मे प्रवाहित होती हुई अपने युग की चेतना एव भावधारा का प्रतिनिधित्व करती रही है। दूसरे, केवल चेतना, भावना और विचार-धारा के साम्य या नैकट्य के आधार पर ही किसी अन्य भाषा के कवि को हिन्दी का कवि नही माना जा सकता। हिन्दी के विद्यापति का सस्कृत के जयदेव से, विहारी का अमरु एव गोवद्र्धन से, कृष्ण-भक्त कवियो का भागवतकार से भावना एव विचार की दृष्टि से गहरा सम्बन्ध स्थापित किया जा सकता है—इतना ही नही अनेक विदेशी कवियो से भी स्वदेशी कवियो का नैकट्य इस दृष्टि से माना जा सकता है, जैसे सुमित्रानन्दन पत का अग्रेजी के वर्ड्सवर्थ या शैली से, किन्तु इसीलिए हम इन हिन्दीतर कवियो को हिन्दी-साहित्य के इतिहास मे स्थान नही दे सकते। हिन्दी काव्य की अनेक परम्पराएँ सस्कृत, प्राकृत, अपभ्र श आदि के काव्य से प्रभावित एव विकसित हैं, किन्तु इसी से इनका भाषागत पार्थक्य लुप्त नही हो जाता। अत भाव-धारा के साम्य के आधार पर भी अपभ्र श के कवि सरहपाद को हिन्दी का प्रथम कवि नही माना जा सकता।

इसी वर्ष (१९७३ ई०) प्रकाशित एक अन्य कृति—'हिन्दी-साहित्य का उद्भवकाल' के लेखक डॉ० वासुदेव सिंह ने भी हमारे मत का खडन करते हुए लिखा है—"हमारे कहने का तात्पर्य यह है कि जिस प्रकार 'भरतेश्वर वाहुवली रास' मे प्रारम्भिक हिन्दी के नमूने देखकर गुप्त जी ने उसे हिन्दी की प्रथम रचना और शालिभद्र को हिन्दी का प्रथम कवि स्वीकार किया है, उसी आधार पर योगीन्द्र मुनि को हिन्दी का प्रथम कवि क्यो न माना जाय ? 'भरतेश्वर वाहुवली रास' के पूर्ववर्ती तीन महत्त्वपूर्ण रास-ग्रन्थ और मिलते हैं—उपदेश रसायन रास (जिनदत्त सूरि), सदेश रासक (अब्दुल रहमान)

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास—सपादक डॉ० नगेन्द्र, प्रथम सस्करण, पृष्ठ सख्या ३३।

और मुंज रासो। इनका रचना-काल क्रमश: सं० १२०० (सन् ११४३), ११वी शताब्दी और सं० ११५० (सन् १०९३) है। इन रास या रासो ग्रन्थों के अतिरिक्त रोडाकृत 'राउरवेल' (११ वी शती), मुनि रामसिंह कृत 'पाहुड़ दोहा' (११वीं शती) तथा पं० दामोदर विरचित 'उक्ति-व्यक्ति-प्रकरण' (१२वी शती) भी पूर्ववर्ती रचनाएँ है।"[1] इस प्रकार इन्होने क्रमश: इन सात कवियो—योगीन्द्र मुनि, जिनदत्त सूरि, अब्दुर्रहमान, मुंज रासो के रचयिता, रोडा, मुनि रामसिंह और पं० दामोदर—को शालिभद्र का पूर्ववर्ती बताया है। यदि ये सचमुच शालिभद्र से पूर्ववर्ती हिन्दी कवि सिद्ध हो जाते हैं तो हमें इस मत मे सशोधन करने मे कोई आपत्ति नही है। अत इस दृष्टि से इन सभी पर क्रमश: विचार किया जाता है।

इन कवियों मे क्रमानुसार सर्वप्रथम योगीन्द्र मुनि आते हैं जिनकी दो रचनाएँ—'परमात्मप्रकाश' और 'योगसार'—उपलब्ध हैं। इनके जीवन-काल या रचना-काल के बारे मे विद्वानो मे परस्पर गहरा मतभेद है। जैसा कि स्वयं डॉ० वासुदेवसिंह ने इस रचना का परिचय देते हुए स्वीकार किया है कि श्री मधुसूदन मोदी इन्हे दसवी शती का कवि मानते हैं तो श्री कामताप्रसाद जैन ने बारहवी शताब्दी का माना है।[2] आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी उन्हें आठवी-नवी शती मे स्थान देते हैं तो राहुल साकृत्यायन ११वीं शती मे। विभिन्न मतो पर विचार करते हुए डा० रामसिंह तोमर ने यह निष्कर्ष प्रस्तुत किया है कि निश्चित प्रमाणों के अभाव मे इन्हे हेमचन्द्र के पूर्व का कवि माना जा सकता है। इस प्रकार योगीन्द्र का रचना-काल अनिश्चित है। साथ ही यह भी उल्लेखनीय है कि भाषा की दृष्टि से ये अपभ्रंश के कवि सिद्ध होते है न कि हिन्दी के। डॉ० हरिवंश कोचड, डॉ० रामसिंह तोमर, डॉ० नामवरसिंह प्रभृति शोध-कर्त्ताओ ने इनकी रचनाओ की भाषा को अपभ्रंश ही माना है। उदाहरण के लिए इनके दो दोहे प्रस्तुत हैं[3]—

जो जाया झाणग्गिए, कम्म कलक डहेवि ;
णिच्च णिरजण-णाणमय, ते परमप्प णवेवि ॥
देउल देउ विसत्थु गुरु तिप्थु वि बेउवि कब्बु।
बच्छु जु दीसे कुसुमिय इंधणु होसइ सव्बु।

निश्चय ही उपर्युक्त दोहो की भाषा हिन्दी की अपेक्षा अपभ्रंश के ही अधिक निकट हैं। इनकी तुलना मे शालिभद्र सूरि की भाषा को रखकर देखा

१ हिन्दा-साहित्य का उद्भव-काल डॉ० वासुदेव सिंह पृष्ठ सख्या ४४-४५।
२. वही, पृष्ठ सख्या १२२।
३. हिन्दी के विकास मे अपभ्रंश का योग, पृष्ठ सख्या २९६।

जाय तो यह स्पष्ट होगा कि दोनो मे से कौन हिन्दी कवि कहलाने का अधि-कारी है —

तु बाहुबलि जपइ कहिं वयण म काचु
भरहेसर भय कपइ ज जगतु सांचु ।
× × ×
दूत भणई एहु भाई पुन्निहिं पामीजइ ॥
पई लागीजइ भाई, अम्ह कहीउ कीजइ ॥

वस्तुत योगीन्द्र हिन्दी के कवि न होकर अपभ्र श के कवि है। अत उन्हे हिन्दी के कवि के रूप मे स्वीकार किये जाने का प्रश्न ही नही उठता। इसके अनन्तर तीन महत्त्वपूर्ण रासग्रन्थ—'उपदेश-रसायन-रास', 'सन्देशरासक-और मुंज रासो'—आते हैं। इनकी चर्चा करते हुए डॉ० वासुदेव सिंह ने पाद टिप्पणी मे डॉ० माताप्रसाद गुप्त के 'रासो-साहित्य-विमर्श' का सदर्भ दिया है जिससे यह भ्रान्ति उत्पन्न होती है कि वे भी (डॉ० गुप्त) इन्हे हिन्दी काव्य ही मानते हैं किन्तु वास्तविकता इसके विपरीत है। डॉ० माताप्रसाद गुप्त ने इन ग्रन्थो का परिचय देते हुए जो निष्कर्ष दिये है, वे इस प्रकार है—

(क) 'उपदेश रसायन रास'—"रचना तिथि ज्ञात नही है। · इसलिए इस रचना का समय भी स० १२०० के आसपास या कुछ बाद मे माना जा सकता है। रचना अपभ्र श की है।[1]"

(ख) सदेशरासक—"रचना तिथि ज्ञात नही है। · · ·इसकी भाषा अप-भ्र श है।"[2]

(ग) मुंजरासो—"इस नाम की अभी तक कोई रचना नही मिली। किन्तु हेमचन्द्र के "प्राकृत् व्याकरण"· ·· आदि मे मुंज विषयक किसी रचना के लग-भग बीस छन्द मिलते हैं। · · इसका रचयिता अज्ञात है। रचना-काल भी निश्चित नहा है।"[3]

अस्तु, डॉ० माताप्रसाद गुप्त के अनुसार तो उपर्युक्त तीनो रचनाएँ एक तो अपभ्र श मे रचित हैं तथा दूसरे इनका रचना-काल निश्चित नही है। इस तथ्य की पुष्टि अन्य विद्वानो ने भी की है। 'उपदेग-रसायन' का परिचय देते हुए डा० दशरथ शर्मा एव डा० दशरथ ओझा ने उसे अपभ्र श की रचना माना है। 'सदेश-रासक' की भाषा को कुछ विद्वानो ने परिनिष्ठित अपभ्र श से आगे

१. रासो-साहित्य-विमर्श डॉ० माताप्रसाद गुप्त, प्रथम सस्करण, पृष्ठ सख्या ८।
२ वही, पृष्ठ सख्या ११-१२।
३ वही, पृष्ठ सख्या १२।

बढ़ी हुई माना है किन्तु वह हिन्दी नही है। डॉ० उदयनारायण तिवारी ने इसकी भाषा का सूक्ष्म विश्लेषण करने के अनन्तर अपना निर्णय देते हुए लिखा है—"ध्वनि-विकास, एव शव्द-रूपो की दृष्टि से सदेश-रासक की भाषा साहित्यिक अपभ्र श से बहुत आगे नही बढी है।"[1] डॉ० नामवर सिंह ने भी इसकी भाषा को साहित्यिक अपभ्र श मानते हुए स्पष्ट शव्दो मे घोषणा की है कि यह समझना भ्रान्ति है कि यह ग्राम्य अपभ्र श मे रचित है।"[2] वस्तुत 'सदेश-रासक की भाषा मे भले ही कुछ प्रवृत्तियाँ नयी हो, किन्तु सामान्यत यह साहित्यिक अपभ्र श की ही रचना है। यहाँ इसकी कुछ पक्तियाँ द्रष्टव्य है—

पडिउट्ठिय सविलक्ख-सलज्जिर सभसिया।
तउ सय सच्छ णियसण मुद्धहिव बलसिया।
त सवरि अणुसरिय पहिय पावयणमणा
फुडवि णित्त कुप्पास विलग्गिय दर सिहणा

'मुंज रासो' का तो अस्तित्व ही नही है। केवल मुज सम्वन्धी वीस छुटपुट दोहे उपलब्ध है, जिन्हे काव्य-ग्रन्थ की सज्ञा नही दी जा सकती, न ही इसके रचयिता और रचना-काल का पता चलता है। कुछ लोग इन्हे मुँज-प्रणीत मान कर इनका रचना-काल ११वी १२वी शती अनुमित करते हैं किन्तु स्वयं डॉ० वासुदेव सिंह के ही शव्दो मे—"मुज रासो के कितने दोहे मुंज-प्रणीत है और कितने परवर्ती, इसका निश्चय कर पाना कठिन हो गया है।"[3] फिर जो वीस दोहे मिलते भी हैं उनकी भाषा हिन्दी न होकर अपभ्र श है। यहाँ उदाहरण प्रस्तुत है—

सउचितहरिसट्टी मम्मणह वत्तीस डीहिया।
हियझि ते नर दड्ढ सीझे जे बीससह थिया॥[4]

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि पूर्वोक्त तीनो रासो-काव्यो मे से एक का तो अस्तित्व ही नही है शेष दो भी अपभ्र श मे रचित हैं। ऐसी स्थिति मे उनके रचयिताओ को हिन्दी के प्रथम कवि के रूप मे स्वीकार नही किया जा सकता। किन्तु यहाँ हमे एक अन्य दृष्टि से भी विचार करना है—विशेषत 'उपदेश-रसायन-रास' के सम्बन्ध मे। इस ग्रन्थ मे जैन-धर्म के सिद्धान्तो का परिचय

१. हिन्दी भाषा का उद्गम और विकास, द्वितीय सस्करण, पृष्ठ सख्या १४७।
२. हिन्दी के विकास मे अपभ्र श का योग, चतुर्थ सस्करण, पृष्ठ सख्या २३९।
३. हिन्दी साहित्य का उद्भव काल, प्रथम सरकरण पृष्ठ २०६।
४. वही, पृष्ठ सख्या २७८।

काव्यत्व शून्य शुष्क शैली मे दिया गया है तथा इसकी भाषा भी अपेक्षाकृत अप-भ्रंश के निकट है। इन सब कारणो से हमने इसे हिन्दी काव्य मे स्थान देना उचित नही समझा किन्तु इस पर डॉ० वासुदेवसिंह इतने अधिक कुपित एव क्षुब्ध हुए है कि उन्होने हमारे सारे प्रयास को ही सिद्धान्त-विरुद्ध एव अवैज्ञानिक घोषित कर दिया है।[1] इस प्रसग मे उनका सबसे बडा आक्षेप यह है कि जबकि हमने जैन सम्प्रदाय सम्बन्धी अन्य रचनाओ (भरतेश्वर बाहुबली रास आदि) को ग्रहण किया है तो 'उपदेश रसायनरास' को क्यो नही लिया ? इसके उत्तर मे हमारा निवेदन है कि 'साम्प्रदायिक रचना' और 'साम्प्रदायिक काव्य' मे अन्तर है। जहाँ सिद्धान्तो का शुष्क वर्णन हो वह 'रचना' मात्र है जबकि काव्यमय शैली मे रचित रचना को 'काव्य' मे स्थान दिया जाता है। 'उपदेश रसायन रास' के बारे मे डॉ० वासुदेव सिंह स्वय भी इसी निर्णय पर पहुँचे है —"इन शुष्क तथा नीरस उपदेशो मे कवित्व का सर्वथा अभाव है।"[2] शायद ये पक्तियाँ लिखते समय डॉ० सिंह भूल गये कि इसी प्रकार के निर्णय के लिए वे अपनी इसी पुस्तक मे पीछे किसी अन्य लेखक की भारी भर्त्सना कर चुके हैं।

अस्तु, भर्त्सना के लिये भर्त्सना करना और बात है किन्तु वास्तविकता यह है कि 'उपदेश रसायन-रास' किसी भी दृष्टि से हिन्दी काव्य मे स्थान पाने के योग्य नही है और जैसा पीछे कहा जा चुका है—'मुंज रासो' और 'सदेश-रासक' पर भी यही बात लागू होती है। शेष रचनाओ मे से रोडा कृत 'राउल-वेल' एक शिलालेख है—जिसमे अवधी, मराठी, पश्चिमी हिन्दी-पजाबी, बगला, मालवी आदि भाषाओ मे विभिन्न प्रदेशो की नायिकाओ को नख-शिख वर्णित किया गया है, अत इससे तद्‌युगीन लोक भाषाओ की जानकारी मे तो सहायता मिलती है किन्तु इसे हिन्दी की काव्य कृति के रूप मे स्वीकार नही किया जा सकता। इसी प्रकार 'उक्तिव्यक्तिप्रकरण' एक व्याकरण-ग्रन्थ है जिससे तद्‌युगीन लोक भाषा के स्वरूप पर प्रकाश पडता है किन्तु इसे काव्य-ग्रथ कहना अनुचित होगा। मुनि रामसिंह रचित 'दोहा-पाहुड' को डॉ० हरिवश कोछड, डॉ० राम सिंह तोमर, डॉ० नामवर सिंह प्रभृति विद्वानो ने अपभ्र श-काव्य मे स्थान दिया है। वस्तुत इसकी भाषा अपभ्र श से अग्रसरित होती हुई भी हिन्दी से दूर है, उदाहरणार्थ कुछ पक्तिया द्रष्टव्य है—

अक्खरडेहि जि गव्विया, कारणु ते ण मुणति।
बस विहत्था डीम जिम, परहत्थड़ा घुणति॥

१. वही, पृष्ठ सख्या ४५।
२ वही, पृष्ठ सख्या ११६।

इसकी भाषा मे कही-कही अपभ्रंश-परवर्ती प्रवृत्तियाँ दृष्टिगोचर होती है जिसका कारण कदाचित् यह है कि इसकी कोई भी प्रति सत्रहवी शती से पहले की नही मिलती, अत सम्भव है कि प्रतिलिपिकारो के द्वारा मूल मे थोडा-बहुत परिवर्तन हो गया हो। इसके अतिरिक्त इसका रचना-काल भी सदिग्ध है। स्वय डॉ० वासुदेव सिह के शब्दो मे—'दोहा पाहुड' का रचनाकाल भी अनिश्चित है। डॉ० हीरालाल जैन को जो दो हस्तलिखित प्रतियाँ मिली हैं उनमे से एक का लिपिकाल स० १७८४ है। मुझे जयपुर से प्राप्त प्रति का लिपि काल स० १७११ है। अत 'दोहा-पाहुड' इसके पूर्व ही लिखा गया होगा।"[1] आगे चलकर डॉ० सिह ने विभिन्न अनुमानो के आधार पर इसका रचना काल बारहवी शती अनुमित किया है जबकि 'भरतेश्वर बाहुबली रास' का रचना-काल निश्चित रूप से सन् ११८४ ई० है। ऐसी स्थिति मे इसके रचयिता मुनि रामसिह को शालिभद्र सूरि से पहले स्थान कैसे दिया जा सकता है।

इस प्रकार हम देखते है डॉ० सिह द्वारा उल्लिखित सातो रचनाओ मे से कोई भी ऐसी नही है जिसे हिन्दी-काव्य-परम्परा मे 'भरतेश्वर बाहुबली रास' से पहले स्थान दिया जा सके। वस्तुत इस प्रसग मे उन्होने जिन रचनाओ का जोरदार समर्थन किया है, आगे चलकर उन्ही की उक्तियो से उनका खडन हो जाता है।

अन्त मे हम इसी निष्कर्ष पर पहुँचते है कि यदि हम अपभ्रश या हिन्दी-तर रचनाओ को या हिन्दी की असाहित्यिक (व्याकरण या नीति-उपदेश सम्बन्धी, रचनाओ) को अथवा अप्रामाणिक व सदिग्ध रचनाओ को छोडकर हिन्दी भाषा के उद्भव-काल को ध्यान मे रखते हुए विचार करें तो निश्चित ही 'भरतेश्वर बाहुबली रास' ही हिन्दी की प्रथम प्रामाणिक काव्य-कृति तथा उसके रचयिता 'शालिभद्र सूरि' हिन्दी के प्रथम कवि सिद्ध होते हैं। रोडाकृत 'राउलवेल' तथा दामोदर के 'उक्ति-व्यक्ति-प्रकरण' आदि से इस तथ्य की पुष्टि भली भाँति हो जाती है कि हिन्दी भाषा का उद्भव लगभग ईसा की दसवी शती के अन्त मे हुआ है तथा किसी भाषा को साहित्य के द्वार तक पहुँचने मे एक दो शताब्दियो का समय अवश्य लग जाता है, अत इस दृष्टि से भी हिन्दी-साहित्य का आविर्भाव-काल 'भरतेश्वर बाहुबली रास' के रचना-काल अर्थात् सन् ११८४ ई० से मानना सगत सिद्ध होता है।

हमारे उपर्युक्त निष्कर्ष की पुष्टि कतिपय अन्य साक्ष्यो से भी होती है। एक तो तद्युगीन राजनीतिक एव सास्कृतिक पृष्ठभूमि की दृष्टि से विचार किया जाय तो यह स्पष्ट होगा कि बारहवी-तेरहवी शती मे समूचे उत्तर भारत मे

१ हिन्दी साहित्य का उद्भव-काल, पृष्ठ सख्या १२८।

गुर्जर-प्रदेश ही एक ऐमा भूभाग था जो स्वतन्त्रता, शक्ति एव सस्कृति का केन्द्र था। इसलिए उत्तरी भारत की अन्य आधुनिक भाषाओ में से पश्चिमी हिन्दी अर्थात् पश्चिमी राजस्थानी का, जो कि तद्युगीन गुर्जर प्रदेश की लोक भापा थी सर्वप्रथम उदय एव विकास हुआ इस तथ्य को स्वीकार करते हुए डॉ० नामवर सिंह ने प्रतिपादित किया है कि हिन्दी की विभिन्न उपभाषाओ या वोलियो मे मध्यप्रदेश का वोलियो (अवधी और व्रज) की अपेक्षा राजस्थानी और मैथिली का उदय एव विकास पहले हुआ। इसका कारण स्पष्ट करते हुए उन्होने लिखा है—गुजरात के सोलकी, देवगिरि के यादव और वगाल के पाल राजाओ ने अपने-अपने भूखडो मे स्वतन्त्र शासन स्थापित करने के साथ ही, अनेक लोकप्रिय सास्कृतिक कार्यों द्वारा जातीय इकाइयो को सगठित होने का अवसर प्रदान किया। ··· इसके अतिरिक्त इन प्रदेशो के राजवशो ने सस्कृत की अपेक्षा लोक वोलियो को अधिक प्रश्रय और प्रोत्साहन दिया। इस प्रकार जातीय सगठन ने भापा का उत्थान किया और भापा ने जातीय सगठन का। दोनो ही परस्पर वर्धमान हुए···[१] ऐतिहासिक दृष्टि से राजस्थानी और मैथिली वोलियो का उदय पहले हो गया, इनके वाद अवधी का उदय हुआ।···मैथिली का उदय इतना पहले इसीलिए सभव हो सका, कि मिथिला शासन की स्वतन्त्र इकाई के रूप में एक ही राजवश के अन्तर्गत कई शताब्दियो तक स्थापित रहा। ····· राजस्थानी की स्थिति भी वहुत-कुछ मैथिली जैसी ही है। पश्चिमी राजस्थान वहुत दिनो तक जातीय और प्रशासकीय रूप मे गुजरात से सम्वद्ध रहा, दोनो जातियो और वोलियो का विकास साथ-साथ हुआ।"[२]

अस्तु, तद्युगीन पश्चिमी राजस्थानी जो कि वारहवी-तेरहवी शती के सम्मिलित गुजरात एव पश्चिमी राजस्थान की लोक भाषा थी, हिन्दी की अन्य उपभापाओ से अपेक्षाकृत पहले उदित हुई। दूसरे जिस प्रकार पालि, प्राकृत, अपभ्र श को भी सर्वप्रथम वौद्ध एव जैन कवियो ने ही अपने धर्म प्रचार के लिए साहित्य मे स्थान दिया लगभग उसी प्रकार हिन्दी की उस उपभापा—पश्चिमी राजस्थानी—को भी सर्वप्रथम जैन कवियो ने, जिनमे शालिभद्र सूरि अग्रणी थे, अपने साहित्य मे स्थान दिया। ये तथ्य इस शका का भी निराकरण करते हैं कि हिन्दी की सवसे पहली रचना मध्यवर्ती हिन्दी प्रदेश मे न मिलकर पश्चिमी उत्तर प्रदेश मे क्यो मिलती हैं। भाषा की दृष्टि से विचार किया जाय तो 'भरतेश्वर वाहुवली रास' की भापा 'राउलवेल' मे प्रस्तुत उस अश से वहुत

१. हिन्दी के विकास मे अपभ्र श का योग, चतुर्थ सस्करण, पृष्ठ सख्या १००-१०१।

२ वही, पृष्ठ सख्या १०२।
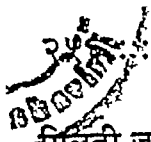
मिलती-जुलती है जिसे विद्वानों ने पश्चिमी राजस्थानी का रूप माना है। यहाँ दोनो के नमूने प्रस्तुत हैं—

एहु कानोड़उ काइ सउं भांखइ।
वेस अम्हाणउं ना जउ देखइ।
आ उंडउ जो राउलु सोहइ।
थइ नउ सो एथु को वकु न मोहइ।
× × ×
पहिरणु फरहरे पर सोहइ।
राउल दोसतु सउ जण मोहइ।
× × ×
जहि घरे अइसी ओलंग पइसइ।
त घरु राउल जइसउँ दीसइ॥

—'राउलवेल' से उद्धृत

'राउलवेल' के इस अंश की विवेचना करते हुए डॉ० नामवर सिंह ने लिखा है—"तृतीय उदाहरण मे 'अम्हाणउँ', 'काईं करेवउ' 'थइ नउ' आदि प्रयोग ऐसे हैं जो पुरानी पश्चिमी राजस्थानी की याद दिलाते हैं। प्रसंगात् यह वही खंड है जिसमे 'खताजणु' अर्थात् क्षत्रिय-जन का उल्लेख हुआ है। इसलिए बहुत संभव है कि इसमे तत्कालीन राजस्थानी बोली का नमूना प्राप्त हो।" हमारे विचार से इसे असदिग्ध रूप से उस समय की लोक प्रचलित पश्चिमी राजस्थानी के उदाहरण के रूप मे स्वीकार किया जा सकता है। अब इसकी तुलना मे 'भरतेश्वर वाहुबली रास' की भाषा के कुछ नमूने रखकर देखे जा सकते हैं—

मति सागर किणि काज चक्क न पुरि परबस करइ।
तइजि अम्हारह राजि, घोरीय घर घरीउ॥ ४५
× × ×
काँइ मरावउ तम्हि इम जीव, पड़सिउ नरकि करँता रीव।१८२
× × ×
पइसइ मालाखाडइ वीर, गिरिवंर पाहिइं सबल शरीर।१८४
× × ×
कीजई ए आज़ पसाउ, छंडि न छंडि न छयल छलो। १९५

वस्तुत दोनो की भाषा मे वहुत कम अन्तर दृष्टिगोचर होता है। 'राउलवेल' का शिलाकन-काल विद्वानो ने ११ वी शती ईस्वी सिद्ध किया है, जबकि भरतेश्वर वाहुवली रास का रचना-काल ११८४ ई० है—इस दृष्टि से दोनो के रचना-काल मे अधिक से अधिक एक शताब्दी का अन्तर सभव है। कहना न होगा कि दोनो की भाषा मे भी इससे अधिक समय का अन्तर दृष्टिगोचर नही होता। अत भाषा की दृष्टि से भी यह रचना-काल की लोकभापा का सही प्रतिनिधित्व करती है।

अन्त मे यह भी उल्लेखनीय है कि डॉ० माताप्रसाद गुप्त, डॉ० दशरथ ओझा, डॉ० हरीश प्रभृति विद्वानो ने तो 'भरतेश्वर वाहुवली रास' को प्रारभिक हिन्दी रास-काव्य के रूप मे स्वीकार किया ही है, साथ ही इस तथ्य का भी कम महत्त्व नही है कि 'भरतेश्वर वाहुवली रास' की रचना के साथ ही जैन रास-काव्य की हिन्दी मे एक अविच्छिन्न परम्परा का सूत्रपात हो जाता है, विभिन्न कवियो द्वारा रचित रास-काव्य—'जीवदया रास' (१२०० ई०), 'चन्दनवाला रास' (१२०० ई०), 'जम्वूस्वामी रास' (१२०९ ई०) 'स्थूलिभद्र रास' (१२०९ ई०), 'रेवतगिरिरास' (१२३१ ई०), 'आवूरास' (१२३२ ई०), 'नेमिनाथ रास' (१२३८ ई०), 'गयसुकुमाल रास' (१२५० ई०), 'कच्छुली रास' (१३०६ ई०)। जिन पद्मसूरि पट्टाभिषेक रास (१३३३ ई०) आदि—इस परम्परा की वे सशक्त कडियाँ है जिनके आधार पर आज भी हिन्दी साहित्य के आदिकाल का भवन टिका हुआ है, अन्यथा सिद्धो, नाथो और चारणो की तथाकथित रचनाओ की अप्रामाणिकता एव सदिग्धता के कारण इसकी आधारभूमि वहुत पहले खोखली सिद्ध हो चुकी है।

अत हमे यह स्वीकार करने मे कोई सकोच नही होना चाहिए कि अब तक ज्ञात एव उपलब्ध रचनाओ मे 'भरतेश्वर वाहुवली रास' ही हिन्दी का प्राचीनतम काव्य है जिसके आधार पर उसके रचयिता मुनि शालिभद्र सूरि को हिन्दी का प्रथम कवि तथा उसके रचनाकाल (सन् ११८४ ई० या सवत १२४१ वि०) को ही हिन्दी साहित्य का वास्तविक आविर्भाव काल माना जाना चाहिए। राजनीतिक, सास्कृतिक एव भाषा-वैज्ञानिक दृष्टि से भी हिन्दी साहित्य का आरभ लगभग इसी समय से मानना तर्कसगत एव समीचीन प्रतीत होता है।

●●